॥ श्री ॥

अष्टावक्रवेदांतग्रंथ

श्रीमद्विश्वेश्वरविरचिता

टीकासंस्कृत·

तापर·

ब्रजभाषाटीकादोहासहित

ताकीशुद्धकरकें·

पंडित श्रीधर शिवलाल

छाप्यो

आपकाज्ञानसागर स्वयंत्रा

लयमें·

मुंबईमध्ये

संवत् १९४३ शक १८०८

श्राव· शु· १५ शनिवार ता· १४ आगष्ट·

स· १८८६


ऋषिमंडळी
ऋषिमंडळी.

अष्टावक्रवेदांतग्रंथस्यानुक्रमणिका.

इति अष्टावक्रवेदांतग्रंथस्यानुक्रमणिकास॰

प्रस्तावना.

प्रथम या ग्रंथको मूलकारण कहतहै. एकसमै मुनि अष्टावक्र शिष्यसमूहकरियुक्तहैं तहां सत्यव्रत नाम शिष्यनै प्रश्नकियो ॥ सत्यव्रतउवाच ॥श्लोक॥ कथंज्ञानमवाप्नोति कथंमुक्तिर्भविष्यति ॥ वैराग्यंच कथंलभ्यं एतत्वंब्रूहिमप्रभो ॥१॥ ऐसो प्रश्न सुनिकै श्रीअनंत आत्मज्ञानआनंदकरि परिपूर्णहै अरु परिपूर्ण कीयेहै बहुतशिष्यनकूं ऐसे परम कारुणिक भगवान् अष्टावक्रमुनि मुमुक्षुजनोंको उद्धार करिवेकी इच्छाहै जिनकी ऐसे मुनि शिष्यप्रति मोक्षउपाय उपदेश करतहैं. अष्टावक्रउवाच ॥ मुक्तिमिच्छसि.या श्लोकतें २१ खंडकरिकै गुरुशिष्य संवाद भयो.सोसब मुमुक्षुजनकै वास्तै आगे कह्योहै.

श्लोक.

नारायणंनमस्कृत्य नरंचैवनरोत्तमम् ॥
देवींसरस्वतींव्यासं ततोजयमुदीरयेत् ॥१॥

छपैछंद.

॥ज्ञानसहित अज आदिरूप नारायणध्यायो ॥
॥ हंसरूपतें विमलज्ञानसनकादिकपायो॥
॥ ज्ञानसहित भगवानदत्तनिजरूपविराजै ॥
॥ अष्टावक्रसुदेशज्ञान जन कादिकछाजैं ॥१॥
॥ जेसदापक्षगोपालकी श्रीधरहियधरचरणरज ॥
॥ देसारवीवेदपुराणकी, ज्ञानहेतमनकपटतज ॥२॥

समाप्त.

श्री

अथअष्टावक्रवेदांत

प्रारंभः

श्रीगणेशायनमः॥ श्रीसत्यव्रतउवाच ॥कथंज्ञानमवा
प्नोतिकथमुक्तिर्भविष्यति॥ वैराग्यंचकथंलभ्यंएतत्त्वंब्रूहि
मेप्रभो॥१॥ यदज्ञानाज्जगज्जातंयद्विज्ञानाद्विलीयते॥तं
नत्वासच्चिदानंदंकुर्वेध्यात्मप्रदीपिकाम्॥२॥ ॥श्रीअ
नंतः इहतावत्आत्मानंदानुभवपरिपूर्णः परिपूर्णीकृता
नेकशिष्यव्रातः परमकारुणिको भगवानष्टावक्रमुनिः सक
लमुमुक्षुजनमुद्दीधीर्षुः शिष्यंप्रतिमोक्षोपायमुपदिशति

श्लोक॥ श्रीअष्टावक्रउवाच॥ मुक्तिमिच्छसिचे
त्तात विषयान्विषवत्त्यज॥ क्षमार्जवदयातोषस
त्यंपीयूषवद्भज॥१॥

टीका- मुक्तिमिति तातेति सानुग्रहसंबोधने हेशिष्य त्वं-
मुक्तिमिच्छसि तर्हिविषवत् विषयं यथात्यज्यते तद्वत् विषया
न् शब्दस्पर्शरूपरसगंधांस्तदाश्रयांश्चत्यज तत्रमुक्तिमाका
र्षीरनर्थहेतुत्वादित्यर्थः एतेन अनर्थनिवृत्तिर्मुक्तेरुपायउ
क्तः अथ परमानंदावाप्तिरूपाया मुक्तेरुपायमाह- क्षमेति
क्षमानाम सर्वसहनं सर्वाधिष्ठानत्वमात्मधर्मः आर्जवंना
म अविद्यारूपकुहकसंबंधाभावः सोप्यात्मधर्मः दया
नाम निरुपाधिकं सर्वहितानुबंधित्वं सोप्यात्मधर्मः तोषो
नाम आत्मसुखं तदप्यात्मस्वरूपम् सत्यंनाम कालत्रया
बाध्यस्वरूपं सोप्यात्मैव एवंविधमात्मस्वरूपं पीयूषवद्भ
ज यथापीयूषममृतमाश्रीयते न तद्वत् क्षमार्जवदयोपेतंस्व

स्वरूपं कालत्रयाबाध्यमात्मतत्वमाश्रयस्वेत्यर्थः परमानं दावाप्तिहेतुत्वादित्यर्थः ॥१॥

भाषाटीका·- श्रीमद्गुरुं नमस्कृत्य संतदासं हरिप्रियम्॥ अष्टावक्रस्यटीकासा क्रियतेभाषयामया ॥१॥ **दोहा॥** प्रथमश्रीगुरुपदवीनवूं, मनवचबुद्धिसुभाय ॥ टीकाअष्टावक्रकी, भाषाकरूंबनाय ॥१॥ श्रीधरजापैगुरुकृपा, सोनिजपावैज्ञान॥ श्लोकश्लोकप्रतिदोहरा, करतयथामतिमान ॥२॥ **टीका·-** हरिजोपरमेश्वर ताहीकों अनन्य भक्तिकरिकै अतिप्यारे ऐसेहैं मेरेश्रीमद्गुरुश्रीसंतदासजी· जिनकेचरणारबिंदकोंनमस्कार करिकै अष्टावक्रनामा गुरु शिष्योपदेशकग्रंथहै ताकी टीकाश्री व्रजभाषाविषैं सुगमप्रकासटीकानाम· मेरीयथामति जैसी बुद्धि तैसी करताहूं· जैसें पक्षी आकासविषैं अपनी पक्षके बलप्रमाण उड़ताहै· परंतु आकास अपार जिसका पारनहीं ले सकतेहैं· तैसेही अपार है अर्थ याग्रंथविषैं· ऐसो अष्टावक्रनाम ताकीटीका भाषा करिकै कहतहूं· प्रथमही अष्टावक्रनाम ऋषि आपके प्रिय ज्ञानपात्र शिष्यकौं उपदेस करतहैं॥ अष्टावक्र उपदेश करतहैंकि हेतात· भोपुत्र जौंलगि हृदयविकारणी जो अविद्यासो पूर्णहै तौंलगि ब्रह्मज्ञान सदाकहतनेहीरहै· परिहृदयमैंज्ञान ठहरायनाहीं जोशुद्ध हृदयकरिए तो बेगही हृदयमें ब्रह्मज्ञान स्थिरहोय· संसारतें निवृत्तहैजिय· तातेंजो तूं मुक्तिमिच्छसि मुक्तिकी वांछाकरिहै तो विषयान्विषवत्यज· शब्द· १ स्पर्श २ रूप ३ रस ४ गंध ५ एजे पंचविषयतिनही विषतें अधिक विषजानिछोडु· विषखाए एकहीजन्ममें मरिए· पंचविषयनीकेखाए जन्ममरणतें कदाचित् नछूटिए

यह हृदय मलीन हे·सो इन पंचविषन करिकें हे तातें एपंच विषय छोडु हे पुत्र एहिपांचविषनमें एक विषकेंही षायेसें· पशु पक्षिजेंसेही मरतुहे·जिनके हृदयमें पंचविष भरेहे सो· जन्ममरणतें कैसे छुवचत नाहीं·हे पुत्र, जेंसे शब्दविषय·कर्ण नामश्रोत्रइंद्रियको धर्महे·जोशब्दविषयमें अतिलोभ करतु· हे सोभी दुःख पावतुहे·दृष्टांत जैंसे कोउ बहुक महावनमें जा· यकर बंसीकी अवाज मधुर मीठी वजानें लगे तब वावंसीकी धुनिसुनकर शब्दविषेमें उन्मत्त हुवोजो कुरंगनाम हरिण·सो याही अवाजकीधुनी पकरके निकट आवत हे·तितनेमेंतो वो हीबहुक अपनेंसस्त्रसें मार अपनो कार्य साधन करतुहे·१ स्पर्शनाम त्वचा इंद्रियकेस्पर्शविषयमें दृष्टांत· हे तात जैंसे कोऊ महावनमें गजनाम हस्तीकों पकरनेहारे·काष्टकी हथनी बनाय चित्रविचित्ररंग लगायकर खाडधरतीमें खोदकर यतनसें हथनीकों धरतुहे·जहां कोऊगजराज आयकर अतिलोभित हो हथनीसें स्पर्श करनें आतुहे तहां पृथ्वीकी खाडमें गिरतुहे· और परवस परतुहे·हेपुत्र स्पर्शविषयमें चित्रकी पूतलीकों देखनेसें भी मरतुहे·प्रत्यक्षमिलनेसें क्यूंनमरे २ रूपनाम· चक्षुइंद्रियके रूपविषयमें दृष्टांत·जैसे कोऊ दीपककी सिखा अति मनोहर बहुत शोभायुक्त ताकों देखि देखि पतंग नाम पक्षी जलजल नाशहोतहे·३ रसनामजीभइंद्रियको रसविषय तामें दृष्टांत·हेपुत्र·जैंसे कोऊ लोहाके कंठक मांहि आमिष लगायके ताकूं सूत्रकी दोरि बांधकर जलमें कंटक पसारनेही· मीनजोनाम मांछली तुरंतही वाकांटेकूं जीभके स्वादनें खाती हे·तबवा मछीके कंठमें वहलोह कंटक फसके मरतुहे वा बहुक को कार्य सिद्धि होतुहे ४ गंधनाम नासा इंद्रियके विषय गंध·

तामेदृष्टांत· हेतात जैसे कोउ सरोवरकी तीरपैं अति मनोहर कमल परिफुल्लितहै पुष्पजाको अति सुगंधित देखकर षट् पदनाम भंवरापक्षी पुष्पकी सुगंधीके लोभसें कमलके पुष्पमैं बैठकर गंधविषयमै तनकी सुधि भूलतहै· तब कमलको पुष्प संकोचकर इकठो होतहै· तब वह भ्रमर पक्षी पुष्पमाहि मरतुहै·५ हेतात यह पंच महाविषय तिनमै एक एक विषके षानेसैं यह व्यवस्था होतुहै· तब जिनके हृदयमें पंचविषय परिपूर्ण भरेहै तिनकू जन्म मरणतै छूटना महा कठिन जानिये· तातें हेशिष्य एपांच विषनके विष नाशकरवेको पांच अमृत सेवन करिवेयोग्य कहताहूं· अरु एपंच वस्तु अमृततें श्रेष्ठजानि दृढ करिसेउ· अमृतपिऐ एकही जन्म षट्ऊर्मी रहित होय· इनपंचामृततें जन्ममरणादिक जेतेक दुषहै तिनिसबनितें रहित होय परमसुष विषे प्राप्तहोय· ते कौन पंच अमृत· क्षमा १ आर्जव २ दया ३ तोष ४ सत्य ५· क्षमाको लक्षण परम दुषनिको देनहारो होय ताहूको कदाचित मनविषे रोष नआनिये· हे पुत्र पंचविषयजेहै ते पंचअमृतमें लीनहोयके अमृतसमान होतेहै· शब्दविषय आकाशको धर्म है ताही भले बुरे शब्दरूपी विषकोश्रोत्रनाम कर्ण इंद्रीतें ग्रहण करिके क्षमारूपीजो महा अमृत ताहीमें लय कीजिये· दृष्टांत जैसे एकसमै दैत्य दानवोंके युद्धतें पराजयनाम हारी भगेजो इंद्रादिक देवता सभमिलके दधिचऋषीके पास आये· अरु बोले हेऋषिराय हमकू तुमारी देही दीजिये· तो देहीमें अस्थीजो हाडहै ताको एकही वज्रनामाआयुध बनायके सब दैत्यनको जीतके राज्य करिहैं· ऐसे प्राणघातिक बचन इंद्रके सुनिके दधिचऋषि अपना क्षमारूपी अमृतविषे लय कीनें· अरु क्षोभ नकरिके देवतानको अपनी देही·

दई· अरुक्रोधनकिया· इति क्षमालक्षण· आर्जवको लक्ष
ण· ज्यों समुद्रविषे जो वस्तुडारिए सो मध्यही समाय कछु·
क्षोभन होय· त्योंही कोऊ अनेक दुषदेकिंवा रूषदेय तेसब·
रूषदुषयाके हृदे समुद्रमें समाय· जोहि कछु छोभन होय २
स्पर्शविषय वायु तत्व को धर्म है ताहि सुख दुख रूपी विषकों
त्वचा नाम चर्म इंद्रीतें ग्रहणकरिके आर्जवनाम महाअमृत
ताहीमें लयकीजिये· दृष्टांत जेसे एकसमय राजा रहुगण·
नाम ज्ञान उपदेस लेनचल्यो तब मार्गविषे राजाकी पालखी·
के कहारथके जबराजाने एकऋषीराय जडभरतनाम ताकौब
हुत पुष्टजाडेदेषके अपनी पालकीकों लगाये तबचालते सम
य ऋषिजडभरत आपके पांवोंमें जीवजंतु बचायके चलतेहैं· ज
बराजाकी पालखी बहुत औंधी सोंधी होनलगी तब राजार·
हुगण क्रोधकरिके कहनलग्यो· हेमिथ्यापुष्ट तूसरीरसे बहु
त दूबरोहै तानें तेरेसें चल्यौ नजाई· ऐसे बचन राजाके सुनके
हृदय समुद्रमें क्षोभन करिके जडभरतजी बोले· कि हेराजान्·
तूसच कहताहै· मै मिथ्यापुष्टहुं कारन पुष्टनाम जाडो होनु· कृष
नाम पतरो होनु· यहधर्मतो देहकोहै· मेरेमें पुष्टपनो मिथ्याहै··
मैतो जाडोपतरो समानहूं· ऐसे बचन सुनतही राजाको ज्ञानभ·
यो· अरु चरनमें गिरके उहांही ज्ञान उपदेश लयो· इति आर्जवल
क्षण· २ दयाको लक्षण· जो कोऊ परम दुषदायकोहै ताहूकोयों
वांछै कियाकों श्रीनारायणजी भली बुद्धि देहै· ज्यों याको भलो
होय· रूप विषय तेजतत्वको धर्महै· चित्रविचित्रादिक विषकों
चक्षुनाम नेत्र इंद्रीते ग्रहण करिके दयानाम महाअमृतमें लय·
कीजिये· दृष्टांत· हिरण्यकश्यपकी स्त्रीकेगर्भमें प्रहलाद हुतो·
तब नारदऋषी उपदेस कीनोकिहे पुत्र श्रीनारायण सर्व व्यापी

है॰ सर्वविभूती ब्रह्ममयी है॰ ऐसो ज्ञान पायके फिरि जन्म हुवे॰ पीछे जलस्थलमें सचराचरमें वोहिरूप देषतु है॰ राजा हिरण्य कश्यपकी आज्ञासे संडामर्क नामा गरु पढाने लग्यो अरु राजनीति बताने लग्यो परि प्रहलादतौ एक ईश्वरविना सर्व मिथ्यामानी॰ तबही राजा बहुत क्रोधकरि खड्ग हाथमें लेकर पुत्रको बोलने लग्यो हे मूर्ख! कहां है तेरो ईश्वर॰ तब प्रहलाद सर्वत्र जगत नारायणरूपी देषके कहतु है तो मे मोमें खड्गमे, खंबमें॰ तब खंभमेते नरसिंहरूप प्रगट्यो॰ जहां प्रहलाद कहन लगे कि हे नारायण सर्वकू भली बुद्धिदे॰ सर्व विश्वपे कृपा कीजिये तामें सबको भलो होय॰ परि प्रहलाद आप दुःख पायके किसी पें दुःखकी वांछा नकरी॰ इति दयालक्षण ३ संतोषको लक्षण॰ समुद्ररूप दुषविषे॰ प्राप्ति अप्राप्ति विषे सदा एक ई रूप मुक्ति आदि है॰ कौनऊ वस्तुको अंगिकार नकरे॰ रसविषय जलतत्वको धर्म है॰ षट्रसादिक विषयनको रसना नाम इंद्रीतें ग्रहण करिके संतोषनाम महा अमृतमें लय कीजिये॰ दृष्टांत जैसे राजा हरिश्चंद्र अपने विभौ पायके सुख नमान्यो अरु स्थान भ्रष्ट होके चांडालगृह चाकरपनो करिके दुख न मान्यो॰ इति संतोष लक्षण ४ सत्यको लक्षण एक ब्रह्म सत्य और सब झूठ॰ तातें सकल इंद्रिनिको अरु मनको सर्वत्रतें विरक्त करि सत्यब्रह्मविषे अनुरक्त कीजे॰ तब ज्ञान हृदयमो ठहराय॰ परमपद पाइये॰ अरु गंध विषय पृथिवी तत्वको धर्म है॰ गंध सुगंधादि विषनको॰ नासा नाम इंद्रीते ग्रहण करिके सत्यनाम महा अमृतमें लय कीजिये॰ दृष्टांत॰ जैसे राजा युधिष्ठिर श्रीकृष्णचंदकौं धामपधारे सुनिकें अरु सत्य एक श्रीकृष्ण॰ मिथ्या सर्वसंसार॰ मानिकें मूकजडवत् होयकें अरु विभव राज्य तृण

समान जानिकै महापथ नाम हिमालयकौं गये हे पुत्र, पंच-
विष पंचामृतमैं लय कीजियै· अरु परम पद पाइये· इति स-
त्यको लक्षण ५ ॥१॥ **दोहा·** हे सुत मुक्ति जु चाहिये
तज विषवत् विषयान् ॥ क्षमार्जव दया तोष सत्य, अमृत जू
भज मान ॥१॥

॥ **संस्कृत प्रारंभः** ॥

ननु पांचभौतिको देह एव आत्मा तथा च भूतानां तद्धर्माणां च
त्यागो न संभावितः नहि पृथिव्यादीनां स्वभावभूतो गंधादिः
कालत्रयेपि त्यज्यत इत्याशंक्य पृथिव्यादिरूपस्त्वं न भवसीत्याह

श्लो॰ नपृथ्वीनजलंनाग्निर्नवायुर्द्यौर्नवाभवान् ॥
एषांसाक्षिणमात्मानंचिद्रूपंविद्धिमुक्तये ॥२॥

टीका· – नपृथ्वीति हे शिष्य· पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशादि-
तद्धर्मरूपस्त्वं न भवसि अतस्त्वमनात्मधर्मान्विषयांस्त्यजे
त्यर्थः नन्वहं गौरः स्थूल इत्यादि प्रतीतेः पांचभौतिको देह
एवात्मा इत्यत आह· एषामिति एषां देहादीनां साक्षिणमेवा-
त्मानं विद्धि साक्षात्कुरु तथा च देहादेः साक्षी आत्मा देहादि
भ्यो भिन्नः यथा घटद्रष्टा घटाद्भिन्न इत्यर्थः नैय्यायिकाभिम
तमात्मानं निराकरोति चिद्रूपमिति आत्मज्ञानस्य फलमाह·
मुक्तय इत्यर्थः ॥२॥

भाषाटीका· – अष्टावक्र कहत हैं कि हे तात यह जो कछु सं-
सार विस्तार देखियत सुनियत है सो सब पंचभूत पृथ्वी १ आ
प २ तेज ३ वायु ४ आकास ५ इनहीको विस्तार है· और क
छू नाहीं तातैं ये सकल झूठे हैं न तो आदि हुते· और न अंत रि
हसी· मानमात्र हुते· यह तो पांचतत्व है· मायातैं· इनको सा
क्षी आत्मा है· इनतैं जुदो है· अरु माया तो अनादि सिद्ध है
काहेतैं बारीक ब्रह्मतैं अतिझीनो है· अचल ब्रह्मतैं अचल

है. निर्लेप ब्रह्मसे संयोगहै. अखंड ब्रह्मतें व्यापकहै ब्रह्मकी सत्तामात्रतें माया अनेक ब्रह्मांड प्रगट करतहै. ताहि मायाके चोवीस तत्व स्वरूप है. माया शब्दहै तथापि तीन दोष आरोपण मायाविषें जानियें. ते दोष कोणते. प्रथम दोष जडत्वपनो १ द्वितीय दोष विकारित्वपनो २ तृतीय दोष गुणत्रय मायानो कारणहै. तातें सृष्टि आदिक कार्य है. कार्यतें कारण कोउ नमान होतुहै. ताको कार्य जडहै. जाको कारणहु जड होय कैसे जानियें. दृष्टांत जैसो जाको बीज है तैसो ताको कडवो तथा मीठो फलहै जैसें ऊष मीठोहै तैसी वाकी सकरभी मीठीहै. तातें हेपुत्र. मायाके कार्य पृथ्वी १ आप २ तेज ३ वायु ४ आकाश ५ इंद्रिय १० अंतःकरण ४ गुणत्रय ३ औरभी सब मायाके तत्व जडहै. ताहीतें ताको कार्य जड वाको कारणभी जड. ताको कारणभी जड है. वाको कार्यभी जड होय. ताहीतें मायाको दोषत्रय जानियतहै. जडत्व १ विकारित्व २ गुणत्रय ३ गुणनाम ३ रजोगुण १ तमोगुण २ सतोगुण ३ तातें गुणांसहित मायागुणमयीहै. दैवीह्येषा गुणमयी मममाया दुरत्यया. इतिभगवत्त वाक्यतें जानियें. माया मेरी दैवी अरु गुनमयीहै. तातें आत्मा मायाके पंचतत्वनितें जुदो है. अविकारीहै सच्चिदानंदस्वरूपहै. आदित्य वर्णहै अज्ञानतें परेहै. जैसें रवि सर्वत्र प्रकास करतहै. तैसें ब्रह्मजो आत्मा सर्वत्रविषें व्यापकहै. अब दूजे अर्थसें जानियतहै. नवाभवान् तूंजो यही देह विषें बुद्धि आनतहै कियह देह औरयह मायाके तत्व औरयह आत्मा एकही है. सो नाही. एषांसाक्षिणं आत्मानं विद्धि. इन पंचभूतनिको साक्षीभूत एक ई अषंडित भेदाभेदरहित जो तूं आत्मा सत्यजान तूंजो मुक्तहोहि

अरु चिद्रूपजो कछू सकल संसार विषै चेतनाहै सो तेरीहीहै देह-इंद्री-प्राण-मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार ए सकल जडहै तो-हीतै चेतन व्हैकरि आपने अर्थविषै प्रवर्ततेहैं कछू मायाके तत्त्वजेहैं ते आत्मा नहोय पचीस तत्व लगि मायाहै अरु छब्बी-सवो साक्षात् चिद्रूपहै सो सास्त्रविषै प्रसिद्धहै पंचतत्व ५ पंचविषय ५ पंचकर्म इंद्रिय ५ पंचज्ञानइंद्रिय ५ अंतःक-रण ४ पचीसवौ एकजीव १ छवीसवौ अखंडानंद एक आ-त्माहै २६ तातैं देह आत्मा नहोय कारण देहतो षडभावना-म षड्विकार युक्तहै तेषट्विकार कौनते देहजन्मै देहमरै देहबंधै देहघटै देहस्फुरै देहविघडै ६ याही प्रकार देह-को शीतउष्ण सुख दुःख मान अपमान ब्रह्म आदिलेकै की-टपतंग पर्यंत सर्वस्थूलदेह तथा सूक्ष्मदेहनको षट्भाव वि-कारहै ताहितैं देहकौ आत्मा नजानिये देहतो मायाकृतहै जैसे सूर्यके तेजतें आगिया कांचतैं अग्नि प्रगट होतहै तैसेही शुद्ध ब्रह्मते मायाकृत देहादिकनविषै चिद्रूप आत्मा भास-तहै अरु माया ब्रह्मके संयोगतै चैतन्यता नाम चेतन माया हो-तहै दृष्टांत जैसे अग्नितै पात्र गर्म होतहै अरु चुंबक नामलो-हचुंबक पाषाण लोहकौं चंचल करतहै जैसे पंगूनाम पांगलो मानुष आंधरे मानुषके कांधऊपर बैठाके चले अरु अपनो अर्थ साधै तैसे ब्रह्महू मायाकूं चेतन करिकै सर्वत्र भासतहै अ-रु एक ज्ञानविषै बहुत ज्ञानकी चेष्टा होतहै बंध मोक्ष स्वर्ग न-र्क पाप पुन्य मूरख पंडित ब्रह्मा आदिलेके कीटपर्यंतज्ञा-नी स्वभाव जुदे जुदेहै परि परमात्मातो एकही ताकौ सोध-नकरिवे योग्य परमहंस मार्ग निरूपण कियोहै जैसे हंसनी-र क्षीरको सोधन करै तैसे देहतैं आत्मा जुदो जानिये एक

तूंही चेतनीरूपहै. तेरैआधार मायाकृत प्रपंचसर्व एहीहै तू इनके आधारी नाही. एसबरूठेजानि. आत्मासत्यजानि. नि:संगव्हैकरि मुक्तहोहि. ॥२॥ दोहा ॥पंचतत्वनहिआतमा, देहनआतमजान॥ सबसाषीचिद्रूपहै नाहिमुक्तिपदमान॥२॥ संस्कृत.

आत्यंतिकी दुःखनिवृत्तिर्मोक्षइतिनैय्यायकाः दुःखप्रागभावस्तु परिपालनं मुक्तिरिति प्राभाकराः आत्महानिर्मुक्तिरिति बौद्धा इत्यादिमतानिनिराकुर्वन्नेवात्मज्ञानात् जीवन्मुक्तिदशामाह॥३॥

श्लो॰ यदिदेहंपृथक्कृत्यचितिविश्राम्यतिष्ठसि॥ अधुनैवसुखीशांतो बंधमुक्तोभविष्यसि॥३॥

टीका. - यदीति हेशिष्य. यदित्वंदेहं पृथक्कृत्य देहादिभ्यो विलक्षणचितिविश्राम्यचिदेकाग्रोभूत्वा तिष्ठसि तर्हि त्वं अधुनैव इदानीं एतावद्दशायामेवसुखी प्राप्तपरमानंदः अतएव शांतः सुप्रसन्नमनाः बंधमुक्तः कर्तृत्व भोक्तृत्वप्रमुखानर्थरहितो भविष्यसीत्यर्थः ॥३॥

भाषाटीका. - यदिदेहंपृथक्कृत्य चितिविश्राम्यतिष्ठसि। जो आत्माकों अकर्ताजानि अरु सदानंदमय अविनाशीजानि एकआत्मा अद्वितीयसत्यजानि. अरु देहादिक समस्त झूठेजानि देहके अर्थनिविषै सदा दौरतहै. जो मनताविषैं वसकरिदेहतें न्यारो व्हैरहहि. चित्तविश्रामविषै आनहिनौं अधुनैव सुखी शांतः अवही याही क्षणजो सुखी अरशांतजो तेरो रूपहै सो होहि अरबंधमुक्तः सर्वबंधनितें अवही छूटही. छूटिवेकों जतन एतनोई कर्तव्यहै. अब करैतो अबही छूटै. अरु जबही करिहै तबही बंधमुक्तोभविष्यसि बंध

ननिर्मुक्त होसी· दृष्टांत· जैसे कर्दम ऋषीकी पत्नी देवहुती
तामैंश्री कपिलदेव प्रगट भये· तब कर्दम ऋषी कपिलभगवा
नकौ पूर्णब्रह्म अवतार जानिकै एकांत समय जायकै नमस्का
र करिकै बोलते भये· अहो आश्चर्य देषो· यासंसार सागरवि-
षैं अपने अपने पातक नाम पापोंसैं परेहै ऐसेजो प्राणी तिन-
पैं देवताभी बहुतकाल सेवेबिना प्रसन्न नहोय· अरु सर्व यो-
गेश्वर आपकोध्यान करतु है· ऐसे हे भगवन् आप अपने वचन-
सत्यकरिवेकौ मेरेग्रहपै कृपाकीनीहै· ज्ञानी पुरुषनके स्तुति
करिवेयोग्यहो आप· सोमैं तुह्मारे सरण प्राप्ति हुवो हुं· अब
आपके स्वरूपकूं हृदयविषै धरिकै सर्वत्यागकै बंध मुक्त-
होय· पृथ्वीविषै विचरूंगो· ऐसै पूंछताहूं ·ऐसे बचन सुनि
कै भगवान् कपिलदेवजी बोलेकि हे ऋषी, मेरेबचन सत्यक
रनेकूं देह धारण कीनी जानि अरु षुसीसैं जाऊ· परंतु मोक्षा
र्थ मेरेकूं भजो· अरु मैभी मेरी माता देवहुती कौ ज्ञान उपदे
स करौंगो· तातैं संसार सागरतैं मोक्ष होयगी· ऐसै कर्दम-
ऋषीकौ बनमैंगये पीछै· देवहुती ब्रह्माजीकौ वरदान यादक
रिकै अपनो पुत्र कपिलदेवजी ता प्रति बोलतीहै· हे भूमन्-
पंचविषयादिकनकी अभिलाषातें मोकूं बहुत खेदहै· ता
तैं अज्ञानविषै परीहूं· तातै आज मेरेकूं ज्ञानरूपीनेत्र मिले
हे देव यह मेरो· अरु यह तेरो· ऐसो अज्ञानरूपी मोह मेरेहृ
दयमें भर्यो है· सो दूरि करिवे योग्य है· मैं आपके सरणहूं ऐ
से बचन सुनिकै भगवान् कपिलदेव बोलेकि, हे माता आ
त्मनिष्ठ योगनाम आत्मज्ञान योग-जो है सो कल्याण निमित्त-
है· तातै हे माता मैं कहतहूंकि, जो एम नहै सोही मुख्य है· ए·
मनकृत संसार है· यह मन विषयादिकनमें आसक्त है तबतो

बंधनहै. अरु यहीमन परमेश्वरमें आसक्त है तब मोक्षहीहै हे जननी अहंता. ममता अभिमान इनतें प्रगट भयेजो काम क्रोध लोभादिकजे मल इनतें जुदा मन जब होतहै. अरु ज्ञान वैराग्य भक्तियोग इनमें मनसदा प्रवर्तत होय तब आत्मा अरु प्रकृतिनाम माया इनकों जुदे जुदे देखे अरु तीव्र भक्ति नाम सर्व इंद्रिय वृत्ति परमेश्वरविषे लय करे ताको तीव्र भक्ति कहिये. ते भक्ति वैराग्य ज्ञान इनकरिके जरिगयेहैं अज्ञानजिनके तिनकी माया दूरहोयके ज्ञान प्रगट होतहै. जैसे स्वपनेमें अनेक भ्रम देषतहै. अरु जागे पीछे कछु स्वपनेको भ्रम होत नाही. तैसे ज्ञान उदय होतहै. तब अज्ञानको नास होतहै. अरु देहके उत्तम साधनतें ईश्वरके रूपध्यानतें. ध्यान ध्येय. नाम ध्यान तथा ध्यान करनहारो द्वैतभाव सून्य होयके एक अषंड आत्माकों देषतहै. सो सुख दुःखादिक अहंकारको नास देषतहै. देहादि उपाधीतें छूटकेजीवनमुक्त होतहै. अरु यहदेहको ऊठते बैठते सोवते जागते खावते पीवते. जन्मते मरते कर्मवस मानतहै. आत्मातो देहतें जुदोहै. जैसे आपनेधन पुत्र कलत्रतें आप जुदोहै अरु मानतहै. यह मेरेही है. तैसे देहते आत्मा जुदाहै. अज्ञानी एकही मानतेहै. सो मिथ्याहै. हे माता षोटे मार्गमें प्रवर्तहोनेसें क्षमा सत्य आदीक उत्तम पदार्थ नाश होतहै. जैसे स्त्रीके प्रसंगतें पुरुषको बंधन होतहै. तैसे और कुसंगतें नहोय. देखो ब्रह्मा भी अपनी पुत्रीको देषके मोहित भयो तातें स्त्रीरूपीएमेरी माया ऐसीहैकि दश दिशाकों जीतनहारोभी याके कटाक्षतें बंधन होतहै. तातें ज्ञानयोग आचरन करनहारो प्रमदासुसंगं न कुर्यात्. हे माता जो ज्ञानयोग

छोड़िकै देवतापितृनकों यजतहैं ते चंद्रलोकजायके मृत्युलो
कपीछे आवतहैं· ये निवृत्तिधर्म नाम निष्कामकर्मी शुद्धचि
त्त निरहंकार होयकै मोक्ष होतहैं· यह मार्ग करिकै जीवन मु
क्त होतहैं· ऐसे वचन सुनिकै देवहूती कपिल मुनिजी को ध्या
नकरिकै भक्तिप्रवाह करिकै वैराग्य करिकै· ब्रह्मज्ञानकरिकै
मनकरिकै आत्माविषै बुद्धि अचल करिकै निवृत्त भयेहैं मा-
याके गुण भ्रमजाके ऐसीश्री कपिलमाता देहकी संग्यानही
याद करत भई· ताकी देहकों कोईखवायदे कोई पायदे· को
ई ओढायदे परंतु संज्ञा नरही· अरु मल मूत्र कीचड़·राख-
धूल·इनतें लपटीहुवी देहीकैसीक सोभितहै जैसे भूमैसैं अ
ग्निसोभितहै· अरु ब्रह्मविषैं बुधि लगाय कपिलदेवकेमार्ग
तैं ब्रह्मनिर्वाण पद प्राप्तभई· तैसैं देहतें आत्माभिन्नजान अ
रुचित्तकों ज्ञानविषै विश्रामकरि· तबतुरंत सुखी शांतहोय
कै देहादिक बंधनतें छूटिहै॥३॥ दोहा ॥आतमज्जुदो
ज्जुदेहतें करिहै चित्तविश्राम॥ तबपावै संतोष सुख छूटैब
धनठाम॥३॥

॥ननुवर्णाश्रमप्रयुक्तानि कर्माणि विहाय चित्तविश्राम्यावस्था
नं कथंमुक्तिमित्याशंक्याह आत्मावर्णाश्रमविलक्षण इ·
तिआह ॥४॥ ॥श्लोक॥ ॥ नत्वंविप्रादिको
वर्णोनाश्रमीनाक्षगोचरः॥ असंगोसिनिराकारो
विश्वसाक्षीसुखीभव॥४॥ ॥टीका· - नत्व-
मिति त्वंवर्णाश्रम विलक्षण इत्यर्थः नन्वहं ब्राह्मण इत्या-
दिचाक्षुषप्रत्यक्षबलादात्मैववर्णाश्रमीचेत्त्याशंक्याह ना
क्षगोचरइति साक्षित्वादित्यर्थः अयं ब्राह्मण इत्यादिप्रत्यया
स्तुदेह गोचरा एवनत्वात्मगोचराः तस्येंद्रियकज्ञानागोच

रत्वादित्यर्थः तर्हिकीदृशोहमित्याशंक्याह ज्ञानंनिरूपयन्ने वनतुविश्रांति फलमनुवदति असंगःसर्वोपाधिसंगरहितः निराकारोविश्वसाक्षीत्वमसि अतएवासंगादिरूपस्यतववर्णाश्रम विलक्षणत्वात् कर्मासक्तिपरिहाराय चितिविश्रम्य सुखी प्राप्तपरमानंदोभवेत्यर्थः ॥५॥ ॥ भाषाटीका ॥ ॥ हेतात त्वंविप्रादिकोवर्णो नत्वं ब्राह्मण· क्षत्री वैश्य शूद्र इन्हही आदिदैकरि औरजेवर्ण संकरादिक तिमें कोऊ नाहीं· अरु नाश्रमी ब्रह्मचारी· वानप्रस्थ· गृहस्थ· यती इन्हही· आदिदै करि औरहू जे कोई द्वैतभाव राषते हहिं किहसेंवग· और सेव्य तिनमें तूंनाही तूं नाक्षगोचरः इंद्रीगोचर नाहीं इंद्रिय मन प्राणादिक तोहीतें चेतन होयकरि तेरैं तें· आपने· अरथनि विषे वर्त्ततहे· तेरैंजानिवेको क्योंकरि समर्थ होहि· तातें जोकछु इंद्रिय गोचर सो सब झूठो· तूं केसो है· असंगोसि संगकरि रहितहै· इनिसबनितैं न्यारो होहि· अरुनिराकार आकृतिकरि रहित होहि· जहांलौं आकार तहांलौं सब झूठौ और विश्वसाक्षी· सकल संसार तेरी शक्तिकरि प्रवर्ततु है· तूंसाक्षीरूपहै ऐसो आपुकौ जानि करि सुषी भव· ज्यौं सुखमय होहि त्योंही हो· जहांलौं दुःखहै· तहांलौंसंभार केहै· तूंजो इनिके दुःखनिमें जाइपरही सोकाहेकौं· दृष्टांत जैसे एक भेडा तथा बकरीयनको यूथनाम् टोरो जंगलमें चरनलग्यो तहां टोरावारे रबारीनें एकसिंहको बालक अति छोटो जानिकै दैवयोगतें पकरिकै अपने एवरविषे दूधपायकै पारनेलग्यो· तबवो सिंह पुत्र अपने बालपनतें एवर-विषे तथा एवरके स्वाननाम कुत्तानविषे अथवा मानुषनविषे खेलन लग्यो· दूधपीपीकै मोटो भयो अरु जंगलमें बक

रीनके ओवरमै रहन लग्यो· तबवह सिंहभी बकरीसमानभ
यो· अरु तातें कोईभी नही डरते भये· कोईसमय जंगलवि
षै एवरपै एक दूजो सिंह आयकै गर्जना करकै बोल्यो तबव
ह एवर अरु कुत्ते तथा मानुष दौरने लगे· तब एवरविषै पाल
कसिंहभी बकरियनकी संगविषै भयमानकै दौरन लग्यौ·
जैसे बकरी भयमानकै दौरतहै तैसे· एसोचरित्र देखकै ग
र्जना करने वारो सिंह अपने मनविषै बडो आश्चर्य मानिकै
एवरविषै सिंहहै ताकूं कहन लग्यो· हे पशु तूं कौन है· काहे
कूं भयमानकै भागते है· तब पालकसिंह कहत है कि हे मृग
राय, मैं तो बकरी हूं· अरु तेरेतें मोकूं बहुत भय उपज्यो है ता
तें मैं भी दौरताहूं· ऐसे बचन सुनिकै मनविषै कहन लग्यो
कि एसिंह अपना स्वरूपकौं भूलिकै सिंहतें बकरी भयोहै
तातें याकौं स्वरूप ज्ञान कीजियै· ऐसी विचारकै बहुत मीठी
बानीतें पालक सिंहकौं संतोष करिकै बोलन लग्यो कि हे
भाई तूं बकरी नहीं· यह बकरी तो तेरो भक्षण है· तूं इनकौं भ
क्ष्य करनहारो है· अरु तेरो स्वरूप अरु मेरो स्वरूप तो एक ही
है· इन बकरियनको स्वरूप तो अपनेतें जुदो है· हे सिंह, तूं अ
पनो स्वरूप देखि· यह बकरीपनको भ्रम भय दुःखत्याग
न कर· अरु अपने स्वरूप सुखविषै संतोष कीजियै· तात्पर्य
यह अज्ञान भ्रमतें संसारविषै मै सुखी मै दुखी· मै ब्राह्मण
मै क्षत्री· मै वैश्य मै शूद्र· मै ब्रह्मचारी मैं वानप्रस्थ मै सन्या
सी मै सिद्ध हूं· मै समर्थ हूं यह विभव मेरे है· मै सर्वकूं पारता
हूं· मै सर्वकूं मारता हूं· ऐसे अनेक मिथ्या भ्रम देहविषै है· ति
नकौं ज्ञानतें विचारिकै दूरि कीजियै ॥ ५ ॥ दोहा ॥
वरण आश्रमी तूं नहीं, इंद्रिय गोचर नाहिं ॥ निराकार निर

लेपतुहि सकलसाखिस्रुख माहि ॥४॥

ननुवेदोदितंकर्म विहायचित्तिविश्रांतावपि प्रत्यवाय प्रसंग इत्यत्राह ॥५॥ ॥श्लोक॥ ॥धर्माधर्मौसुख दुःख मानसानिनतेविभो ॥ नकर्त्तासिनभोक्तासि मुक्तएवासिसर्वदा ॥५॥ टीका - धर्माधर्माविति धर्माधर्मादयो मनस एव कालत्रयेपितेः सहतवसंबंधोना स्तीत्यर्थः नकर्त्तेति किंचविहितनिषिद्धकर्मकर्तृधर्मा· दिद्वारा सुखदुःखभोक्तृत्वंतदपितवसंबंधोनास्तिशुद्धबु द्धरूपत्वात् त्वंसर्वदामुक्तएव अज्ञानमात्रेविजृंभिते बंधः सुखदुःखहेतुः चित्तिविश्रांत्यैवाज्ञाननिवृत्यानविजृंभि· ष्यतेइत्यर्थः ॥५॥ ॥भाषाटीका- हेतात धर्माधर्मौ तेनधर्म अरुअधर्म एतेरैनाहि· अरुधर्मअधर्मकेजोफल सुखदुःख सुख अरु दुःख ऐकोऊ तेरैनाहीहै· कौनकोमा नसानि मनकेहै· मनकरि मानिलीए· आपुविषेकि मैं यह पापकर्यौ मैं यहपुण्यकर्यौ मैंयहसुखपायो·यह दुःख पायो· अजानि मानि आपुलिए·हेविभो तूंकैसोहै·विभूस र्वेनव्यापक·तेरीही शक्तिकरि पुण्य पाप सुखदुःख वर्ततहै अरु मन तेरीही शक्तिकरि इनविषे वर्ततहै· नकर्त्तासिन- भोक्तासि तूंनतो करनिहारो अरु नभोगनहारो तोहितेचे तनव्हैकरि इंद्रिय कर्मनिविषे तत्परहोहि· अरु इंद्रियसु खदुःखादिकनिविषे वर्त्तै तूंक्यों मानलेहि· सर्वदामुक्तए वासि आदि अंत मध्यतूं मुक्तहीहै· अबहूतूं मुक्तहीहै· तेरो अद्वैतकों बाधनिहारो कौनकेवल भ्रमकरि बंधन मा नलियोहै· दृष्टांत जैसोकोउ बावरो अपने अज्ञानतें एकवृ क्षके पेडकों अपने हाथनितें पकरिकै पुकारन लग्यौकि हे

नगरके लोको जलदी दोरो मेरेकों यह पापी व्रक्षपकरके बांध
राख्योहै· अरु मै बहुतदुखी हों मोकौं जलदी छुटावो· ऐसे सु
निके सब दोरआये· अरुदेखतेहैकि, आपही अपने हाथतें·
व्रछपकरिकैं पुकारतहैकि व्रक्ष मोकों पकर्योहै· ऐसें सुनिकें
सर्व आश्चर्य भये· अरु कहन लगेकि हे मूर्ख तू अपने स्वरूप
कौं देखि अरु शुद्ध बिचार करकि या वृक्ष कों पकरने हारो तूं है
कि तोकौं पकरनहारो वृक्षहै· ऐसे बोधक वचन सुनिकें ज्ञानवि
चारतें देखतहैकि मै अपने हाथतें वृक्ष पकर्योहै· अरु वृथा·
पुकारतहुं· ऐसेंविचार वृक्षकौं छोडिकें दूरि भयो· भ्रमतें निवृ·
त्तहोयकें बहुत सुख पायो· तात्पर्य तैसैंही या संसारविषें अ
नेक मनकृत विकारनतें आपुतें आप बंधरयोहै· अरु कहत·
हैकि, मै बहुत दुखीहौं· मैबहुत करताहौं· मेरेकुटुंबकौं पार
तहौं· यह धन माया धाम· सकल मेरेहैं· इनकौं कैसे छोडुं· मेरे·
विना सर्व विगडजायगे· ऐसे सर्वकों अपने मानिकें बंधरयो
है· तातैं ज्ञाननतें विचारतें बंधनकों छोडि अरु मुक्तिरूप होय·
कै सदासुखी होजिये· ॥५॥ दोहा यहफलधर्मअ
धर्मके सुखदुःखमनकौंजान॥ तूंनकरेभोगतनहीं तुहि·
निजमुक्तिनिदान ॥५॥ संसकृत प्रारंभः
ननुशुद्धबुद्धस्वभावस्यैकरसस्य नित्यमुक्तस्यात्मनो बंधः किं
निबंधनो यस्य बंधस्य निवृत्यर्थं विवेकिनोयत्नं न इत्याशंक्य
नित्यमुक्तस्यापि प्रातीतिकसं बंधहेतुमाह॥६॥ ॥श्लो
क॥ ॥एकोद्रष्टासिसर्वस्य मुक्तएवासि सर्वदा॥
अयमेवहितेबंधोद्रष्टारंपश्यसीतरम्॥६॥ ॥
टीका- एकइति हेशिष्य सर्वस्यद्रष्टा प्रतिशरीरमेकस्त्वम
सिततश्च व्यापकत्वात्सर्वदा मुक्तप्रायोसि देहाध्यासवशतो·

बंधे प्रतीयमानेपि वस्तुगत्या मुक्तोसीत्यर्थः अयमिति हि नि
श्चितं अयमेवतं बंधो यदितरं देहादिरूपं परिच्छिन्नं द्रष्टारं प-
श्यसीत्यर्थः ॥ ६ ॥ **भाषाटीका** हे तात तूं कैसो है ए
काएकही है तो हितें दूजो और कोऊ नाहीं अरु सर्वस्य द्रष्टासी
सकलकों देषन हारो है जो कदाचित् कहै कि जो हौं एकही हौं
तौ सकलको देषनहारो कैसो सकल सो कहा तौ देषज्यो समुद्र
विषै अनेक तरंग बुदबुदे फेन एते नाना प्रकारके वाहीते उप-
जैंहि वाहीविषै रवेलैहि वाहीविषै लीनहोहि तो समुद्र सदा ए
करूप इनको देषतु है परि आत्माभावकरि कछु दूजीकरनाही
जानतसौं ही यह जो कछु नानात्व है ताकौं तोईरूप करि द्रष्टा-
हही दूसरो नाहीं अरु मुक्तप्रायोसि सर्वदा वाहीतें सदैव मु-
कुई है कौन बांधे कौन छोडे अयमेवते बंधः वह ई तो कों बंध
नकों नहीं जाने द्रष्टा इतरं पश्यसि सर्वको देषनहारो साक्षी रू
प निर्लेप कहा औरको देषतु है तातें तूही है दूजो नाहीं ॥ ६ ॥
दोहा एकहि देषत सकलकों सदा मुक्तिपद पाय ॥ बंधन-
येही जानिये देखत दूजी भाय ॥ ६ ॥ **संस्कृत**
पूर्वं बंधहेतुरुक्तोऽधुनानर्थहेतुं वदन्नेव तन्निवृत्तिं परमानंदावा
प्तिरुपायमाह ॥ ७ ॥ ॥ **श्लोक** ॥ ॥ **अहं कर्त्तेत्यहं-
मानमहाकृष्णाहिदंशितः ॥ नाहं कर्त्तेति विश्वासा
मृतं पीत्वा सुखी भव ॥ ७ ॥** **टीका**- अहं कर्त्तेति
हे शिष्य अहं कर्त्ता इत्येवं रूपो योऽहमानो ऽहमिति आत्मनि कर्तृ
त्वाभिमानस्तद्रूपो महान् कृष्ण सर्पः सुखदुःखविषवहस्तेन
दंशितः कवलीकृतोतः कारणान्न कर्त्ता अहमकर्त्ता आत्मा-
इत्येवं रूपं विश्वासामृतं निश्चयामृतं पीत्वानुभूय सुखी-
भव प्राप्त परमानंदो भवेत्यर्थः ॥ ७ ॥ **भाषाटीका** ॥

हे तात अहंकर्त्ता मैं करनिहारो इत्यहमान यहजो अहंकारको थापियो सोई भयो जु महाकृष्णाहि बडोकारो सांपुताकरि दंशित काटयोजु है तूं बडो सापकाहै ते जो और सांपुषाई तो एकहीवार मरै अहंकार सरपको षायो ब्रह्माके लोकतें शेष देवके लोक तैं तौं कहांनवचै ऐसोजु तूं सौ नाहं कर्त्ता मैं करनिहारो नाहीं निर्लेप है इंद्रियादिक कर्त्ता है इति विश्वासामृतं पीत्वा यहजु विश्वास मन बुद्धिकरि प्रतीति सोईजु बडो अमृत बडे सर्पतें बचावनिहारो ताहि पीकरि आदरसौं हृदय मों राषि सुखी भव ज्यों सुखरूप होहि त्यौंही होहि ॥७॥ **दोहा** अहंकारविषसर्पसम अमृत अनहंकार ॥ निर्भय अमृतपीजिये विषकौं देतविडार ॥७॥ **संस्कृत.**

नन्वात्मज्ञानामृतपानं किं द्वारा सुखसाधनमित्याशंक्याज्ञानकाननदहन द्वारा ज्ञानाग्निः सुखसाधनमित्याह ॥ ॥

श्लोक ॥ एकोविशुद्धबोधोहमितिनिश्चयवह्निना ॥ प्रज्वाल्याज्ञानगहनं वीतशोकः सुखीभव ॥८॥ **टीका-** एकोविशुद्धबोधोहमिति एकः सजातीय विजातीय स्वगत भेदरहितः विशुद्ध बोधः स्वप्रकाशः चिदात्माहमितिनिश्चयाग्निना अज्ञानाख्यं गहनं प्रज्वाल्य प्रकर्षेण दग्ध्वा मोहराग द्वेष प्रवृत्तिजन्मापायाद्वीतशोकोविगतदुःखः सन् सुखी भवेत्यर्थः ॥८॥ ॥ **भाषाटीका-** हे तात अहंएकः मैं तो एकई हौं दूजो है एनाहीं विशुद्ध बोधः परमनिर्मलज्ञानरूप हौं इतिनिश्चयवह्निना यहजु निश्चय हृदयविषे ठहराइवो सोई भयोजु महा अग्नि ताकरि अज्ञान गहनं प्रज्वाल्य अज्ञानई भयोजु महाभयानक

वनताहिचारीहू औरतें मूलसहित जारिकरि वीतशोक ना-
मचिंता तथा शोक छांडिके निर्भय होहु· कोऊऐसे कहैंगेकि
वनकेविषैतो·फल.मूल·पत्र·पुष्प·शाखा·पक्षी पक्षिणी·
सर्प ऐसे अनेकहूहैं·एह अज्ञान वन विषै कहाहै·ऐसो संदे·
हदूरिकरिवेकों कहतहौंकि हेपुत्र सुनि अज्ञानवनको फ-
लजुहैशोक अरुमूलजुहैस्पृहा नाम इच्छा·पुष्पनामा मो·
ह·पत्रनामालोभ· शाखानाम ईर्षा, पक्षीनाम कुमन, प-
क्षिणीनाम कुबुद्धी· सर्पनाम अहंकार· अरुओरजे अनेक
सिंह व्याघ्रादिरूप कामक्रोधादिक तिनितें निवृत्त ह्वैकरि
सुखीभव·ज्यौंसुखरूप तूंहोहि त्यौंहीहो॥८॥ दोहा
एकहि बोधविशुद्धहौं निश्चय अग्नी सोय॥ जारिमहाअ-
ज्ञानवन बीतशोकसुखहोय॥८॥ संस्कृतप्रा·

ननुज्ञानेन अज्ञानदाहे सत्यपि सत्यस्य प्रपंचस्यज्ञानादनिवृ·
त्तेर्वीतशोकः कथंस्यादित्याशंक्य प्रपंचस्यरज्जुभुजंगतुल्य
त्वात् ज्ञानाद्विनिवृत्तौदुःखहेतोरभावाद्वीतशोकतास्यादे
वेत्याह·॥८॥ ॥श्लोक॥ ॥यत्रविश्वमिदंभाति
कल्पितंरज्जुसर्पवत्॥ आनंदपरमानंदःस्वबो·
धस्त्वंसुखंचर॥९॥ टीका·– यत्रेति यत्रबोधेइ
दंविश्वंरज्जुसर्पवत् कल्पितं अधिष्ठानाज्ञानकल्पितंभाति
सबोधश्चिदात्मात्वंसुखंचर यथा स्वप्नदशायां अज्ञान क-
ल्पितं व्याघ्रादिकंजाग्रबोधेनिवर्त्यसुखंचरति तद्वदित्यर्थः
ननुदुःखहेतुप्रपंचनिवृत्तौ दुःखाभावमात्रंस्यात् सुखंतु
कथंस्यादित्याशंक्यस्वभावत एवत्वंनित्यानंतानंदस्वरूप·
इत्याह· आनंदेति आनंदेभ्योमनुष्यलोक देवलोकानंदे-
भ्यः परमउत्कृष्ट आनंदस्त्वमित्यर्थः एतस्यैवानंदस्या-

न्यानि भूतानि मात्रामुपजीवंतीतिश्रुतेः॥९॥ भाषाटीका- हे तात यत्र इदं विश्वं कल्पितं भाति या ब्रह्मविषेयह सकल संसार कल्पित शोभतुहै· कल्पित कहियेजु वस्तु है नाहीं मनके भ्रमतें मानलीजै· साचु सो जानु एको न भाति रज्जुसर्प वत् ज्यो जेवरीविषै अंधकारतें विनजाने सर्प शोभतुहै भयको देनहारोहै· जों लगि प्रकाश न होय अरु जेवरी की जेवरी न जानी जाई तौं लगि भय मिटै नाहीं· त्यौं जों लगि अज्ञान अंधकार विषै देषतु है· ज्ञान को प्रकाश नाहीं भयो तौं लगि पर्यंत भयको देनहारोहै· दूजो अर्थ कल्पित कहा जो लौं मनविषै कल्पना कौं नऊ है तौ लगि है कल्पना नांहि तब संसार नाहीं तौ जेवरी साची सर्प झूठो त्यौं ब्रह्म साचो संसार झूठो तौं ऐसो जु ब्रह्म सत्य है देषु रे पुत्र सुतूं ही है कैसो है बोधः परमज्ञानमूर्ति याकी शक्ति करि इंद्रियादिक जड तेऊ अर्थनिविषै वर्तनहै· बहुरि कैसो तूं है· आनंदः याकी शक्ति करि दुःखविषै आनंद मानि वर्तत है· और अर्थ जिनके थोरे है ज्ञानतें आनंद होत है बहुरि कहो परमानंद जो आनंद कह्यो न जाइ सो स्वरूप यो जानि करि सुखी भव· न कहो जाइबे कौं· न कछु करिवे कौं ताहि क्षन सुख मप होहि॥९॥ **दोहा** ब्रह्मविषै कल्पित जगत जैसे रज्जू सर्प॥ परमानंद आनंद तुही बोधसहित सुखयर्प॥९॥ **सं॰**

ननु सर्वं रज्जुसर्पवत् कल्पितं स्वभावतः स्वानंदएवात्मेति चेत्तर्हि बंधमोक्षावात्मनः किंनिबंधनावित्याशंक्याह॥१०॥ ॥ **श्लोक॥** ॥ मुक्ताभिमानीमुक्तोहि बद्धोबद्धाभिमान्यपि॥ किंवदंतीहसत्येयं यामतिःसागतिर्भवेत्॥१०

टीका- मुक्ताभिमानीति हि निश्चितं मुक्ताभिमान्येव मुक्तः

अपिच बद्धाभिमानी बद्धः अत्रकिंवदंती प्रमाणयंतियामः
तिःसागतिर्भवेत् इयंहिप्रसिद्धाकिंवदंती विद्वज्जनश्रुतिःस
त्याबाधितार्थातं विद्याकर्मणीसमन्वारभेते पूर्वप्रज्ञाचेतिश्रु
तिरपिगृहीतत्वात् यंयंवापिस्मरन्भावं इत्यादिस्मृतिपरिगृ
हीतत्वाच्चतथाचाभिमानिकावेव बंधमोक्षौनतुवास्तवावि
त्यर्थः पूर्वमुक्तोप्ययमर्थोदुर्बोधत्वात्पुनःपुनःशिष्यबोधार्थ
मुच्यते इत्यदोषः॥१०॥ **भाषाटीका** हेतात मुक्ताभि
मानीहिमुक्तः जाकोअभिमाननिश्चय छूट्यौ सोछूट्यो॰नि
श्चय करिकोंनभांतिजानिये॰अपिजाप्रकार बद्धाभिमानीब
द्धः जिनअभिमानबांध्यो सोबांध्यो सबृ देषयतुहै त्योंही अ॰
भिमानछोडैतें छूटै अरु इहायावात्तविषे येकिं वदंतिसत्येयं
यहजो संसारविषै लोग कहतहैंसु सत्यहै कहा कहै कहै या
मतिःसागतिर्भवेत् भाइजेसीजाकी मति तैसी ताकीगति
भाइ जहांजाको आसो तहां ताको वासो तौलौं जाके अहंका
रविषै मति सोसदा अहंकारही विषैप्राप्त होई॰ अहंकार सो॰
संसार॰जाकी निरहंकार विषै मतिहै सो निरहंकारजु ब्रह्मता
विषै प्राप्त होई॰ तातें तूं अहंकार छोड॰एक अविनाशीहै हूंतह
कारछोड॥१०॥ **दोहा** मुक्तजुदो अभिमानतें बंध्यो
बंधअभिमान॥ कहाकहूंयहसत्यहौंज्यूंमतित्यूंगतिमान १०
॥ ननुजीवात्मनः परमार्थिकावेवबंधमोक्षौइति तार्किकाशं॰
कामन्यथाकर्तुमाह॥११॥ ॥श्लोक॥ ॥आत्मासाक्षी
विभुःपूर्णएकोमुक्तश्चिदक्रियः॥ असंगोनिःस्पृ॰
हःशांतोभ्रमात्संसारवानिव॥११॥ टीका॰-
आत्मेति आत्माचभ्रमाद्देहादावात्मवत्तादात्म्यभ्रमात्सं
सारवानिव प्रतीयते नतुवस्तुतः संसारी अत्रदेहे हेतूनाह

साक्षीति कर्त्तुरहंकारादेः साक्षीनतुकर्त्ताविभुः विविधभवत्यस्मादितिविभुःसर्वाधिष्ठानंपूर्णः व्यापकः एकः सजातीयविजातीयस्वगतभेदरहितःमुक्तः वस्तुगत्यामायातत्कार्यातीतः विश्वप्रकाशचैतन्यरूपो ऽक्रियः चेष्टारहितः असंगः सर्वसंबंधशून्य असंगोह्ययंपुरुषइतिश्रुतेः निस्पृहः विषयाभिलाषरहितः शांतः प्रवृत्तिनिवृत्तिदेहाद्यतः करणधर्मरहितः तस्माद्भक्तोनसंसारीत्यर्थः ॥१२॥ भाषाटीका-हे तात यह्जुआत्मासोकैसोहै साक्षी जहांलोककछुव्योहार है ताकोसाक्षीरूपहै आत्माशक्तिकरिसबहोरहे आत्मान्यारोहै अरुपविभुः सर्वव्यापकहै ऐसोऔरकोऊहैनाहीं जहां नकर्योजाई अरुपूर्णः सकलआनंदनिसैं पूर्णहै जहांकछू वांछानाही अरुएक द्वैतभावकरिरहितहै एकहीहै अरुमुक्तः जोदूजोहोइतो कदाचित बंधहोई एकही तातें सदामुक्तिहै अरुचित्त चैतन्यरूपहै जहांलोकछूचैतन्यसो सकलआत्माकीहै वाकीशक्तिविनु देह इंद्रियादिक सकलजडहै अरुताहीकरि इनकी स्थितिहै अरु अक्रियः अकर्त्ताहै वाकीशक्तिकरि इंद्रियादिक कर्मनिविषे तत्परहोतहै अरु असंगः सर्वसंगपुण्यपापादिक सुखदुःखादिक तिनिविषैकहो आसक्तनाहीं न्यारोहै अरुनिस्पृहः सुखनिहूविषे संगक्यों नाहीकरैतूं जातेकौनहू वस्तुकी स्पृहानाही परमसुखमयहै जाकोसुखविनुदेषे केवलसुनहीकरि तीनिहूलोकके राज्यको सुख परमदुःखरूप लागतहै अरुअनेकनिदुःखजालनि छोड्योंहीहै अरुशांत परम शांतरूपतो ऐसोजु आत्मा सो भ्रमात्संसारवानिव मनकेभ्रमतें संसारतेंसो जानियतहै ॥१२॥ दोहा आत्मासाक्षी पूर्णहै अक्रिय

चित

मुक्तिस्वरूप ॥ इच्छासंगनशांतहै भ्रमतैविश्वअनूप ॥ ११
॥ सं॰ ॥ अहंपरिच्छिन्नोममेदंदेहादिकंसुखी दुःखीचाहमि
तिभ्रमस्यानादिपरंपरागतस्यसकृद्भावनयानिवर्त्तयितुम
शक्यत्वादावृत्तिरसकृदुपदेशादितिव्याससूत्राच्चपुनः पुनर
द्वैतात्मभावनांविजातीयभावनानिवृत्तिपुरःसरामुपदिशति
॥१२॥ ॥श्लोक॥ ॥ कूटस्थंबोधमद्वैतमात्मानं
परिभावय ॥ आभासोहंभ्रमंमुक्त्वाबाह्यभावमथां
तरम् ॥ १२॥ टीका॰- कूटस्थमिति हेशिष्य आभासोहं
कारोहमितिभ्रमंमुक्त्वा बाह्यभावं ममेदंदेहादिकमिति बा-
ह्यपदार्थविषयंभावं अथांतरंभावं सुखी दुःखीमूढोहमिति
अंतरं पदार्थविषयंभावंभावनांमुक्त्वा अकर्त्ता कूटस्थमसंगं
बोधस्वरूपमद्वैतमात्मानंपरिसमंताद्बुद्ध्यापृकंभावयेत्यर्थः ॥
१२॥ भाषाटीका- हेतात बाह्यभावत्यक्त्वा प्रथमही
ये बाहिरके इंद्रियनकेस्थूल अर्थहहिते सकल छोडिकरि अ-
थयाके अनंतर अंतरभावत्यक्त्वा अंतर्गतमनबुद्ध्यादिकनि
विषैं जे कोऊ वासना ते सब छोडिकरि ताके अनंतर उपज्यो है
जु आभासके समान अहंकार भ्रम आभासकहिए जु भ-
लकरिजानेविनु औरवस्तुविषै औरवस्तुसी देषीये कौन-
भांति· ज्यौं सीपविषै रूपैको आभास· ज्यौंजेवरीविषै सर्प्प
मृगतृष्णाविषैजल· इत्यादिक आभास कहिए· त्यौंही एक
आत्माविषै उपज्योहै द्वैतको आभास अहंकारभ्रम ताहि·
छोडिकरि आत्माको कूटस्थ परिभावय· सकल स्थावरजं
गम आदिकनिविषै स्थित जानु· अरुबोधज्ञान स्वरूप जानुं
अरु अद्वैतं द्वैतकरिरहित एकही जानु· अरुजैसे याश्लोक-
विषैकह्यो तैसे कर्मविनु आत्मा स्वरूपकों पावैनाहीं तातैं·

योंकरु ॥१२॥ **दोहा** बोधरूप व्यापक सकल आतम ज्ञान अद्वैत ॥ त्यागभरम आभासकौं भीनरबारसहेत ॥१२॥

संस्कृत अनादिरयं देहाभिमानः असकृद्भावनयानानिवर्तत इति पुनः पुनर्ज्ञानखड्गेन तं निकृत्य सुखी भवेत्याह ॥१३

॥ **श्लोक** ॥ **देहाभिमानपाशेन चिरं बद्धोसि पुत्रक ॥ बोधोहंज्ञानखड्गेन तन्निकृत्य सुखी भव ॥ १३**

टीका - देहाभिमानेति हे पुत्रक शिष्य त्वं देहोहमित्यभिमान पाशेन चिरं बहुकालं बद्धोसि अतो बोधोहं चिद्रूपोहमिति ज्ञानखड्गेन पुनः पुनस्तं पाशं निकृत्य नितरां छित्वा सुखी भव ॥१३॥ **भाषाटीका** - हे पुत्र कहे करे पुत्र, देहाभिमानपाशेन देहविषै जु अहंकार बुद्धि सोई भई जु पाश ताकरि चिरंबद्धोसि चिरकाल कों तू बांध्यो है तो बोधोहं अरे मैं तो ज्ञानमय चेतन अजन्मा अविनाशी यह देह तो जड़ उपजै विनसै याकों मैं क्यों आसक्ति करी है यह जु ज्ञानयोग सोई भयो जु तीक्ष्णखड्ग ताकरि तन्निकृत्य ताअहंकार पाश कों काटिकरि सुखी भव ज्यों सुखमय है त्यों ही हो ॥१३॥ **दोहा** ॥ देहादिक अभिमान की फांसपरी गल तोय ॥ ज्ञानरूप तरवार तैं काटि सुखी निति होय ॥१३॥

सं० चित्तवृत्तिनिरोधरूपः समाधिरेव केवलो बंधनिवृत्तिहेतुरिति पातंजलमतमपाकर्तुमाह ॥१४॥ ॥ **श्लोक** ॥ ॥ **निःसंगो निःक्रियोसि त्वं स्वप्रकाशो निरंजनः ॥ अयमेव हि ते बंधः समाधिमनुतिष्ठसि ॥ १४**

टीका - निःसंग इति हे शिष्य त्वं वस्तुतः निःसंगः सर्वसंबंधशून्योसि तथा क्रियारहितोसि अत्र हेतुमाह स्वप्रकाशो निरंजन इति निःक्रियस्य समाध्यनुष्ठानं यत् अयमेव हि निश्चि

न्तंनेबंधः तथाच ज्ञानातिरिक्तो योनुष्ठानमात्रं प्रत्युत बंध एवेत्यर्थः ॥१४॥ **भाषाटीका**:- हेपुत्रक तूं कैसोहै निःसंगः सर्वसंगतैं निर्लेपहै काहेतें निःक्रियः अकर्त्ताहै काहेतैं स्वप्रकाशी तेरेही प्रकाशकरि सकल प्रकासतहै तूं आपुहि प्रकासमयहै काहेतें निरंजनः जहांलोंमाया तहांलों अप्रकास तूंमायाकरि रहितहै परि अयमवते बंधः यहई तोकों बंधनहै कोनहीयातें समाधि अनुतिष्ठसि आपुको औरमानिये कहतुहैकि संसारतें मन षेंचि तो ब्रह्मविषे प्राप्तकरों देषरेपुत्र समुद्रविषेजे तरंगहैं तेकछुन्यारीहैंकि तु एकईहही त्योंही संसार अरु तूं अरुब्रह्म इनिविषें कहाभेद हैकितूं एकहै दूजोकोमानिवो सोईसंसार॥ **दोहा** ॥

संगरहितअक्रियसदा स्वप्रकाशनिर्धार॥ येहीबंधनजानिये भजकेमुक्तिसिधार॥ १४॥ ॥ **संस्कृत**॥ ॥

तदेवमात्मज्ञानातिरिक्तः समाधिरपिपूर्वंनिराकृतः अथपरिपूर्णेशुद्धात्मनि विपरीतधियमुत्सारयन्नेव चित्तनिष्ठामुपसंहरति श्लोकद्वयेन॥१५॥ ॥**श्लोक**॥ ॥**त्वया व्याप्तमिदंविश्वंत्वयिप्रोतंयथार्थतः॥ शुद्धबुद्धस्वरूपस्त्वमागमःक्षुद्रचित्तताम्॥१५॥** **टीका**

त्वयेति हेशिष्य इदंविश्वंत्वयाव्याप्तं कनकेनेव कटककुंडलादिकं तथाइदंविश्वंत्वयिप्रोतं मृदीवघटशरावादिकं हेशिष्य त्वंयथार्थतः परमार्थतः शुद्धः अविद्यातत्कार्यपंकातीतः बुद्धः स्वप्रकाशः चिद्रूपोसि एवंसर्वगंधः सर्वरसो नेति नेतीति चेति श्रुतिद्वयानुसारेणोक्ताभ्यामध्यारोपापवादाभ्यां निःप्रपंचं प्रपंचितमात्मतत्वमुपदिष्टंभवति हेशिष्य परिपूर्णशुद्धबुद्धस्वरूपस्त्वं क्षुद्रचित्ततांविपरीतचित्तवृत्तिंमागमः

माकार्षीरित्यर्थः ॥१५॥ भाषाटीका - अरेपुत्र इदंविश्वं यहजोकछु संसार कहीयतुहै सोसब त्वया प्रोत तोहीकरिपोयोहै ज्यों एकसूत्रविषे अनेक मणियां पोयेहीहें तोमाला कहावतुहै विनसूत्र मालानाहीं त्यों तोही विनु संसारनाहीं तोमणियां औरसूत्र और यों नाहीं यथार्थतः त्वया व्याप्तं एक तोहीविषेहै अरु तोहीकरिपूर्णहै तूंहीहै दूजो नाहीं ज्यों सूत्रमयीमाला समुद्र तरंग भूमि पात्र इत्यादिक जो कहैकि जो भेदनाहीं तो देहादिकजडहै माया अज्ञानमयहै तो मेरे स्वरूपविषे जडता अज्ञानताहै तो दैष माया को नामईहै अर्थ कहाकि जुवस्तु नाही हुई परिदेषियतिहै ज्यों बाजीगिरकी बाजी सोमाया अरु अज्ञानमय याको नामईहै अर्थ कहाकि जो लौं अज्ञानहै मनविषेंभ्रमहै तो लौंहै भ्रम छूटैकछूहैएनाहीं त्वंशुद्धबुद्धस्वरूपः परमनिर्मल ज्ञानमय तेरो स्वयंसिद्ध अक्षयस्वरूपईहै मागमः क्षुद्रचित्त ता तूंकायरक्यों होतुहैकि हूंबंध्यो हौं क्यौंकरि छूटौं मायाप्रबलहै असी चित्तविषे कदाचितनहीं आनहीं यहई बंधन नाहीं तौदूजोहैएनाहीं तोहिकौंन बांधिसकै ॥१५॥

दोहा शुद्धरूपनिर्मलतुही चिंतनकरियपुत्र ॥ व्यापककीनीविश्वकौं ज्यूंमणिमालासूत्र ॥१५॥ संसकृत प्राप्रतीयमानाः षडूर्मयः षड्भावविकारानलद्भूताः त्वंतु तद्विलक्षणइत्याह ॥१६॥ ॥श्लोक॥ ॥निरपेक्षोनिराकारोनिर्भरः शीतलाशयः ॥ अगाधबुद्धिरक्षुब्धोभवचिन्मात्रवासनः ॥१६॥ टीका- निरपेक्षइति हेशिष्य त्वंनिरपेक्षः अशनादि षड्रसादि षडूर्मिसंसर्गातीतः तथानिर्विकारः जायतेऽस्ति वर्द्धते विपरीणमते

अपक्षीयते नश्यतीत्येवं प्रोक्ताः षड्भावविकारास्तत्संसर्ग रहितस्त्वमित्यर्थः तर्हि कीदृशोहमित्याह· निर्भरइति नि-र्भरश्चिद्घनरूपः शीतलस्वरूपः आमुक्तिसमयमभिव्याप्यशेतेतिष्ठतीत्याशयः अगाधा अतलस्पर्शा अपरिच्छिन्ना बुद्धिः स्वरूपचैतन्यं नद्रूपः अक्षुब्धः अविद्यातत्कृतक्षोभरहितस्त्वं वस्तुतोसि अतस्त्वंक्रियामात्ररहितश्चिन्मात्र निष्ठोभवेत्यर्थः ॥१६॥ भाषाटीका·— हे पुत्र, त्वंचिन्मात्रवासनोभवः ज्योंमैकह्यो त्यों जानिकरितूं केवलचैतन्यस्वरूपहो· दूजीबुद्धिदूरिकरि आपनोरूप ऐसो जानिकै सो निरपेक्षः जाकै कौनहू वस्तुकी अपेक्षानाहीं· काहेतें वातें निर्विकार अविनाशी विनाशवंत वस्तुकी अपेक्षा क्यों करै· अरुजोकहैकि जो विनाशवंत ऊसुखहै तौदिन द्वै चारि केतोहै· अपेक्षा क्योंनकरौ तो सुनः निर्भरजेते कछुसुख उपजेहै· तेते सकल आत्मातें उपजेहै· आत्मा आनंदमूर्ति है याको सुख केवल सुनत्त मात्रही त्रैलोक्य राज्यादि जे-सुखते परमदुःख प्रायस्तु जानि छोडतहै अरु याहीतें शीतलाशयः परमशांतरूपहै· अरु अगाधबुद्धि अपार-अनंत बुद्धिमय· दूजो अर्थ बुद्धिजाको जानि सकै नाहीं· भावकहाकि बुद्धिजुहै सो इंद्रियनतें मनतें चित्ततें अहं-कारादिकनितें श्रेष्ठहै· सो बुद्धि उनजान सकै तो और कहा जानै· अरु तातें अक्षुब्धः क्षोभकारिरहित याके थोरेहूज्ञानतें त्रैलोक्यके जे सुख दुःखादिक रूप अनेकविध्न तिन करिकहू· मनविषे क्षोभनाही होतु· तातें आपनो स्वरूप ऐसोजानिकरि सुखीहो ॥१६॥ दोहा निर्विकार निर्लेपतुहि शीतलऔर अगाध· ॥क्षोभरहितचिन्मात्रतें·

छूटत सकल उपाध ॥१६॥

अथसंग्रहश्लोकः॥ ॥विषयान्विषवत्त्यज सत्यंपीयूषवद्भजेति मोक्षोपायः प्रथमश्लोके समुपदिष्टः परन्तु विषयाणां विषतुल्यत्वे सत्यात्मनः पीयूषतुल्यत्वेच हेतुर्नोक्तो नस्तत्र हेतुंवदन्नेव षोडशश्लोकोपदेशो मोक्षहेतुश्चिदात्माचस्वाध्यस्तंविश्वं समंततो व्याप्यावस्थितो मुकुर इवस्वाध्यास्तं शरीर इति तद्भावापत्तिरेव परमपुरुषार्थ इत्युपपत्तिमुखेनप्रकरणार्थं संगृह्णाति श्लोकत्रयेण अथसंग्रहश्लोकः॥ ॥

श्लोक॥ साकारमनृतंविद्धि निराकारंतुनिश्चलं॥ एतत्तत्त्वोपदेशेननपुनर्भवसंभवः॥१७॥

टीका हेशिष्य साकारंशरीरादिकं अनृतं मिथ्याभूतं विद्धि अतस्तद्विषवत्त्यजेत्यर्थः निराकारं आत्मतत्त्वं निश्चलं कालत्रयावस्थायि विद्धि सर्वसाक्षित्वान्नित्यंविज्ञान मानंदं ब्रह्मेति श्रुतेश्च अत एवंतत्त्वचिन्मात्रेउपदेशेन उपदिश्यमानेन तत्रैव विश्राम्यावस्थानेन नपुनर्भवस्य संसारस्य संभवः सिद्धिरित्यर्थः॥१७॥

भाषाटीका - साकार मनृतंविद्धि जहांलौं कछु इंद्रिय मन गोचर है तहांलौं सकल झूठो जानि जोकोई कहे कियहतो साच सो जानियतु है झूठो कौनभांतिकरि जानिये तोसुनि ज्यों तेरे देषतही एकनिके जन्म होत है एकनिकी बाल्यावस्था जाती है तरुणावस्था आवती है एकनिकी तरुणावस्था जाती है वृद्धावस्था आवती है और सुखदुःखादिक क्षणावस्थापी देषतु है अरु अनेकनि मरत देषतु है और नानारूप उपजते विनसते देषतु है त्योंही सकलविनाशमय जानु नतो आदि हुतो अरु न अंतरहसी अब बहू उपजतेविनसते देषियतु है तातें झूठे जानि अरुनिराका

रंतु निश्चलंतुविद्धि· आकारकरिरहित· मन बुद्धि इंद्रियादि· कनिकों अगोचर ऐसोज्जुहै सोसदा एकरूप अविनाशी अ· खंडितजानुतौ· एतत्तत्वोपदेशेन एतनोईजो तत्वज्ञानकौं· निश्चल ह्वैबो ताकरि नपुनर्भवसंभवः बहुरि संसारविषै· आइबो नाहीं· विनाशवंत जानि साकारतें मनुषैचि लीजे अ विनाशिजानि निराकारविषै दृढकरि बांधिये तोहीमुक्त॥ ॥

दोहा श्रीधरप्राणशरीरमें ज्ञानध्यानसुखहेत॥ नाहि तोभाथसुद्दारकी कहास्वासनहिलेत॥१॥ नासवनआका रसब निराकारअविनास॥ मिटैतत्वउपदेशतें आवागवन प्रयास॥ १७॥ संसकृत प्रा·

अथवर्णाश्रमधर्मकस्थूलशरीरात्पुण्यापुण्यधर्मकलिंगश रीराद्विलक्षणं परिपूर्णचैतन्यं सदृष्टांतं निरूपयति॥ ॥

श्लोक॥ यथैवादर्शमध्यस्थेरूपेंतःपरितस्तुसः॥ तथैवास्मिन्शरीरेंऽतःपरितःपरमेश्वरः॥१८॥

टीका·– यथैवेति यथैवादर्शे प्रतिबिंबिते शरीरादौ अंत र्मध्ये परितोबहिश्चादर्शोव्याप्य वर्तते· तथैवावस्थाध्यस्ते· अस्मिन्स्थूलशरीरेंतः परितश्चपरमेश्वरश्चिदात्माव्याप्यस्थि तः तथाच यत्रविश्वमिदं भाति कल्पितं रज्जुसर्पवत् इत्यादि सर्वोपि प्रकरणार्थः संक्षेपतः सूचितः॥१८॥ भाषाटी

का·– हेपुत्र जोतूकहैकि मनुतौ आकारविषे लागै· जोनिरा कार ताविषैं क्यौंकरि लगाइये· तो सुनु यथा याप्रकार आ दर्शमध्यस्थेरूपे आरसीमध्य स्थितजोहै कौनरूप्रतिबिं ब ताविषे अंतः परितस्तुसएव· अंतरमध्य अरु बाहेरचा रिहूं ओर आरसीईहै· प्रतिबिंब कहिबे मात्रहै· ज्यौं पालाकौं षंडसमुद्रमैं डारिए तौ बाहेरके बलाएकजलईहै· तया नाही

प्रकार अस्मिन् शरीरे· याशरीरविषे अंतः परितः परमेश्वर एवः भीतर बाहेर मध्य केवल एक ब्रह्म इहै· देहादिक कहिवे मात्र है· ज्यौं पाषाणशिलाविषैं नाना प्रकारको चित्र ऊकौरिकादिये तो चित्रकहिवेको है· परि केवल एक पाषाण ई है· ज्यौं भूमविषे अनेक भांति ग्रह रचिये परि एक भूमिइहै - ज्यौं पाटको वस्त्र नाना प्रकारको चित्रकरि धिन्यौ तो चित्रक हिवेको है अरु वस्त्र कहिवेको है· परि केवल पाटई है· त्यौं मन विषे ब्रह्मविचारको विचारते रहु ॥१८॥ दोहा दर्पण केप्रतिबिंबमें बाहिरभीतर कांच॥ तैसे ब्रह्मशरीरके ऊपर अंदर साच॥१८॥ संसकृतप्रां·

आदर्शदृष्टांते परिच्छिन्नत्वादिना भ्रमापत्तिः स्वाध्यस्तशरीरांतर्वृत्तित्वंच न स्पष्टमतो घटाकाशदृष्टांतेन बाह्याभ्यंतरव्यापकत्वमाह ॥१६॥ ॥श्लोकः॥ ॥एकंसर्वगतंव्योमबहिरंतर्यथाघटे॥ नित्यंनिरंतरंब्रह्मसर्वभूतगणेतथा ॥१६॥ इत्यष्टावक्रानुभवोपदेशः ॥

टीका· - एकंसर्वगतमिति यथा सर्वगतं आकाशं नित्यं· घट मगट्टोऽपि बहिरंतश्च वर्तते तथा नित्यं अविनाशि ब्रह्म सर्वभूतगणे बहिरंतश्च निरंतरं सर्वदा वर्तते एवेत्यर्थः एष त आत्मा सर्वस्यांतर इतिश्रुतेः अतश्च बोधोहमिति ज्ञानखड्गेन देहोहं भावपाशांनि कृंत्य सुखी भवेत्यर्थः ॥१६॥ ॥ इतिश्रीमहिश्वेश्वरविरचितायां अष्टावक्रटीकायां आत्मानुभवोनाम प्रथमं प्रकरणं ॥१॥ भाषाटीका· हेपुत्र निराकारकौ मनविषे यौं विचारु या प्रकार एक व्योम एकई आकाश सर्वगतं· सर्वत्रपूर्ण है अरु घट घटविषे बहिरंतः बाहेर हू भीतर हू अखंडित निर्लेप पूर्ण है· तथा नाही प्रकार ब्रह्म नित्य निराकार नित्य है·

अरुनिरंतरं अनावृत अखंडित है· सर्वभूतगणे समस्तजोदेहतिन
केबाहेरहू भीतरहू ब्रह्मांडकेबाहेरहू भीतरहू योमनमैंजानि ॥१९
दोहा व्यापकबाहिरभीतरैं जैसैंघटआकास॥तैसेसकलश
रीरमें निश्चलब्रह्मप्रकास॥१९॥ इतिश्रीअष्टावक्रनामग्रंथे
ताकीभाषाटीकासुगमप्रकाशताकोप्रथमउपदेशसंपूर्णभयो१
इति प्रथमोपदेशः श्लो·
इत्थंगुरुकृपीपूषास्वादानुभवमात्मनः॥ आविष्करोति
साश्चर्यंशिष्योनिजगुरुंप्रति॥१॥
तत्रतावच्छिष्यश्चिद्रूपात्मानुभवोपदेशमाविः कुर्वन्नेवगुरुकृ·
तोपकारख्यापनाय प्राचीनसंस्कारवशात् बाधितानुवृत्त्याप्र
ती तस्यमोहविडंबनस्यस्मरणमाविः करोति अहोइति॥
श्लो॰॥ अहोनिरंजनः शांतो बोधोहं प्रकृतेः परः॥ए
तावंतमहंकालंमोहेनैवविडंबितः॥१॥ टीका
अदृष्टस्याद्भुतस्यानुभवादहोइत्याश्चर्ये अहंनिरंजनः स
र्वोपाधिविनिर्मुक्तः शांतः सर्वविकारातीतः प्रकृतेः परोमा
यांधकारस्पर्शशून्योबोधः स्वप्रकाशचिद्रूप इत्यर्थः गुरू
पकारख्यापनाय मोहविडंबनमनुस्मरति एतावंतमिति·ए
तावंतंगुरूपदेशावधिकं कालं मोहेन देहात्माविवेकेनविडं
बित एवसांप्रतंतुगुरुप्रसादादात्मानंदानुभवोस्मीतिविव
क्षितोर्थः॥१॥ भाषाटीका·– अब अष्टावक्रज्ञा-
नोपदेशदेतेदेते तन्मय ह्वैगये· कहिवेकी जकजुपरीसोक
हिवेतें तोनरहे· परिश्रोतावक्ताकौजोभेदतातें रहित ह्वैकरि
अद्वैतवचनदेषि कहत हैं· अहोयह एक बड़ो आश्चर्यदेषहु
अहंनिरंजनः मैंतौनिरंजनहूं· यहजोकछुइंद्रीमनगोचरसो·
तोमैंनाहीं· अरुशांतः मैंतौपरमशांतरूप एजे कछुसुखदुः

खादिक तेतो कछु है एनाहीं· ए गए कहां अरु बोधः मैं तो ज्ञानरूप एक ई· यह अज्ञान गयो कहां अरु प्रकृतेः परः त्रिगुणसमये मायातें परें· यह माया तो मेरी ही सक्तिकरि वर्त्तति है अरु मेरे ही आधार है· यह विनाशवंत मैं अविनाशी परिए· तावंतं कालं अहं मोहेनैव विडंबितः एतो काल· मैंही आपनें मनतें भ्रमउत्पन्नकरि तौ विडंबित भयौ· अनेक दुःखरूपताकौ दुःखकौ देनहारो कौन·॥१॥ दोहा· अहो निरंजन शांत मैं निर्माया निर्द्वंद॥ भ्रमतें काल ज्यु बीतियो महा मोहके फंद॥१॥ सं·

पूर्वकालीनं मोहविडंबनमुक्तं संप्रति गुरुप्रसादात् मम देहात्मविवेकोऽस्तीति सोपपत्तिकमाह॥२॥ श्लोक

यथा प्रकाशयाम्येको देहमेनं तथा जगत्॥ अतो मम जगत्सर्वमथवा च न किंचन॥२॥ टीका–यथेति अहं यथा जगत्प्रकाशयामि तथैवैनं स्थूलदेहं प्रकाशयामि तथा च देहोऽनात्मा प्रकाश्यत्वात् जगद्वत् इत्यर्थः कस्तर्हि जगदादिदेहात्मनोः संबंध इत्याशंक्य युक्तिविचारादाध्यात्मिकः संबंधः परमार्थगत्या च न कश्चित्संबंधः यथा स्रुवर्णकुंडलादेः इत्याह अतो ममेति अतो दृश्यत्वात् सर्वं देहप्रमुखं जगन्मम मदीयं मय्यध्यस्तमित्यर्थः वा ऽवधारणे अथवा परमार्थविचारे किंचन किमपि देहादिकं ममन च नैव मय्यध्यस्तमित्यर्थः तदेवमध्यारोपापवादाभ्यां प्रकृतेः परो बोधोऽहमित्येवात्र स्फुटीकृतम्॥२॥ ॥

भाषाटीका·– अहो यह बडो आश्चर्य देषहु· यथा ताही प्रकार एकः अहं एनं देहं प्रकाशयामि एक मैं या देहकोप्रकाशित करतु है· यह जड मोहि करि चेतन सो होति है· मेरी

आधारहै. तथा जगत् यह सकलसंसार मोहि करि प्रकाशितहै. मेरेही आधारहै. अंतः याते मम जगत्सर्वं ज्यों मेरी देहहै त्योंही सकलसंसारउ मेरोहीहै. अथवा चन किंचन. अरु बहुरि देहऊ संसारऊ विनसि जाहि. में एक अविनाशी सदा एकरूप ताते मेरी देह अरु नमेरो संसार न हुतो अरु नरहसी. यह मेही केवल भ्रम उत्पन्न करिलियो नतरु अबहू कछु हैनाहीं ॥५॥ दोहा ज्योंप्रकास इकदेहमें तैसोसृष्टिमझार ॥ उपजतविनसतविश्वसब प्रबलब्रह्मनिरधार॥ २॥ संसकृत.
ननुलिंगदेहात्कारणदेहाद्विवेकाभावे कथंप्रकृत्यतिरिक्तात्मबोधइत्याशंक्य ततोविवेकजमात्मानुभवमाह सशरीरमिति॥३॥ ॥श्लोक॥ ॥सशरीरमिदंविश्वंपरित्यज्यमयाधुना॥ कुतश्चित्कौशलादेव परमात्माविलोक्यते॥ ३॥ टीका.- अहोइति आश्चर्येसशरीरं लिंगशरीरकारणशरीरसहितंविश्वं परित्यज्य विचारतः पृथक्सत्तयानिषिध्य कुतश्चित् शास्त्राचार्योपदेशाल्लब्धात कौशलाच्चातुर्यादेवपरमः श्रेष्ठः आत्मा मयाविलोक्यतेनान्यः परमात्मविलोकनोपाय इत्यर्थः॥ ३॥ भाषाटीका
अहो यह बडो आश्चर्य देषहु. मया कुतश्चित्कौशलात् कोनऊ एकजो प्रविनतामनकोफेर ताकरि सशरीरं इदं विश्वपरित्यज्य देहसहित यह जहांलों संसार सो सब छोडकरि मायापरमात्मा एवाविलोक्यते. जाको हम कहतहुं ते किए हम. और हमारो स्वामी सोतो केवल एकरूपई देषतुहों सो कहों तो कहों अरु अपनपो कहों तो कहों. दूजो तोहै ये नाहीं अरु यह देह आदिदे संसार गयो कहां. बडोई आश्चर्य है

नकहूं आयो नगयो· नकबूं कस्थौ नकरायो· एक कोऊ आपने मनहीको फेर भयो· ताते नानात्वदेष्यो· अरु बहुरि कोनउ मनहीके फेरकरि एकत्वदेषन लगे· ॥३॥ दोहा· देहसहितयाहिविश्वकों अबहीत्यागत पीस॥ कहाजुकोनहि कुशलतें देखन लगेजु ईस॥३॥ सं·
सशरीरंविश्वं पृथक्सत्तया परित्यज्यतत्र दृष्टांतंनिरूपयति ॥४॥ ॥श्लोक॥ ॥यथानतोयतोभिन्नास्तरंगाःफेनबुद्बुदाः॥ आत्मनोनतथाभिन्नंविश्वमात्मविनिर्गतम्॥५॥ टीका·- यथान तोयतइति यथा तरंगाः फेनाबुद्बुदाश्च नतोयतोभिन्नास्तदुपादानत्वात् यथा आत्म विनिर्गतं आत्मनःसंजातं आत्मोपादनकंविश्वंआत्मनोनभिन्नं एवंचतोयतरंगादिषुजलं यथास्वच्छमनुगतं तथास्वच्छचिद्रूपोहं विश्वस्मिन्नधिष्ठानभूतोनमत्तोऽन्यद्विश्वमित्यर्थः ॥५॥ भाषाटीका·- जोकोऊ आशंका करिहैकि अष्टावक्र देहमें संसारमें सबहीके सुनत वचन कहतेजात हैं· अरु अद्वैत करि कहत है सो कोन भांति अरु और रह्योयोंजो कहत हैकि मैं होवे नाहीं· एक परमात्माई है· सोजो है येनाहीं तो कहतु कौन है तो सुनहु· याही अर्थ पर अष्टावक्र बोलत हैकि यथा जालकारतरंगः फेनबुद्बुदा तोयतोभिन्ना एक सरोवरविषे अनेक भांतिके बड़े छोटे मध्यम तरंगः फेनबुद्बुदा देषियत है· नकहावे· कहूं जाते हो हि वैतो त्योंके त्योंहीरहे· परिद्वैतभाव कदाचित्त ऊपजे नाहीं· एकजलजानिये· चे सकल विनाशवंत· जल सत्य अरु वै कछुहै· येनाहीं· एकजलई है तेयैंयाही· प्रकार आत्माविनिर्गत विश्व आत्मनः भिन्नंन· मोहि आदिदेकरि यहजु सक

लसंसार सो एक ब्रह्मतें उपजिकरि ब्रह्मही विषैहै. अरु. ब्रह्मईहै. संसारताहीमें उपजै. ताहीमेंविनसै. ब्रह्मसत्य औरदूजोभाव हैएनहीं. ॥ ४ ॥ दोहा ज्युं देनहींदरिया वतें बुदबुदफेनतरंग ॥ तैसेआतमविश्वमय विश्वब्रह्म केसंग ॥ ४ ॥ संस्कृत.

सदृष्टांतांतरेणात्मरूपतया सर्वावलोकनंनिरूपयति ॥ ५

श्लोक ॥ ॥ तंतुमात्रोभवेदेवपटोयद्वद्विचारितः ॥ आत्मतन्मात्रमेवेदं यद्वद्विश्वंविचारितम् ॥ ५ ॥ ॥

टीका- तंतुमात्रइति स्थूलदृष्ट्यातंतुवैलक्षण्येनप्रतीयमानोपिपटोविचारितः वीक्षितःसन् यद्वत् यथातंतुमात्रोभवेत् अस्ति तद्वत् तथा इदंस्थूलदृष्ट्याब्रह्मवैलक्षण्येनापिप्रतीयमानंयुक्त्याविचारितंसन् आत्मतन्मात्रमेवआत्मसत्तामात्रात्मकमेव एतेन तंतुः स्वसत्तयापटेनुगतस्तथात्मापिस्वसत्तयाधिष्ठानभूतोविश्वस्मिन्ननुगत इत्यर्थः ॥ ५

भाषाटीका. - बहुरिताहि अर्थपरकहताहैकि यद्वत् याप्रकार विचारितः पटः तंतुमात्रएवभवेत्. वस्त्रनानाप्रकारकेहै. ऊचेंनीचे मध्यम. चित्रसहित विनेहै. एकहूगाणिएनाहीं. परिविवेककरि देषे एकसूत्रईहै. द्वैतभाव एहैनाहीं. तद्वत् ताहीप्रकार इदंविश्व यहजो कछूसंसार कहियतुहैसो सकल आत्मातन्मात्र. एवंविचारभावतें. विवेककरिदेषे. केवलएक ब्रह्मरूपईहै. द्वैतभाव एहैनाहीं ॥ ५ ॥ दोहा. आडेठाढेसूत्रकों वस्त्रकहैसबकोय ॥ तैसेव्यापकब्रह्मकोनामविश्वजगहोय ॥ ५ ॥ सं.

आत्मनैवसर्वंव्याप्तं इत्यत्रदृष्टांतंपरमाह ॥ ६ ॥ श्लोक.

यथैवेक्षुरसेक्लृप्तातेनव्याप्तैवशर्करा ॥ तथावि

श्वं मयि क्लृप्तं मया व्याप्तं निरंतरम् ॥ ६ ॥ टीका·
यथैवेक्षुरसे क्लृप्ता अध्यस्ता शर्करा तेन मधुर रसेन व्याप्तैव
सर्वातथैवमयिनित्यानंदस्वरूपे क्लृप्तं अध्यस्तं विश्वं म·
यानित्यानंदेन निरंतरबाह्याभ्यंतरं व्याप्तं तस्माद्विश्वमानंदा
त्मस्वरूपमेवेत्यर्थः तदेवमस्ति भाति प्रियमित्येवंरूपेणाह
मेव सर्वत्रावस्थित इति श्लोकत्रयेविवक्षितोर्थः ॥ ६ ॥ भा
षाटीका- बहुरि सोई अर्थ कहतहै· यथा याप्रकार शर्करा
इक्षुरसे क्लृप्ता तेन व्याप्ता एक· एक ऊषके रसके नानाप्रकार
के भेद ऊंचे नीचे मध्यम भये परि विवेक करि देषे एकरसई·
है द्वैतत्वहै नाहीं· तथा ताही प्रकार· विश्वमयि क्लृप्तं निरंतरं
मया व्याप्तं एव· यह जो सकल संसार सो मोहितें उपजि मोहि
विषें वर्ततु है· मोहि विषें लीन होतु है· तत्वतें न तो कछु हुतो·
अरु न कछु अबहू होहि· तिहु काल एक ब्रह्मई है· दूजेको भा
वई नाहीं ॥ ६ ॥ दोहा· जैसी शाकर ऊषके रसतैं जुदीन·
जान ॥ तैसी जु दीन ब्रह्मतैं सृष्टी ब्रह्मसमान ॥ ६ ॥ सं·
विश्वंचिदात्मनोभिन्नं तर्हि केनकारणेन तद्भासते केन च कार·
णेन न भासत इत्याशंक्याह ॥ ७ ॥ ॥ श्लोक ॥ ॥ आ
त्माज्ञानाज्जगद्भाति आत्मज्ञानान्न भासते ॥ रज्ज्व
ज्ञानादहिर्भाति तज्ज्ञानाद्भासते नहि ॥ ७ ॥ ॥
टीका·- आत्माज्ञानादिति आत्मनोऽज्ञानाज्जगद्भाति त
था आत्मनः अधिष्ठानस्य ज्ञानान्न भासते अधिष्ठानाज्ञाना
च्च भासते लोकप्रसिद्धदृष्टांतमाह· रज्ज्वज्ञानादिति· यथा·
रज्जुस्वरूपस्याज्ञानात् अहिः सर्पो भाति तद्रज्जुज्ञानान्न भा
सते· ॥ ७ ॥ भाषाटीका·- तौजो कोऊ आशंका करै कि·
जल अरु तरंगादिकनि विषें तो एक भाव सबही को है द्वैत एहै

नाहीं· यासंसारविषै तो नानात्वई सबदेषनहै· जोसत्यसो·
जानियतनाहीं· असत्यमों सत्यई सोजानियतहै· असंख्या
कालबीत्यौ परि अद्वैतभाव उपज्यौ· अरु क्यौंकरि रूपज्यौ·
अरु अद्वैतविषै द्वैतभावउपज्यौ सो कोनभांति उपज्यौ तोया
ही अर्थपर अष्टावक्रदृष्टांत सहित कहतहैंकि, आत्माज्ञाना
ज्जगद्भाति· देहविषै प्रविष्टभएते इंद्रियनिके अर्थनिसों संग·
करे तेमनके भ्रमतें आत्माकों भूलिकरि देहविषै अहंकार बा
ध्योकि पहमें ताहीक्षण जगद्भाति नानाप्रकारके भेदनिसों·
संसारसोभनेलग्यौ· यहतो द्वैतकी उत्पत्ति· अब अद्वैत क्यौंक
रिउपजै सो कहतहै· आत्मज्ञानान्नभासते· जबही आपुको
समुझ्यौकिरे· यहजो देहसो तो मैं नाहीं· जोयहमे होंऊ तो ए
जे कोऊ भाईबंधु कहियहि तेतौ अनेक विलाप करत संते या
कोघरतें बेगैही दूरिकरि तो अपने पवित्रव्हैवेको अनेक यत्न
करतेहै· अरु यह देह आत्माविनु कौनहू कार्यविषै तत्पर होई
नाहीं· अरु बेगही माटीमिलिजातीहै· यहजड विनाशवंत
आत्मा चेतन अविनाशी सदा सुखमय मोहीकों याकेसंग
तें अनेकदुःखनिकी प्राप्ति भई· अनेकजन्म मरन संभयेयौं
जानिकरि इंद्रियनके अर्थ करतुजोहै कर्म तिनितें रहितहो·
यं तब मन जो संकल्प विकल्प करतुहै तो सो इंद्रियनके अ
र्थनिकेनिमित्त तातें मनस्थिर भयोत्तब आपुको जान्यो·
ताहीक्षणज्यौं अद्वैत हूतो त्यौंही भयो· कौन भांतिही याप्र
कार रज्ज्वज्ञानात् अहिर्भाति अपनेही मनके भ्रमतें जेव
रीनजानी सर्प· जान्यौ तौ याकों मान्यो सर्पईहै· अरु तज्ज्ञाना
न्नभासते· जाहीक्षण जेवरीजानी· ताहीक्षण जेवरीकीजे
वरीव्हैरही· नतब कछु और हूतो न अब कछू और भयो·

याको मनई अन्यथा भयोहुतो· जबही ठोर आयो तबनिर्भ
यभयौ॥ ७॥ दोहा ज्ञानविना आतमजगत ज्ञानतैं
आतमजोय॥ जैसीदिनकीजेवरी सर्प अंधेरेहोय॥ ७॥ सं·
नन्वात्मनः अज्ञानेसति आत्मप्रकाशाभावाज्जगत्कथंभास
ते इत्याशंक्य स्वरूपचैतन्य बलादेवेत्याह॥ ८॥ श्लो
क॥ ॥ प्रकाशोमेनिजंरूपं नातिरिक्तोस्म्यहंत
तः॥ यदाप्रकाशतेविश्वंतदाहंभासएवहि॥ ८॥ ॥
टीका· -प्रकाशतइति प्रकाशोनित्यबोधः मेममनिज-
स्वाभाविकंस्वरूपं अहंततः प्रकाशात् अतिरिक्तः भिन्नो
नास्मि अतोममयदाविश्वंप्रकाशतेतदा अहंभासः मदा
त्मप्रकाशादेव भासते स्वरूपचैतन्यं चेद्भासकं तदा कथम·
ज्ञानमितिचेन्मैवं नहिस्वरूप चैतन्यमज्ञानविरोधिकिंत्व
ज्ञानसाधकमेव अन्यथाजडस्य सिद्धिरेव नस्यात्किंचात्म
स्वरूप प्रकाशादेवेतिभावः॥ ८॥ भाषाटीका·- प्रका
शोमेनिजंरूपं· यो प्रकाशमय तेजोमय· चैतन्यस्वरूप कहि
यतहै सो मेनिजंरूप मेही हौं नातिरिक्तोस्म्यहंततः मेंता
तेंन्यारो कबहू होवौ नाहीं· अखंडितहों· यदाजा प्रकाशतें वि
श्वंतदाहंभासएवहि· अरुजबयह कछु संसार प्रकाशतुहैं·
तबहू दूजो हैए नाहीं· एकमेरीही प्रकाशहै· ॥ ८॥ दोहा·
मैप्रकाशनिजरूपहों तासेंजु दोनदेष॥ जबैप्रकाशतविश्वकों
तबमोकों अबरेष॥ ८॥ संस्कृतप्रा·
स्वप्रकाशेपि मय्यात्मनि अज्ञानवशात् विश्वंभासतेइतिम
हदाश्चर्यंसदृष्टांतमाह॥ ९॥ ॥श्लोक॥ ॥ अहो
विकल्पितंविश्वमज्ञानान्मयिभासते॥ रूप्यंशुक्तौ
फणीरज्जौ वारिसूर्यकरेयथा॥ ९॥ टीका-

अहोइति स्वप्रकाशेपि मयि अज्ञानादिकल्पितं रचितम ध्यस्तं विश्वं मयि भासते अहो आश्चर्यमिदं यथाशुक्त्या दौरूप्यादिकं भासते तद्वदित्यर्थः ॥ ९ ॥ भाषाटीका-अहोयह बडो आश्चर्य मयीनाम ऐसोजो मेरो अद्वय अविनाशी आनंदस्वरूप ताविषे अज्ञानादिकल्पितविश्वभासते. अपने मनहीके भ्रमकरि यहनानात्वपरम दुःखमय. जान्यो सो परतु है सो मानो सत्यईहै परि विकल्पितुहै विकल्पित कहिए जो और वस्तु परिभ्रमतें और मानि लीजै. तहां दृष्टांत करि कहतहै रूप्यसूक्तौ. ज्यों सीपविषे भ्रमकरि रूपो कल्पिए. अरु ज्यों जेवरी विषे सर्प्प कल्पिलीजे. अरु वारिसूर्य करेयथा. ज्यों मृगतृष्णाविषे जलकल्पिलीजे ता प्रकार ॥ ९ ॥ **दोहा** ब्रह्मविषेअज्ञानतें कल्पितविश्वशरीर ॥ जैसेरूपोसीपमें अहिरज्जुरविकरनीर ॥ ९ ॥ सं-ननुमायायाविकारत्वात्तत्रैवविश्वंउत्पद्यते तत्रैवलयमेति नतुचैतन्यात्मनीतिसांख्यमतमपाकर्त्तुमाह ॥ १० ॥ ॥

श्लोक ॥ मत्तोविकल्पितंविश्वं मय्येवलयमेष्यति ॥ मृदिकुंभोजलेवीचिः कनकेकटकंयथा ॥ १०

टीका- मत्तोविनिर्गतमिति. इदंविश्वं मत्तएव विनिर्गतं मय्येव लयमेष्यति प्राप्स्यति यथामृदादौ कुंभादिकंतद्वदित्यर्थः नतत्र प्रमाणाभावइति शंकनीयंयतोवाइमानिभूतानिजायंते येनजातानिजीवंति यत्प्रयंत्यभिसंविशंतीतिश्रुतेः ॥ १० ॥ **भाषाटीका.**-यहजोविश्वसंसार कहियतहै सोहै. मत्तोविनिर्गतंमोहीतैंउपज्यो. अरु मय्येवलयमेष्यति. मोहीविषैंलीनहोसी. अरु अबही कहिवेकोंहै परिदूजोनाहीं. मेहीहौं कौनभांति. मृदिकुंभः ज्यों भूमितैं

नानाप्रकारकेपात्र उपजे अरु भूमिहीकी आधारहै भूमि हीहै दूजो हैएनाहीं अरुभूमिही विषे लीन होहि अरुज लवीचि ज्यों जलविषे अनेक लहरी ऊपजै अरु वहांही लीन होहि तौ तिहुंकाल जलईहे द्वैतनाहीं अरु कनकेक टकंयथा ज्यौं सोनेतें नानाप्रकारके भूषण उपजे तौ तिहूं काल सोनोईहे द्वैतत्व नाहीं त्यौं ॥१०॥ दोहा मोसैं निकस्यौ विश्वसब मोमेंरत्यौ समाय॥ जलतरंगघटमृत्ति का कुंडलसोनेंजाय॥१०॥ ॥संस्कृत॥ ॥

ननुब्रह्मचेज्जगदुपादानकारणंतर्हि तस्य विकारित्वान्मृदा दिवत् विनाशित्वापत्तिरित्याशंक्याह ॥११॥ श्लोक

अहोअहंनमोमह्यंविनाशोयस्यनास्तिमे। ब्र ह्मादिस्तंबपर्यंतंजगन्नाशेपितिष्ठतः॥११॥ ॥

टीका - अहो अहमिति अहो आश्चर्यरूपोहं यस्यम मसर्वोपादन भूतस्यापि विनाशोनास्ति न चोपादानत्वेसु वर्णादिवद्विनाशित्वापत्तिः स्ववर्णादिवद्विकारित्वानंगी कारात् विवर्ताधिष्ठानत्वेनैवोपादानत्वस्वीकारात् अ तएवाशेषकार्योपादनत्वाद्विनाशिनो सर्वोत्कृष्टाय मह्यं नमः ब्रह्मादिदेवतावत् प्रलये विनाशशंकांनिराकरोति ब्रह्मादिस्तंबपर्यंतं यज्जगत्तस्यनाशेपितिष्ठतः प्रलयेपि स्थितिमतोयस्यमेनाशोनास्तीत्यर्थः सत्यंज्ञानमनंतंब्रह्मे तिश्रुतेः॥११॥ भाषाटीका - अहो यह बडो आश्च र्य ब्रह्मादिस्तंबपर्यंतं जगत् अहमेव ब्रह्माको आदिदेस्था वरपर्यंत जहांलौं संसार तहांलौं एकमेही दूजो हैएनाही तातें ऐसे मोहिकों नमस्कार तोयौं कोऊ आशंका करिहै कि भलोजानो अष्टावक्रके अद्वैत दृष्टितो भई परियह को

नज्ञान जो कहत है कि मोहि कों नमस्कार आपु कों कोऊ न
मस्कार करतु है· तो सुनहु· अष्टावक्र जो बोलतु है सो आ
त्मा के स्थल है· ब्रह्म तें स्थल कछु बोलिबो चालिबो नाही
परि आत्मदृष्टि तें एक आपनपो सर्वत्र देष्यो पर्यो तब आ
त्माही के स्थल विषैं आपुही समुझत संते ब्रह्म दृष्ट भई·
तब जान्यो कि ए प्रभु बिंब हम प्रतिबिंब बिंब करे सो होई·
प्रतिबिंब सों कछू न होई· बिंब को कर्यो प्रतिबिंब विषे केव
ल आभासै तो परि वस्तु केवल बिंब तातें इनतें मे उपजि क·
रि विछुरि अनेक दुःख पाये· अब सकल दुःख छोडाइ करि
इनही मिलाया· मेरी शक्ति नाहीं तातें ऐसो जो मेरो सत्य·
स्वरूप जाते हम उपजे ता ऐसे रूप कों बारबार नमस्कार हौं
कैसो मैं जगन्नाशेपि सकल संसार ही विनशि गये· यस्य म
मे विनाशो नास्ति· यामें मेरी कछु हीनता नाही· अरु तिष्ठ
ति जगति यस्य मे वृद्धिर्नास्ति· संसार उपजे कछू मेरी वृ·
द्धि नाहीं ॥११॥ दोहा　मैं अविनाशी जगनशे मेरो मो
हि प्रणाम ॥ ब्रह्मादिक के प्रलय में शेष ब्रह्म इक धाम ॥११ सं·
नन्वात्मा सुखदुःखावच्छेदक देहत्वान्नानात्था हंकाररू
पत्वात्तत्तद्देश गमनागमनवानित्याशंक्याह ॥१२॥ ॥

श्लोक· अहो अहं नमो मह्यमेकोहं देहवानपि
॥ क्वचिन्नगन्ता नागन्ता व्याप्य विश्वमवस्थितः ॥१२

टीका· - अहो अहमिति अहो आश्चर्य रूपोहं आश्च·
र्यरूपाय मह्यं नमः आश्चर्य रूपत्वमेवाह· एकोहमिति ना
नासुखदुःखावच्छेदक देहवानप्यहमेक एव यथा नाना-
संकल्पनैः कल्पिता वच्छेदक जलोपाधिवानपि भानुरेक एवे
त्यर्थः क्वचिदिति विश्वं व्याप्यावस्थितः परिच्छिन्नाहंका

र विलक्षणोहं कश्चिदपिनगंता कुतो विनागंताचेत्यर्थः॥ १२॥ भाषाटीका. अहोयहबडोआश्चर्यहै. अहं एकः एकमैंहीहौं. याकोहम प्रभु कहतहुते. अबताहीकों. मिलिसोईभये. तातें मैं कहांतों एकमैंहीहौं अरुसोकहौंतो एकसोईहै भेदमिटिगयो. तातैं ऐसोजोमेरो सत्य स्वरूप ताकों वारवार नमस्कार देहवानपि जो देहहूमैंहौं तो हूंनिर्लेपएकई अरु देहगयेहू एकई मेरो अखंडित कोखंडनवालो कोनु. अबजो तिहुंलोकमें कदाचित देहनिहूं को गृहो छोडोतोहू मोहि जानिपरि कश्चिन्नगंतानागंताः नतो मेंहू आऊंनजाऊं हौं कैसोमें व्याप्यविश्वमवस्थितः भूमिपरज्यो मठरच्यो अरु तामें नानाप्रकारकी माटीकी मूरतिथापी तो वै कहिवेकों है. परि नमठ अरु न मूरति एक भूमिई है. मूर्तिनमें भूमि मठमें भूमि मठभीतर भूमि अरुबाहर भूमि तोवेमूर्ति जौं शतयोजनतौं जाइं तौ भूमिही परिहैं. अरु आपुहू भूमिईहै. और वाहीपरि वै चंचल भूमिमैंस्थिर. त्यौंही संसारभयो. जु मठ ताविषें अनेक देह भये. जोमूर्तिरूपमें भूमिरूप तातें जहांरहै. तहां मोहीमें है. अरु दूजे नाहीं. मैंहीहौं एविनाशवंतमें. अविनाशी एचंचलमें स्थिर ज्यों मठके बाहेर भूमि. त्यौं संसारके बाहेरमें. संसार प्रमाण वीनमें अप्रमेय अनंत अपार ॥१२॥ दोहा.

जोमैं एकहु देहमें मेरोमोहिप्रमाण॥ नकहु आवनजावनो व्यापकविश्वप्रधान॥१२॥ ॥संस्कृत॥ ॥

नन्वात्मानं निःसंगः शरीरसंसर्गितया जगद्धि धारकत्वादित्याशंक्याह ॥१३॥ ॥श्लोक॥ ॥ अहोअहंनमोमह्यंदक्षोनास्तीहमत्समः॥ असंस्पृश्यशरीरे कथं

एयेनविश्वंचिरंधृतम् ॥१३॥ टीका--अहोअ
हमिति प्रथम पदार्थः पूर्ववत् इतिकारणात् मत्समोद-
क्षो असंभाव्यकार्यविधान चतुरः कोपिनास्ति येनहेतुना
शरीरेण असंस्पृश्यधृतपिंडनोन्मुक वदसंबंधस्यैवभित्या
देर्गृहादिधारकत्वादित्याशंक्याह चिरंबहुकालविश्वस्था
वरजंगमं मयाधृतम् ॥१३॥ भाषाटीका--अहो
यह बडोआश्चर्य एकः अहमेव एकमहीहौं इहमत्समः द
क्षोनास्ति मेरेसमान प्रवीण शक्तिवंत और नाहीं काहेतें
येन मयाशरीरेण असंस्पृश्य इदं सर्वविश्वंधृतः यामेरेस्व-
रूपकरि चोवीस तत्वकरि निर्मित जोयह सकल संसार सो
विनाश्यवोह्नी आपनी केवल शक्ति हीकरि वर्त्ताइयतु है
नाहीतो चोवीसहू तत्वसौं कछु हूवेन होई तातें ऐसोजो
मेरोई सत्य स्वरूप ताकौं बारबार नमस्कार ॥१३॥ दोहा
अहोजु मैं मोकौंनमौं मोसमदक्षन और ॥ तत्वमयी सब-
विश्वकौ धरीरूप इकठोर॥१३॥ ॥ संस्कृत ॥ ॥
नन्वसंबंधस्यनजगाद्धिधारकत्वसंबंधत्वम् ॥१४॥ श्लो
क॥ ॥ अहोअहंनमोमह्यंयस्यमेनास्तिकिंच
न॥ अथवायस्यमेसर्वंयद्वाङ्मनसगोचरं॥१४
टीका-- अहो अहमिति अहो आश्चर्यरूपोहं तस्मै
मेनमः यस्यमे संबंधि परमार्थगत्या किंचन किमपि ना-
स्ति परमार्थसतोद्वितीयस्यैवाभावात् ॥ अथवा यत् याव
त् वाङ्मनसगोचरं तावत् सर्व यस्यमे ममसंबंधि मिथ्याता
दात्म्य संबंध स्ववर्णे कुंडलादिवदित्यर्थः अतएव सर्वसंबं-
धित्वा सर्वसंबंधित्वाभ्या साश्चर्यरूपाय मह्यंनम इत्यर्थः॥
१४॥ भाषाटीका-- अहोअहं अरेमेरेमें मह्यंनमः

संबंधस्यैव भित्या देर्गृहादिधारकत्वादित्याशंक्याह

एसोजो मेरो सत्यस्वरूप यातें हमन्यारेसे भयेहुते ताकौं वारंवार नमस्कार· कैसो मेरो सत्यस्वरूप· यस्यमे नास्तिकिंचन· जाकेदूजी वस्तुहैएनाहीं केवलएक आनंदस्वरूप· अरुजो कहियेंकि यहजो नाना प्रकारको संसार देषियतुहै तो यहतो दूजोहै तौ यहउच्यतेसि गोचरं· तत्सर्वं यस्यमे· मेरो सत्यस्वरूप इंद्रिय मन बुद्ध्यादिकनि तें अगोचरहे यहजो कछु इंद्रिय मन बुद्ध्यादि गोचरहे सोऊ सकल मोहीतें उपज्यौहे· अरुमोहीकरि वर्त्ततुहै· मेरीही आधारहै· अरु मइहीहों दूजोनाहीं· तातें ऐसे मेरे अद्भुत स्वरूपकोंनमस्कार॥१४॥ दोहा· अहोजुमैमोकौंनमों जाकोत्र्योरनवात॥ अथवाजिनकोसर्वमैं मनबचगोचरगात॥१४॥ सं०॥

ननुत्रिपुटीरूप संसारस्य पारमार्थिकत्वात् कथं मिथ्यातादात्म्यसंबंधोजगदात्मनोरित्याशंक्याह॥१५॥ श्लोक॥

॥ज्ञानंज्ञेयंतथाज्ञाता त्रितयंनास्तिवास्तवं॥ अज्ञानाद्भातियत्रेदंसोहमस्मिनिरंजनः॥१५

टीका— ज्ञानंज्ञेयमिति ज्ञानंज्ञेयंतथाज्ञाता इत्यादिकं त्रितयं त्रिपुटीरूप सर्ववास्तव पारमार्थिकंनास्ति· यत्रमयि इदंत्रितयं अज्ञानादनिर्वचनीयाज्ञानान्मिथ्या तादात्म्येनाध्यस्तं भाति अतएव वस्तुगत्याहं निरंजनः प्रपंचमलसंबंधशून्योस्मीत्यर्थः॥१५॥ भाषाटीका.— अहोयह बडोआश्चर्य· ज्ञानंज्ञेयंतथाज्ञाता तृतीयंनास्तिवास्तवं· ज्ञानकहीए जानिवो· ज्ञेयजो वस्तु जानिये· ज्ञाता जाननिहारो· ताहीप्रकार दर्शन कहिये· देषिवो· दृश्यजो कछु देषिये· द्रष्टा· देषणवालो· ताही प्रकार सकलजो तीनिभांतिको विस्तार सो कछुहैएनाहीं तोहैकहां· यह· यत्रइद

अज्ञानाद्भाति यासत्यस्वरूपविषै यहसकलही विविधसं
सारजान्यौई सो परतुहै परि केवल आपनैही मनकेभ्र-
मतें तौसोहमस्मि निरंजनः॥ ऐसोजो सत्य निरंजन स्वरू
पयाकी यह नाशवंत झूठीमाया विस्तरीहै ऐसोजो कहि
यतुहतौ अरु सो मैंईहौ दूजोहै एनाहीं॥१५॥ दोहा
ज्ञानज्ञेयज्ञातानहीं दर्शीदृष्टादृश्य॥ जुदेजुदे अज्ञानतें भ-
येज्ञान आकृश्य॥१५॥ ॥ संस्कृत॥ ॥

ननु निरंजनस्य कथं दुःखसंबंध इत्याशंक्याह॥१६॥ ॥

श्लोक॥ द्वैतमूलमहोदुःखंनान्यत्तस्यास्तिभेषजं ॥ दृश्यमेतन्मृषासर्वमेकोहंचिद्रसोमलः॥१६॥

टीका-- द्वैतभ्रांतिमूलक एवासौ नतु वास्तव इत्याह द्वैत
मूलमिति अहो आश्चर्यं निरंजनस्यात्मनः द्वैतमूलंदुःखं
द्वैतभ्रमोत्थंदुःखाध्यासो नतु वास्तवंदुःखमित्यर्थः दुःखा-
ध्यासमहाव्याधेः किंभेषजमित्याशंक्याह नान्यदिति अम
लो मायातत्कार्यातीतः सच्चिन्मात्रस्वरूप एकोहं एतत्प्रती
यमानं सर्वं दृश्यं जडजातं मृषा मिथ्या नपारमार्थिकमिति
बोधादन्यत्तस्य त्रिविधदुःखव्याधेः भेषजंनास्तीत्यर्थः॥
१६॥ भाषाटीका-- तहां जोकोऊ आसंका करैकि भ
ली अष्टावक्रकेतें एकदृष्टि आई अब जन्मपाइवेतें रहे प
रिजौलौं यादेहविषैहै तौलौंतौ सुखदुःखव्यापहिदेहतो
दुहिकरि निर्मित तौयाही अर्थपर अष्टावक्र कहतहैं अ-
होयह बडो आश्चर्य जोयह संसार एकमेरोई स्वरूपहै तौ
याविषैतौ अनेकदुःखतें तौ मेरोइ सत्यस्वरूपविषैं दुःख-
हैतोनाहीं यह सकल संसारहै मेरोहै स्वरूप सुखरूपई
है परिदुःखं द्वैतमूलं मनके भ्रमतें जब दूजो करिजान्यो

तब दुःख उपज्यो तौ नान्यन्तस्यास्ति भेषजं· ऐसे द्वैत महा रोग को दूजो औषध नाहीं· एकई है सो कोन इश्यूमे तन्म- यासर्वं· यह जो कछु इंद्रिय मन करि जानीयतु है सो सकल झूठो नानात्व है एनाहीं· एकोई· एक मैं ई हों कैसो· चित्· चै- तन्य स्वरूप याकी चेतना करि जड जे सकल देहादिक ते चे तनसे होत है· अरु रसः याकी शक्ति करि नाहीं कछू सो ना नाप्रकार को आभासत है· अरु अमलः याकी शक्ति करि- केवल निर्मित जे देहादिक ते निर्मल होत है· तौ ऐसो केवल एक मेरो ईश्वर रूप है· दूजो नाहीं· या औषध करि ताही क्ष- ण उपज्यौ जो हुतो महारोग ताहि निर्मूल करि सदा सुखम य होई· ज्यौं देहविषे एक कोऊ महारोग उपज्यो तब एक ही रोग के उपजे आठही पहर दुःख ही में जाहीं· बहुरि ज्यौं कौन बडे वैद्य औषध दे करि रोग दूर कस्यौ तब वाही देह में सु- खमय रहन लाग्यो· तौत्यौं अष्टावक्र के जो अद्वैत भाव प्र काश्यो तब संसार के सुख दुःखादिक नाना प्रकार के तेक- हां तें होई ॥१६॥ दोहा द्वैत दुःख के मूल कौं दूजे औ षध नाहि॥ मिथ्या देष प्रपंच सब सत्य ब्रह्म मन माहि॥१६

सं॰ नन्वयं द्वैतप्रपंचाध्यासः किंनिमित्तः किमुपादानकइ- त्याशंक्याह॥१७॥ ॥ श्लोक॥ ॥ बोधमात्रोह मज्ञानादुपाधिःकल्पितोमया॥ एवंविमृश्यतो नित्यंनिर्विकल्पेस्थितिर्मम॥१७॥ टीका- बो धेति बोधमात्रश्चिदेकस्वरूपोहमेव पारमार्थिकः मयास र्वोपादानभूतेन कर्त्राज्ञानादखंडाज्ञानरूपनिर्मिता देहंका रप्रमुखोपाधिर्द्वैत प्रपंचः कल्पितः एवंविचारस्य फलमाह एवमिति· एवंनित्यंविमृश्यतो विचार यतो मम निर्विकल्पे

निरस्तद्वैते स्वरूपचैतन्ये स्थितिः प्राप्तिर्ज्ञाता ॥१७॥ ॥ भाषाटीका·- अहो यह बडो आश्चर्य· अहं बोधमात्रः मैं तो केवलज्ञानरूप चैतन्य प्रकाशमय अद्वय परि मया अज्ञानात् उपाधिः कल्पितः मेंही आपनी समीपही तें मानसी· व्यथा कल्पित ई मनकरि मान लई तातें असंख्यकाल दुःख· पायो· तो उपाधि मिटी· क्यूं करि तो एवंनिर्विशतोनित्य या हीविचारविषें नितही नत्पर भयो जु में तातें निर्विकल्पे स्थितिर्मयं· मेरी स्थिरता भेदाभेद करिरहित अद्वैतस्वरूपविषै भई॥१७॥ **दोहा** बोधरूप अज्ञानतें कल्पित भयो उपाधि ज्ञानभयेतें नितिप्रती निर्विकल्प आराधि ॥१७॥ सं० ॥ ननु स्वरूपचैतन्यप्राप्तिरूपा मुक्तिः प्रागुक्तविचारजन्या चेत्तदा मुक्तेर्विनाशापत्तिः जन्यभावस्य विनाशत्वनियमात् विचारजन्या चेत्तदा विचाररहितानामपि मोक्षाप्राप्तिरित्याशंक्याह ॥१८॥ **श्लोक· अहो मयि स्थितं विश्वं वस्तुतो न मयि स्थितं ॥ न मे बंधोस्ति मोक्षो वा भ्रांतिः शांता निराश्रया ॥१८॥** टीका·- अहो इति· वस्तुतो मे मम बंधो नास्ति न च मोक्षोप्यस्ति नित्यं चिद्रूपत्वात् तर्हि शास्त्रविचारस्य किं फलमित्याशंक्याह भ्रांतिनिवृत्तिरेव फलमित्याह अहो मयीति अहो आश्चर्यं मयि स्थितं विश्वं वस्तुतः कालत्रयेपि मयि न स्थितमिति अतो भ्रांतिरेव शांता न तु परमानंदावाप्तिर्जनिता आत्मनः सर्वदा परमानंदरूपत्वात् कीदृशी भ्रांतिर्निराश्रया युक्तिविचाराद ज्ञानस्य नष्टत्वान्निर्मूलेत्यर्थः ॥१८॥ **भाषाटीका·-** अहो यह बडो आश्चर्य विश्वं मयि स्थितं यह सकल संसार तो मोहि विषै स्थित है· अरु वस्तुतो न मयि स्थितं नत्वदृष्टि करि देषि

येतोकछु हैएनाही· नमेबंधोस्ति· तातें जो संसारहै तो मेरे आधारहै· अरु मेरी चेतनाकरिवर्ततुहै तो मोहिकौं बंधन काहेको बांधिवेविषै कौनकीशक्ति अरुजोहैएनाहीं कछूतो मोहिको बंध काहेको तातें नमोक्षः नमेरोमोक्षः- जो बांध्योहोइ ताको मोक्षहोइ· तौयहतो सकलबंध्यो सो- जानियतहै· अरु मेंही असंख्यकाल बंध्योईसो रह्यो अब केसी भईतो भ्रांतिशांत: केवल मनकोभ्रमहुतो ओर कछून हुतो·सो शांत भयो· तोअनेककालको लग्यो· भ्रमशांतक्यौं करिभयो तो निराश्रयायह भ्रमनिर्मूल हुतो· तातेंया कोकछू बलनाहीं·मेंही चेतनसौं करिलीयो हूतो नतरु कछु हुतो इन ॥१८॥ **दोहा** दीसत मोमेंविश्वपरि विश्वनमों मैंजोय॥ बंधमोक्षमोकौनहीं भ्रांतिशांतिजबहोय॥१८

॥ सं·॥नन्वधिष्ठानस्योपादानस्यसत्वान्मुक्तिष्वपिप्रपंचोदयः स्यादित्याशंक्याह॥१९॥ **श्लोक· सशरीरमिदंविश्वंनकिंचिदितिनिश्चितम्॥ शुद्धचिन्मात्रआत्माचतत्कस्मिन्कल्पनाधुना॥१९॥ ॥**

टीका·- सशरीरमिति शरीरसहितमिदंविश्वं नकिंचित्- नसत्यं नाथसत्यमितिनिश्चितं नेहनानास्तिकिंचनेतिश्रुतेः आत्माचचिन्मात्रःशुद्धः मायामलशून्यः तत्तस्मात् कारणादधुना ज्ञानानिवृत्तौ सत्यांकस्मिन्नधिष्ठानेविश्वकल्पनास्यान्नकस्मिन्नपीत्यर्थः ॥१९॥ **भाषाटीका·**- तहांकोऊ कहैकि अबतो अष्टावक्रके अद्वैतभाव उपज्योहै परि कोनजानेकि यो सदारहैकि नाहीं तौयाही अर्थपर कहतहै सशरीरं इदंविश्वंनकिंचित् यादेहही· आदिदे जोकछु इंद्रिय मनो गोचर सोतो कछुहैएनाहीं

इतिनिश्चितः त्हृदयमोतो यह प्रतीत उपजी. अरु शुद्ध चिन्मात्र आत्मा निर्मल चैतन्य स्वरूप एक आत्मा मेरो ईश्वर रूप यह प्रतीति उपजी तो दूजो है एनाहीं मैंही हौं तौं अधुना कल्पना कस्मिन् तौं द्वैत भाव उपजै कौन वस्तु पर ॥१९॥ **दोहा** देहद्वैमनगोचरे सोतोकछुहैनाहिं॥ आतमशुद्धअखंडको किसमेकलपिनवाहि॥१९॥ सं. ननु सर्वस्य प्रपंचस्यावास्तवत्वे वर्णजात्याश्रमशरीरमप्य वास्तवमेवेतिशरीरविशेषमधिकृत्य प्रवर्तमान विधिनिषेधशास्त्रमप्यवास्तवंस्यात् तथाच तद्बोधितस्वर्ग नरकयोरप्यवास्तवत्वात्स्वर्गादावनुरागो नरकादिभ्यश्च भयंनस्यात् किंच शास्त्रबोधौ बंधमोक्षावपि वास्तवौन स्यातामित्याशंक्येष्टापत्त्या परिहरति॥२०॥ **श्लोक॥ ॥शरीरस्वर्गनरकौ बंधमोक्षौभयंतथा ॥कल्पनामात्रमेवैतत् किंमेकार्यंचिदात्मनः॥ २०॥** **टीका-** शरीरमिति शरीरादिक मेतत्कल्पनामात्रमेवचिदात्मनः सच्चिदानंदरूपस्य मम एतैः शरीरादिभिः नकिमपिकार्यसाध्यंविधिनिषेधादिकतु-अविद्यावंतमेवाधिकृत्यप्रमाणमित्यर्थः॥२०॥ ॥
भाषाटीका- शरीर यह मेरी देह स्वर्गनरककौ याकर्मतें स्वर्गप्राप्ति यातें नरकप्राप्ति बंधमोक्षौ. यातें मोहिकौं बंधन यातें छूटिबौ. भयाभयौ यातें मोहिकौं भय यातें निर्भय. एतत्कल्पनाकार्यमेव. एजेनानाप्रकार के भेद ते सकल योंही वृथाही आपने मनही करिलीए परिहै कछुनाहीं तातें चिदात्मनः मैं किंकार्य चैतन्य स्वरूप परमानंद स्वरूप सत्यअद्वैत ऐसोजोमैं ताको कोनवस्तुकी

कल्पना उपजै कछु चाह होई· अरु मोहि छोडि कछु दूजो- होइ तो ऊपजै इत्यर्थः ॥२३॥ दोहा॥ देहस्वर्ग अ रु नर्क है बंधमोक्ष भय आदि॥ यह सभ कल्पन ते भये ब्र ह्म शुद्ध निरुपाधि ॥२०॥ संस-
स्वर्गादिभिः किं मे कार्यं इति प्रागुक्तं अथेहलोके नापि मे का र्य नास्तीत्याह॥ २१॥ ॥श्लोक॥ अहो जनसः मूहेपि न द्वैतं पश्यतो मम॥ अरण्यमिव संवृत्तं क रतिं करवाण्यहम्॥२१॥ टीका·– अहो जनेति न- द्वैत पश्यतो मम अहो इत्याश्चर्ये जनसमूहेपि अरण्यमि व संवृत्तं जातं तस्मात् अहं मिथ्यात्वे क्वरतिं प्रीतिं करवा णि न क्वापीत्यर्थः॥ २१॥ भाषाटीका·– अहो यह बडो आश्चर्य जनसमूहेपि पश्यतो मम तु मनः अनेक ना नाप्रकारके देहधारी जे तिनहि देषत हूं संते मेरे कहूं द्वैतभा वनाहीं तो देषौ नानाप्रकार परि अद्वैत भाव है सो कौन भां- ति तौ अरण्यमिव संवृत्तं ज्यों वनमें अनेक वृक्ष है परि वन कों यह भेद नाहि की येकछु नानात्व है और हे वन यौंही जानतु हौं कि यह जो कछु है सो मे ही हों· ज्यों देहमे अनेक अंग है परि यौं जानियतु है कि यह एक देह ई है दूजो कछु नाहीं तातें क्व रति कर वाण्य है जो एक मे ही हो प्रीति कोन सौं करो कोन सों द्वेष करो जो तो कोऊ होई॥२१॥ दोहा देखो जग संसार मैं द्वैत न दीषै मोय॥ ज्यूं वट वृक्ष समूह मै बन कौं द्वैत न होय॥ २१॥ संस्कृत·
ननु शरीरस्याहं ममतास्पदतया अनुरागविषयत्वात् अ हंकारस्याथ हं तास्पदतया अनुरागविषयत्वात् तत्र स्पृहा स्यादित्याशंक्याह॥ २२॥ ॥श्लोक॥ नाहं दे-

होनमेदेहोजीवोनाहमहंहिचित्॥ अयमेवहि मैबंधआसीद्यज्जीवितेस्पृहा॥२२॥ टीका॥ नाहमिति अहंदेहोन जडत्वात् नापिमेदेहः ममनिःसंगत्वात् जीवोहं कारोनाहं अकर्तृत्वात् कस्तार्हित्वं इत्याशंक्याह अहंचिद्धिति चित्स्वरूपमेवाहमित्यर्थः कुतस्तर्हि विवेकिनामपिजीविते स्पृहा इत्याशंक्याह अयमेवहीति याजीवितेस्पृहा अयमेवमेबंधः प्रागासीत् जीवनार्थंहि पुमान् स्ववर्णहरणादिकमपि करोतीति जीवितेच्छा बंधहेतुत्वादिदानींतु सच्चिदानंदानुभवशालिनो ममासंगस्यप्राणानुषंगबंधन रूपेजीविते पिस्पृहानास्तीत्यर्थः॥२२॥ भाषाटीका - अहो यह बडो आश्चर्य अहं देहोन मैंतो देहनाहीं अरुनमेंदेहः मेरेतो देहई नाहीं मैंतोनिराकार अरु अहजीवोन मैंतोजीवऊनाहीं जीवकोंनकहिएजो परवस मायाकेवस होइ तोंहीयातें अहंचित् यह मायातो मेरीशक्तिवर्तिहिहै यहजुमै चैतन् ज्यों ज्यों मैनचाऊं त्यों त्यों नाचैतातें मोहि परिमायाकी कोनशक्ति तोएतेदिनज्यौ बध्यो सोरह्यो सोकहातोहि यहमें निश्चय ठहरायो कहा अयमेव से बंधः मोहिसों यह बंधनहे कोन यत्मेजीवत्ते स्पृहा आसीत् मेरोजन्मभयो मे एतनेदिननिको भयो मृत्यु निकट आई कछू जन्म ऐसोहोइ जातें बहुतदिन जीइत्यर्थः॥२२॥ दोहा मैंअदेहदेहीनहीं मेंहूब्रह्मप्रकाश॥ मरूंनहींजीवोबहुत बंधनयेहीतास॥२२॥ सं॥ अथस्वस्य सर्वाधिष्ठानत्वंपश्यन्नाह॥२३॥ श्लोक॥ अहोभुवनकल्लोलैर्विचित्रैर्द्राक्समुत्थितं॥

मय्यनंतमहांभोधौचित्तवातेसमुद्यते ॥ २३ ॥
टीका॰ - अहोइति आश्चर्यं॰ अनंत महाभोधौ मयि-
चित्तवातेसमुद्यते समुत्पन्नेसति विचित्रैर्नानाविधैर्भुव
नकल्लोलैः भुवनरूपैस्तरंगैर्द्राक् अत्यर्थसमुत्थितं उद्
योलब्धस्तथा वारिधेस्तरंगाइव मत्तो भुवनानिवस्तुतो॰
अभिन्नानिनसंतीत्यर्थः ॥ २३ ॥ भाषाटीका॰ - अहो
यह बडोआश्चर्य॰ मयि अनंत महाभोधौ॰ मेजो हौं अ॰
पार परम समुद्र रूप ताविषैं भुवन कल्लोलैर्विचित्र द्राक्
समुत्थितं॰ चित्रविचित्र नानाप्रकारके जे भुवन तेई भएजो
लहरि तेस्वभावहीतें उपजी हैं॰ सो काहेतें उपजी हैं॰ चित्त-
वातेसमुद्यते॰ औरऊ जे लहरि उठती हैं ते पवन करि उठ
ती हैं॰ एचित्तऊ भयोजो वायु तातें उठी ताकौं चितवन करि
ऐसो है नाहीं परि चित्तके भ्रमतें उठि लागे ॥ २३ ॥ दो
हा ब्रह्मअनंतसमुद्रमें चित्तवायुसमजोय ॥ तातैंल-
हरतरंगज्यू भुवनलोकअजहोय ॥ २३ ॥ संस्कृत॰
प्रारब्धक्षयदशामनुवदतिमयीति ॥ २४ ॥ श्लोक॰
मय्यनंतमहांभोधौचित्तवातेप्रशाम्यति ॥ अभा
ग्याज्जीववणिजोजगत्पोतोविनश्वरः ॥ २४ ॥ ॥
टीका॰ - मयीति अनंत महांभोधौसर्वव्यापकचित्समु
द्रेमयिचित्तवाते संकल्पविकल्पशालिनि मनोमारुतेप्र
शाम्यतिसति संकल्पादिरहितेसति जीववणिजो जी॰
वात्म लक्षण वाणिज्यकर्त्तुः अभाग्यात्प्रारब्धक्षयाज्ज
गत्पोतः शरीरादिनौकासमूहः विनाशशीलः विनाशवा
न्भवतीत्यर्थः ॥ २४ ॥ भाषाटीका॰ - चित्तवायुकेउ
पजे संसार तरंगे उपजी अबशांतक्यों करिहोहि तो मय्य

नंतमहांभोधौचित्तवाते प्रशाम्यति॰ मैंजो हौं अपार परम समुद्ररूप ताविषें जब चित्तरूपु पवनसो शांत होइ तब आ भाग्याजीववनिजः कौनहू एक परम भाग्यतें व्यापारी जे सकलजीव ते संसारकी पूंजीतें॰ रहित होहिं जो पूंजी होइ कछु सोदा करने होई सो हाटआवे इत्यर्थः ॥२४॥ दोहा॰
चित्तशांतभयो ब्रह्म में सिंधूमाऊ बयार ॥ जगतविनस्वरह्यो तज्यूं निर्धन वणिक ब्योहार ॥२४॥ संसकृत
अथबाधितानुवृत्यास्वस्मिन्सर्वजीवव्यवहारंपश्यन्नाह ॥२५॥ ॥श्लोक॥ ॥ मय्यनंतमहांभोधावाश्चर्यंजीववीचयः ॥ उद्यंतिघ्नंतिखेलंतिप्रविशंति स्वभावतः ॥२५॥ ॥ इत्यष्टावक्रप्रकरणेशिष्योल्लासः ॥२॥ टीका॰ – मयीति आश्चर्यंनिःक्रिये निर्विकारे मयि अनंत महांभोधौ जीवा एववीचयः तरंगाउद्यंति अभिव्यक्ताभवंतीवमिथः परस्परं घ्नंति ताडयंतिइवशत्रुभावाध्यासात् अन्येचमिथः खेलंतीवमित्रभावाध्यासात् अविद्या कामकर्मक्षयेसतिच मयिविशंतीव कस्माद्‌विद्याकामकर्म स्वभाववशात् उत्पत्त्यादिकं प्राप्नुवंतिस्वभावतः स्वस्यचिद्रूपस्यांशरूपेण स्वभावतः तत्रैव प्रविशंतिघटाकाशादयइव महाकाशेइतिविवेकः ॥२५॥ ॥ द्वितीयेस्मिन्प्रकरणेशिष्येणानुभवस्थितिः ॥ निवेदितागुरोस्तुष्ट्यै बव्हाश्चर्यपुरःसरा ॥ २॥ ॥ ॥ ॥ इतिश्रीमहिम्नेश्वरविरचितायां अष्टावक्रटीकायां शिष्येणोक्त आत्मानुभावोल्लासःपंचविंशतिः॥ २॥ ॥
भाषाटीका॰ – यहतो बडो आश्चर्यहै॰ मय्यनंत महांभोधौ॰ मेहीजो अपारबडोसमुद्र ताविषैंजीववीचयः एस॰

कल प्राणिभए जो लहरि ते स्वभावतः उद्यंति खेलंति घ्नंति प्रविशंति· ज्यों समुद्र विषे स्वभाव हीतें लहरि कल्लोल करै त्यों स्वभाव हीतें उठती है अरु एकसों एक लगती है· क्षोभही प्राप्त होतीहै· अरु आनंदित होतीहै· अरु मोही मिंली नहोतीहै· कबहु अंतर है एनाहीं· सदा उपजै वर्ते नष्ट होहि मैं समुद्ररूपन तौ उपजाऊं न विनाशो अरु न उनके उपजे मेरी वृद्धि न विनसे· हानि अरु न उनकों दूजी जानो ॥२५॥ ॥
दोहा ब्रह्मानंदसमुद्रमें इश्वरजजीवतरंग ॥ उपजतमरतस्वभावतें स्वलतज्यूं जलसंग ॥२५॥ ॥ ॥
इतिश्रीअष्टावक्रभाषाटीकासुगम प्रकाशताकोद्वितीयउपदेशसंपूर्णभयो ॥२॥ ॥श्रीरस्तु॥ ॥
तृतीयोपदेशप्रारंभः ॥
श्लोकः·शिष्यानुभवपीयूषज्ञानेपिकरुणावशात् ॥ तद्विज्ञानपरीक्षार्थंशिष्यमाहगुरुः पुनः ॥१॥
विज्ञातानुभवमपिस्वशिष्यं व्यवहारस्थितं दृष्ट्वा तद्विज्ञानपरीक्षार्थं तद्व्यवहारस्थितिमाक्षिप्यात्मानुभवशालिनां स्थितिमुपदिशति ॥१॥ श्लोकः ॥ अविनाशिनमात्मानमेकं विज्ञाय तत्वतः ॥ तवात्मज्ञस्य धीरस्य कथमर्थार्जने रतिः ॥१॥ टीका· – अविनाशिनमिति हेशिष्य अविनाशिनं निर्विकल्पकं सत्ताशालिनं· कालतो व्यवच्छेदशून्यं आत्मानं देशतो व्यवच्छेदशून्यं एकं वस्तुतो व्यवच्छेदशून्यं चित्स्वरूपं विज्ञाय निदिध्यास्य· तत्वतः आत्मज्ञस्य अत एव धीरस्य तव अर्थार्जने व्यवहारिकार्थसंग्रहे कथं रतिः प्रीतिर्लक्ष्यते इत्याक्षेपः ॥१॥ ॥
भाषाटीका· – वैद्य अरु गुरु अरु मंत्री इत्यादिक प्रिय-

वक्ता नचाहिये. जो रोष करि उपदेशहि तौ मनविषे उपदेश लगे. तातें अष्टावक्र आपुकौं समुझिकरि श्रोतावक्ताके भेदसौं आक्षेप करि बोलत है. अरे तत्वतः आत्मानं एकं अविनाशिनं विज्ञाय. एतौ ज्ञान पाईहूं करि आत्माकौं एकई जानिकरि अविनाशी जानिकरि तबे आत्मज्ञस्य तू बडो विवेकी परम आत्मज्ञानी. धीरस्य धीर्यवंत ताके अर्थार्थने रतिकथं बडुरि जो इंद्रियनिके अर्थ उपजाइवे विषें प्रीति होई सो क्यों. एतो अज्ञाननिके कायरनिके काज है. जानिकरि अविनाशी आनंदमय निर्मल चेतन सो विनाशवंत दुःखमय अतिअशुद्ध जड तिनकी वांछा क्यों करे यौं न बूझिये. ॥ १ ॥ दोहा आतम एक अखंडकौं जानत त्वमनजीह्नि ॥ तोसे ज्ञानी धीरकौं क्यौं विषयनिमें प्रीति १ ॥ ॥ नंनु ज्ञाने सति विषयसंग्रहः कथमनुपपन्न इत्याशंक्य विषयप्रीते रात्माज्ञानमूलत्वं सदृष्टांतं सोपपत्तिकमाह ॥ २ ॥ ॥ श्लोक ॥ ॥ आत्माज्ञानादहो प्रीतिर्विषयभ्रमगोचरे ॥ शुक्तेरज्ञानतो लोभो यथा रजतविभ्रमे ॥ २ ॥ टीका - आत्माज्ञानादिति अहो इति संबोधने हे शिष्य विषयेभ्रमगोचरे विषयेया प्रीतिः सा आत्माज्ञानादेव भवति नतु ज्ञानात् ह्यनिरिक्तविषयाणांबाधादिति भावः अत्र लोक प्रसिद्ध दृष्टांतमाह. शुक्तेरिति. यथा रजत विभ्रमे सति शुक्तेरज्ञानतो लोभः पामराणामपि अनुभवसाक्षिक इत्यर्थः विषयभ्रमगोचर इत्यत्र विशेषणस्यापि पूर्वनिपातो विशेषणविशेष्य बहुलमित्यत्र बहुलग्रहणात् आम्रवृक्षवत् आत्माज्ञानादितिपदं विषयभ्रमगोचरे इत्यनेनापि संबध्यते ॥ २ ॥ भाषाटीका.

अरेपुत्र, तूं एतौज्ञान पायकरि न्यारेभये· आश्चर्य क्यौंनाहीं देषतु· विषयेप्रीति· आत्माज्ञानाज्जयते· जब आपुकौं नसमुझै या जड देहकौं आपुकरि जानै तब इंद्रियार्थनि विषैं प्रीतिकरै परिहै कैसे इंद्रियार्थ भ्रमगोचरे· केवलभ्रमहीकरिजानेसें परतहैं कछुनाहींनो जो कहैंकि जोहैए नाहीं सोजानिये क्यौं तो सुनि यथा प्रकारे· शुक्तेरज्ञानतोरजत विभ्रमें लोभो जायते· ज्योदूरितें देषी सीपविषेरूपेकौ भ्रमउपज्यो· अरु आपको लाभ मानीलीयो जो भलैकरैसीपजानै तो सकल संसार रूपो करिकहै· पीरे याके मन कदाचित रूपेकी बुद्धिनहोई· यह एक सकलसंसारको भ्रम्यौजानै यौं इंद्रियार्थजानु ॥ २॥ ॥

दोहा· आतमकेअज्ञानतैं प्रीतीविषयनमाऊ॥ ज्यूं रूपाके लोभतें सीपनजाणीसांऊ॥ २॥ संस्कृत·

अज्ञानमूलाविषयप्रीतिरिति प्रागुक्तं अथ सर्वाध्यस्ताधिष्ठानतया त्मज्ञानेसतिविषयेषु न प्रीतिसंभवइत्याह ॥३॥ ॥ श्लोक॥ ॥ विश्वस्फुरतियत्रेदं तरंगाइवसागरे॥ सोहमस्मीतिविज्ञाय किंदीनइवधावसि॥ ३॥ टीका· - विश्वस्फुरतीति सागरे तरंगाइव यथापृथक्सत्तारहितास्तद्वत् यत्रेदं विश्वं पृथक् सत्तारहितंस्फुरति सत्पदार्थोहमस्मीति विज्ञाय साक्षीति दीनइव ममेदंभवत्विति तृष्णाकुल इवकिं धावसि कथं धावसीत्याक्षेपः॥ ३॥ भाषाटीका· - अरेपुत्र यासरूपविषे यहसकलसंसारवर्त्ततुहै कौनभांति· सागरे तरंगाइव· समुद्रहीतें उपजि समुद्रहीमेंज्यौं नानाप्रकारकिलहरि वर्त्तें· सोहम्अस्मी इति विज्ञाय· ऐसोस्वरूपतो मैंहींहौं·-

योजानिकरि किंदीनइवधावसि· दीनूसोव्हैकरिक्यों अ
नेकठौरनिमनभ्रमावतुहै॥३॥ दोहा विश्वईश
मैंऊर्मिमिलिलै ज्यूंतरंगदरियाव॥ सोमेहूयइजानिकै।
क्योंव्हैदीनस्वभाव॥३॥ संस्कृत· तदेवंश्लो·
कत्रयेणज्ञानिनिशिष्येदृश्यमानविषयव्यवहारमाक्षिप्ये
दानींसर्वज्ञादिषुविषयव्यवहारशिष्यपरिक्षार्थगुरुरा
क्षिपति॥४॥ ॥श्लोक॥ श्रुत्वापिशुद्धचैत
न्यमात्मानमतिसुंदरं॥उपस्थेत्यंतसंसक्तोमालि
न्यमधिगच्छति॥४॥+ टीका·-श्रुत्वापीति शुद्ध
चैतन्यंश्रुत्वापिगुरुमुखाद्वेदांतवाक्यतः साक्षात्कृत्वापि
उपस्थेसमीपस्थेविषयेत्यंतसंसक्तः सन्नात्मा कथंमालि
न्यंमौढ्य मधिगच्छतिप्राप्नोति अस्यप्रकरणस्यशिष्यजि
ज्ञासार्थमाक्षेपमुद्रयैवप्रवृत्तत्वाद्यत्राक्षेपवाचकपदंनदृश्य
ते· तत्रतदध्याहर्तव्यं॥४॥ भाषाटीका·-अरेआ-
त्मानंशुद्धचैतन्यंअतिसुंदरंश्रुत्वापि· आपुकोपरमनिर्म·
ल चैतन्यस्वरूपमहासुखमय परमप्रकाशमय·सुनिहुंक
रिउपस्थे अत्यंतसंसक्तः उदरकुंडविषे अरुजो निशाकट·
विषे परमप्रीतिमानि आसक्तव्हैकरि मालिन्यं अधिगच्छ
ति· बडीजोमलिन ताका तरयतापरमअज्ञानदशाताहिअ
जहुदौरिदौरिगहतुहै॥४॥ दोहा सुंदरचेतनशु
द्धघन सुनिकरहोहिप्रवीन॥ इनिविषयनकेसंगतें काहे·
होतमलीन॥४॥ संस्कृत· पुनरप्याश्चर्यमुद्रया
क्षिपति॥५॥ श्लोक· सर्वभूतेषुचात्मानसर्वभू
तानिचात्मनि॥ मुनेर्जानतआश्चर्यममत्वमनुव
र्तते॥५॥ टीका·-सर्वभूतेष्विति सर्वभूतेषुब्रह्मा

द्विस्थावरांतेषुआत्मानमधिष्ठानभूतंजानतःसर्वभूतानि चात्मनिरज्जौभुजंगवदध्यस्तानिजानतोमुनेः विषयेषुममत्वमनुवर्त्ततइत्याश्चर्यं असंभाव्यंनहिशुक्तिकायामध्यस्तरजतमिति जानतस्तत्रममत्वंसंभवतीतिभावः ॥५॥ भाषाटीका· आत्मनिआत्मानंविज्ञाय निज स्वस्वरूप ब्रह्मविषे आपुकोजानिकरि अरु सर्वभूतेषु-आत्मानं समस्तभूतनिविषे सोईस्वरूप जानि करि अरु सर्वभूतानि आत्मनि· समस्तभूत ताही स्वरूपविषे समुद्र अरु तरंगनिके दृष्टांत करि एकै ई जानिकरि मुनेःज्ञानतआश्चर्यं ममत्वं अनुवर्त्तते· महापुरुषके आश्चर्यसहित ममतावर्ततहै आश्चर्यजो केवल एकसत्यस्वरूप-सो नानाप्रकारकोसोजानियतुहै॥५॥ दोहा· सर्वभूतमयब्रह्महै ब्रह्मभूतमयजान॥ इहरज्जुयहअज्ञानतैं· अहतामामतामान॥५॥ ॥ संस्कृत॥ ॥

श्लोक· आस्थितःपरमाद्वैतंमोक्षार्थेपिव्यवस्थितः॥ आश्चर्यंकामवशगोविकलःकेलिशिक्षया॥६॥ टीका· – किंच आस्थित इति आस्थितःपरमं सजातीयविजातीयस्वगतभेदशून्यमद्वैतमास्थितःसाक्षादनुभवंतथामोक्षस्वरूपोर्थः सच्चिदानंदात्मातत्रव्यवस्थितः तदेकप्रवणोपिकामवशगः सन् केलिशिक्षया नानाक्रीडाभ्यासेनविकलोदृश्यत इत्याश्चर्यम्॥६॥ ॥ भाषाटीका· – अरेमोक्षार्थेपि व्यवस्थितः परमाद्वैतआस्थितः जिनिसमस्तस्थूलसूक्ष्ममायात्यागीहै·परिमोक्षहूकीवांछाहैतो ज्ञानको लेशनाहीं·परममायाहीविषे प्रवर्त्तु होतुहै· आपुहीकरि आपुको बंधन करतेदेखियतुहै

कामवशगोकेलि शिक्षयाविकलः आस्थितः तौजौविष यानिविषे रमणीयबुद्धिकरतुहै तौ आश्चर्य्य यहबडोआ श्चर्य देषियतुहै कौनसोकहियै ॥६॥ दोहा. ज्ञानक थैअहैलको करतमोक्षकीआस ॥ देषोमनवसकामतें बु द्धीबिकलप्रयास ॥६॥ संस्कृत ॥श्लोक॥
उद्भूतकामदुर्मित्रमवधार्यातिदुर्बलः ॥ आश्चर्यंका ममाकांक्षेत्कालमंतमनुश्रितः ॥७॥ टीका.- उ द्भूतमिति उद्भूतंकामभूज्ज्ञानं दुर्मित्रंज्ञानस्यात्यंतवैरिणं अवधार्यनिश्चित्य अतिदुर्बलः अतिशयेनज्ञानबलशून्य इवज्ञानीकामंविषयं आकांक्षेत् कामंवांछति इदमाश्च र्यं अंतंकालं अनुसमीपेश्रितः नहिसमीपवर्त्तिन्यंतका लेसति विवेकिनोविषयतृष्णायुक्तेति भावः ॥७॥ ॥ भाषाटीका.- देषहु ऐसोजो अपनो अविनाशीसुख रूपसो उद्भूतज्ञान दुर्मित्रं अवधार्य उपज्योजो अज्ञान बडोईशत्रु ताहि प्राप्ति ह्वैकरि भूलिकरि अतिदुर्बलः महा दीन दुर्बल ह्वैकरि कामं आकांक्षेत् अनेककामनावांछ तुहै कैसो कालं केतं अनुश्रितः कामनाकरतहीमात्र का लके मुखमें परिकै मृत्युही प्राप्त होतुहै कामनाकालको मुखहै तोआपुहिते कालके मुखमे दौरि दौरि परतहै यहबडो आश्चर्य ॥७॥ दोहा. प्रगटभयो अ ज्ञानतब करतकामनाधाय ॥ देषोदुर्बलहोयकै परत कालमुखजाय ॥७॥ संस्कृत इहामुत्रविर क्तस्येति ॥८॥ ॥श्लोक॥ इहामुत्रविरक्त स्यनित्यानित्यविवेकिनः ॥ आश्चर्यंमोक्षकामस्य मोक्षादेवविभीषिका ॥८॥ टीका.- इहेति ऐहि

कामुष्मिक भोग विरक्तस्यनित्यमात्म तत्वमनित्यं शरीरा
दिकं तद्विवेकिनो मोक्षः सच्चिदानंदस्तत्र कामोंतःकरणं
यस्य एवंविधस्य ज्ञानिनोपि मोक्षादेव असद्रूपतनुधनवि
योगादेव विभीषिकाभयं दृश्यते नहिस्वप्नदृष्टतनुधननाशे
पि जाग्रतःभयं क्वापि दृष्टमितिभावः ॥८॥ भाषाटी
का॰ - इह अमुत्रविरक्तस्य॰ जिनिसमस्तविभवविषें विर
क्त मानि त्याग कर्योहै॰ परम इंद्रिय वसकरिहै॰ मन वश क॰
र्योहै॰ अरु आगें कोनऊ वांछा नाहीतो क्यों वांछा नाहीं
नित्यानित्यविवेकिनः मैं आत्माअविनाशी औरजो कछू
सो सकल विनाशवंत तातें कहा वांछियें॰ अबसो करियें॰
जातें सकलतें निवर्त्त हूंजीये यों जानिकरि सबहीतें विरक्त
हैपरि मोक्षकामस्य॰ मोक्षहूकी वांछाकरतुहै तोहू मो॰
क्षादेवविभीषकाः आश्चर्य मोक्षहूविषै द्वैतभावजोनिभ
य मानतुहैजो महापुरुष ज्ञानवंत ताके वाकी मोक्षहूकी
कामनादेषि परम आश्चर्य आवतहै॰ वाकोपरम अज्ञानी
मानतहैंकिरेजो एकई ब्रह्मस्वरूप दूजोहै एनाहीं तोमो
क्षसो कहने मात्रहीनमोक्षहै॰ नबंधनहै एकसत्यस्वरू
पजोहैए औरकछुहैएनाहीं तोवांछाकैसी॰ ॥८॥ ॥
दोहा आतमनित्यविचारतें मोक्षधामधनत्याग ॥ आ
सकरैफिरिमुक्तिकी सोइअज्ञानअभाग्य ॥ ८ ॥ सं
स्कृत ॥ एवमाक्षेपमुद्रयापूर्वमुक्त्वा अथज्ञानिनस्तो
षरोषावनुचितावितिअकुंठतोनिरूपयति ॥ ९ ॥ श्लो
क॰ धीरस्तुभोज्यमानोपिपीड्यमानोपिसर्व॰
दा ॥ आत्मानंकेवलंपश्यन्नतुष्यतिनकुप्यति ॥
॥ ९ ॥ टीका॰ - धीरइति धीरोज्ञानीलोकैर्विषयान्

भोज्यमानोपितथानिंदादिनापीड्यमानोपिसर्वदा आत्मानं केवलंसुखदुःख भोगादिरहितं पश्यन्नतुष्यतिनच कुप्यतितोषरोषहेतूनां केवलात्मनि असंभवज्ञानादितिभावः॥ ९॥　भाषाटीका· - धीरपुरुषजोहैज्ञानी सो कैसोहै पूज्यमानोपि· एकनिकरिअनेक भांतिकी सेवाकरियतिहै परि नतुष्यति कदाचित् नयाके सेवातें सुखउपजैं· अरुन आपनो सेवकजानियाको संतुष्टहोई· अरु सर्वदा पीड्यमानोपि नकुप्यति·सदैव एकनिकरि अज्ञानतें अनेकपीडा उपजाइयतीहैं· कदाचित् याके मनमें दुःखनहोई· अरुनवापर कदाचित कोपदृष्टि मनमों आनैं· तौजो कदाचित कहैकि भलो सुखदुःखतौउनसमान करै अरु दुःखदायकऊहै तौ वाहूपरकोप नकरै· यहजानो साधुकी शांतता बडोई लक्षणहै· परियहजो सदैव सेवाही विषैरहै· अरु यों वांछैकि भाई· यह साधु मोपर क्योंही करि दयाकरैतौ मेरो भलो होई· तौयह साधुयाके भावकरि प्रसन्न नहोइ तौ यह कौन युक्तहै· त्यौंहि दुःखको देनहारो· त्यौंही सुखको देनहारो तौ साधुसेवा करै· कहा फल अरु साधुको कौनज्ञान तौसुन· आत्मानं केवलं पश्यन् याके एकई आत्मदृष्टिउपजी·सोई याघटमें देषै सोई औरघटनिमैं देषै· तातें आपुको कहा कोपकरै· कहा प्रसन्नहोई· ज्यों मुखसों भोजन करिये अरु तृप्त होजियै तौ कहा मुख पर·प्रसन्न हूजिये· मुखको ऊ औरहैकि तूं एकई आपुईहै· अरु आंषिविषै कदाचित अंगुली लगीतौ कहा अंगुली परकोप करिये· कोऊदूजोहै·कितूं आपुहीहै· तौसाधुकी तौ यों दृष्टि इनकी कहावात सो सुनदेष फल

फलशुभाशुभको देनहारो केवल एक आपने मनकोभा वहै· दूजोनाहीं· जहांजेतनी शुभाशुभ कोऊकरतुहै त· हांतेतनीसो आपुहीको करतुहै· ज्यौंहीमनकरि मानिले ई ज्यौंहीहोई· ज्यौं आरसी थापिकरि ज्यौंहीज्यौंकरै त्यौं हीत्यौं प्रतिबिंबमे होई· त्योंमन आरसीमे ज्यौंहीज्यौं भाव अभावआने त्यौंहीत्यौं आपुहीहोई· इत्यादि॥ ९॥ दोहा· ज्ञानीतोसुखदुःखदये सुखदुःख- समकरलेत॥ मुखभोजनदृगअंगुली ज्यूंनहिहैतकु हेत॥ ९॥ संस्कृत किंचतोषरोषहेतूनांस्तु· तिनिंदादीनांशरीरधर्मत्वात् शरीरस्यचात्मभिन्नत्वेना नुसंधानात्कथंज्ञानिनस्तोषरोषाबित्याह॥ १०॥ श्लो क·. चेष्टमानंशरीरंस्वं पश्यत्यन्यशरीरवत्॥ सं स्तवेवापिनिंदायांकथंक्षुभ्येन्महाशयः॥ १०॥ टीका· - चेष्टमानमिति स्वशरीरं आत्मभिन्नचेष्टाश्र- यत्वात् अन्यशरीरवत्इतियः पश्यतिसमहाशयःसं स्तवेस्तुतौ अपिच निंदायांकथं क्षुभ्येत् कथंतोषरो षरूपांविक्रियां व्रजेत् इत्याक्षेपः॥ १०॥ भाषाटी का· - महाशयः परमज्ञानवंतजो महापुरुष सो संस्तवे चापिनिंदाया अनेकभांतिकी स्तुति अरु अनेक भांति की निंदाहूविषै सुखदुःखादिकनिविषै कथंक्षुभ्येत् क्यौंक्षोभही प्राप्त होईतौ जो कहैकिजौं लौं देहविषैं है· तौलौं तो थोरोबहुत क्षोभ होईनहोई· सोक्यौं तो सुनु चेष्टमानंशरीरंस्वं अन्यशरीरवत् पश्यति· आइवे जाइवे विषेभोजनादिकनिविषे वर्ततिजोहै आपनीदेह ताही यौंदेषतुहै· ज्यौं औरदेहनिकौं कर्मनिविषे आचरतेदे

षनुहै· त्यौं यहऊ देषतुहैकि जो मैं याघट विषै हौं सोई· उनहू घटनिमें एक ईहौं जो मैं न्यारो एजे जड सकल शरीरादिकै ते मेरी ही शक्तितें चेतनसे व्हैकरि परस्परनिंदास्तुति सुखदुःखादिक शुभाशुभकर्मनिविषैं प्रवर्तते हैं· तातैं समरहै॥१०॥ दोहा चेष्टामानशरीरनिज देखतदूजीभाय॥ परसंसानिंदाविषै ज्ञानीक्षोभनथाय॥१०॥ संस्कृत· मायामात्रस्यसत्यत्वानुसंधानात्संन्निहितेऽपिमृत्यौज्ञानिनस्त्रासः कथमित्याह॥११॥ श्लोक मायामात्रमिदंविश्वंपश्यन्विगतकौतुकः॥ अपिसन्निहितेमृत्यौ कथंत्रस्यतिधीरधीः॥११॥ टीका· – मायामात्रमिति इदंदृश्यमानंविश्वं मायामात्रमसत्यरूपं समग्रंपश्यन्नतएव कुतइदंशरीरादिकंजायते कुत्रवि लयंयातीत्येवरूपकौतूकरहितस्तथाधीरास्वस्वरूपादचलाधीर्यस्यसः सन्निहितेमृत्यौसत्यपिसकथंत्रस्यतीत्याक्षेपः॥११॥ भाषाटीका· – धीरधीः प्राप्तभईहै बुद्धिजाकौं ऐसोजो पुरुष सोमाया मात्रं इदंविश्वं पश्यन् यह सकल संसारकेवल भ्रममात्रहै कछुहैनाही· जानिकरिविगतकौतुकः सबतैं विरक्तभयोहै ऐसो पुरुष सन्निहितोऽपिमृत्यौ कथंत्रस्यति समस्त प्राणीनकूं केशईगहेजुहे मृत्यू तातैं यह क्यौं डरपे· यह मृत्युके राज्यतें रहित भयो जो काऊ विनाशवंत सामग्रीसों लाग्योहै सो सब मृत्युकेवशहै· जिनियातें रूठोजानि मनकादिकरिएक इसत्यस्वरूपजान्यो तब मृत्यु काहेकी· अबनाभयंहृदयविषैज्ञान लगैनाहीं· तातें या श्लोककरि अष्टावक्रसंसार

सोप्रीतिकरै ते महादुःखसह दुर्निवार अपार भय बता· यो· अरु शरीरादिक सकल संसार सों विरक्त भयो· मनस्थि रकर परमानंद स्वरूपता बताई·॥२१॥ दोहा मा· यामात्रहिविश्वको देखत सतेनिसंक॥ निश्चयमृत्यु ग्रस तजग क्यों भयमन आतंक॥ २१॥ संस्कृत· सर्वेषामाक्षेपानासमर्थज्ञानिनोनिरूपणमाह॥ २२॥ ॥ श्लोक· निस्पृहं मानसं यस्य नैराश्येपि महात्मनः ॥ तस्यात्मज्ञान तृप्तस्य तुलना केन जायते॥ २२॥ टीका·- निस्पृहमिति यस्य नैराश्ये मोक्षेपि मानसं निस्पृहं तस्यात्मज्ञान तृप्तस्य ब्रह्माहमस्मीति जानतः समाप्त सर्व मनोरथस्य केन समं तुलना जायते नकेनापी त्यर्थः ॥२२॥ भाषाटीका· निस्पृहंमानसंयस्य या कोमन समस्त संसार सामग्रीतें न्यारो भयो है· अरु नैः राश्यस्य परलोक याके कोनहू वस्तुकी मोक्षादिक नि· हूकी आशा नाही सो क्यों आशा नाहीं· आत्मज्ञान तृप्त स्य आत्मस्वरूपको जो जानिवो तातें परम आनंद विषे सदा मग्न जो है ऐसे महापुरुषकी तुलना केन जायते यह त्रिगुणही मय विस्तार विषै उपमा देवेको कहा है· अरु वा स्तवकी उपमाको कहा है कि तुं कछु नाहीं· या श्लोक करि दृढसाधन उ बतायो· अरु परम अक्षय आनंद स्वरूप फल बतायो ॥२२॥ दोहा जाको मन निस्पृह भयो नही मोक्षकी आस॥ सर्व मनोरथ पूर्ण है कौन तुलै समतास॥ २२॥ संस्कृत· हानोपादानादि व्यवहारमाक्षिपति स्वभावादिति॥१३॥ श्लोक स्वभावादेवजाना नो दृश्यमाननकिंचन॥ इदंग्राह्यमिदंत्याज्यं सकिं

नाधं

पश्यतिधीरधीः ॥१३॥ टीका·- प्रपंचोमिथ्यादृश्यत्वात् शुक्तिकारजतवदित्यनुमानादेतत् दृश्यनकिंचननसत्नाप्यसत् इतिजानानोनिश्चयवान्योधीरधीः स इदंग्राह्यमिदंत्याज्यमिति कथंपश्यतीत्याक्षेपः॥१३॥ ॥ भाषाटीका·- स्वभावादेव यत्किमपि अन्य दृश्यते एकआविनाशी आनंदस्वरूप तेजोकछु दूजो जान्यो परतु हैसो· यत्किंचन· जोकछु हैएनाहीं तो जिनियहज्ञानी स धीरधीः सोमहापुरुषः इदंग्राह्यं इदंत्याज्यं कथंपश्यति भाईयहभली वस्तुहै याकोग्रहों·यहनाहीभली त्यागकरों·ऐसीदृष्टि बहुरिक्यों आनैं॥१३॥ दोहा· नाना दृष्टिस्वभावतें सोनहिंदेखतधीर॥ यहलेणोयहत्यागणो ज्यूंतपसीतसमीर॥१३॥ संस्कृत· अत्रहेतूनाह॥१४॥ श्लोक· अंतस्त्यक्तकषायस्य निर्द्वंद्वस्य निराशिषः ॥ यदृच्छयागतोभोगोनदुःखायनतुष्टये॥१४॥ ॥ इत्यष्टावक्रेआक्षेपद्वारोपदेशचतुर्दशकंतृतीयंप्रकरणम्॥३॥ टीका ॥ ॥ अंतस्त्यक्तेति अंतःकरणात्त्यक्ताः कषायाः विषयवासना येन तस्य निर्द्वंद्वस्य शीतोष्णादिसमचित्तस्य अतएवनिराशिषः विषयवांछाविहीनस्य यदृच्छयादैवयोगादागतः प्राप्तोभोगोभुज्यमानोविषयो दुःखायन भवतितुष्टयेन भवति॥१४॥ ॥ इतिटीकाया आक्षेपोपदेशकंनाम प्रकरणंतृतीयं॥३॥ ॥ भाषाटीका·- अंतस्त्यक्तकषायस्य जिनिआपने अंतःकरणतें सूक्ष्मविषयवासनादूरिकीनीहै· अरुनिर्द्वंद्वस्य- सुखदुःखादिकनिविषे समहैं अरुनिराशिषः आगेकछु

वांछानाहीं ऐसेकों यदृच्छयागतो भोगः विनाचिंतवनकी येईश्वरकोप्रेर्यो कछुजोशब्दस्पर्श रूप रस गंधादिक भोग आनिप्राप्तऊ होइतौनदुःखायन तुष्यये नकदाचिन् दुःखहोइ अंतरजानि अरु नरूखहोइकछू भलेजानिजोपनाहिकरिजानेतो काहेतेंदुःख काहेतें सुख नातें रे पुत्र अबतूं बेगेही देखो जौंतो सावधानव्है करि जहांलौं स्थूल सूक्ष्म इंद्रिय मनोगोचर सामग्रीहै तेरेसंने मिथ्याजानि मनकों षैंचिकरि अक्षय आनंदस्वरूप ताकौंप्राप्तहोई देषहितो धीरपुरुष आत्मज्ञानी सोक्यों कदाचित् भूलिकरिविनाशवंत वेदहादिकनिविषे मनकौं प्राप्तकरे इत्यादि ॥१४॥ दोहा जिनकेअंतरमलकटे शीतउष्णभयेएक ॥ रोषनतोषनदैवतें जो भोगत भोगअनेक ॥१४॥ ॥गुरुमुखतें आक्षेपसुनि अनुभवभयोउलास ॥ शिष्यकहतपुनि गुरुप्रती हर्षितव्हैदेप्रकास ॥२॥ श्रीधरआतमज्ञानविन होतमोहमनलीन ॥ जैसेअंधसमूहकों खेंचतनयनप्रवीन ॥२॥ ॥इतिश्री अष्टावक्रभाषाटीका आक्षेप नाम तृतीय प्रकरणं संपूर्ण भयो ॥३॥ ॥ श्रीरामोजयति ॥ ॥

अथचतुर्थोपदेशप्रारंभः

श्लोकः गुरुरैवमुपाक्षिप्तः शिष्योज्ञानदशोल्लसन् ॥ ज्ञानिन्यशेषचेष्टानांस्पष्टमाचष्टसंभवम् ॥१॥ ॥ एवंतावद्गुरुणा परिक्षार्थमाक्षिप्तःशिष्यः प्रारब्धवशाद्विधितानुवृत्त्यांज्ञानिन्यपि सर्वव्यवहाराणामुपपत्तिमात्मज्ञानोल्लासवशादेवाहहंतेति ॥१॥ श्लोकः हंतात्मज्ञस्यधीरस्यखेलतोभोगलीलया ॥ नहिसंसारवाहीकैर्मूढैःसहसमानता ॥१॥ टीकाः हंतेत्यात्मज्ञा

नोल्लासिते हर्षे हेगुरो. आत्मज्ञस्य सर्वाधिष्ठानतया स्वा
त्मानं जानतः अत एव धीरस्य विषयैरविक्षिप्तस्य चित्तस्य
भोगलीलया विषयभोगादिस्वरूपया क्रीडया प्रारब्धवशा
त् प्रवृत्तया खेलतः क्रीडतः संसारवाहिकैः संसारवृत्तिप
शुभिर्मूढैर्देहाद्यात्मवेदिभिः सहनहि समानतानैवतु
ल्यत्वं. तदुक्तंभगवता. तत्त्ववित्तु महाबाहो गुणकर्मवि.
भागयोः ॥ गुणागुणेषुवर्त्तंत इतिमत्वा नसज्जते ॥ २ ॥
भाषाटीका. — तौजो कदाचित् कहहु तौ सकल वस्तुकौं
मिथ्याजानि मनषेंचिकरि आत्मस्वरूपविषे तौ लगायो
अरु देह बहुत दिन रहे तौ नजानिये. कदाचित बहुरि वि
षयादिकनि विषे आसक्ति होइ तौ सुनु. हंत आपने मन
विषे आनंदष. आत्मज्ञस्य धीरस्य. आत्मज्ञानी जो धीर
पुरुषसो भोगलीलया खेलतोपि. शब्द स्पर्श रूप रस गंध
इत्यादिक भोगनिकों मिथ्याजानिकरि जो लीलापूर्वक-
खेलिवोउ करै भोग भोगवै. तौहूहि निश्चय जो कछु संसा
रवाही जोहै सो वाहीके मूढैः सह समानता नजिनि सम
स्त इंद्रियार्थनिको त्याग कस्यौहै. कबहू स्वप्नेही विषे ना
हीं जानते. अनेक कष्टकरि मनकौ निग्रह कस्यौहै जिनिप
रिजिनके आत्मज्ञानीसों परिचय नाही तौभी अतिहीसं
सार भारके वाहक जे हौवै. तिनुहीकी समानता कदाचित्
नकरीजाई. तौ औरनिकी समानता क्यों करि होइ तातें-
आत्मज्ञानी कोरी कल्पतें संसारहीविषे रहै तोहू कदाचि
त् लिप्त नहोई ॥ २ ॥　दोहा.　आतमज्ञानी धीरकै भो
गव्यभवसुखहोय ॥ संसारीसमताहिकौ वृथा कहतहै
कोय ॥ २ ॥　॥ संस्कृत ॥　संसारीव्यवहारस्थोज्ञा

नीकथंनसंसारितुल्य इत्याशंक्य हर्षादिरहितत्त्वात्तस्य वैलक्षण्यमाह ॥२॥ श्लोकः यत्पदंप्रेप्सवोदीनाः शक्राद्याःसर्वदेवताः ॥ अहोतत्रस्थितोयोगीनहर्ष मुपगच्छति॥२॥ टीका--यत्पदमिति अहोइतिसंबोधनेहेगुरो यद्वा अहोआश्चर्यं शक्राद्याःसर्वदेवता अपि-यत्पदंप्रेप्सवः यत्प्राप्तिमिच्छंतोदीनास्तदप्राप्तितः शोच्यावर्त्तते तत्रसच्चिदानंदाख्येपदेस्थितस्तत्त्वंपदार्थैक्यज्ञानात्तत्रवर्तमानोयोगी लब्धसाक्षात्कारोविषयभोगान्हर्षनप्राप्नोति नापितदपगमात् उद्विग्नोभवतीत्यर्थः ॥२॥ भाषाटीका-- अहोइतिआश्चर्यं यत्पदंप्रेपशवोदीनाः शक्राद्याःसर्वदेवताः यास्थलकेदेषिवेकों इंद्रादिकसमस्तदेवता वांछादिकरतेरहतेहैः परिदेषतेनाहीं• कौनब्रह्मलोकःशिवलोक वैकुंठादिः तत्रस्थितोयोगीनहर्षमुपगच्छतिः तास्थलविषैं बैठेजोगीजोहे आत्मज्ञानी अरुअनेकभांति तिनुकीस्तुति सेवादिकनिकरि सेईयतुहैः परिकदाचितस्रुखकरीनाहींमानतुः याश्लोककरि अत्यंतही ब्रह्मसुखकीगरिष्टता जनाईकि वहस्रुख ऐसोहैतातें वेगेहीपाइवेकोजत्नकरु इत्यादि॥२॥ दोहा जापदकीवांछाकरै इंद्रादिकमुनिराय॥ ज़हांयोगीस्थितहोयकें हर्षनशोकनथाय॥२॥ सस्कृत तज्ज्ञस्यविध्यकिंकरत्वंवत्पुण्याद्यसंस्पर्शमाह॥३॥ श्लोकः तज्ज्ञस्यपुण्यपापाभ्यांस्पर्शोह्यंतर्नजायते॥ नह्याकाशस्यधूमेनदृश्यमानापिसंगतिः ॥३॥ टीका--तज्ज्ञस्येति तत्त्वंपदार्थैक्याभिज्ञस्यपुण्यपापाभ्यांसहअंतःकरणधर्माणांस्पर्शसंबधोनजायते ज्ञानाग्निःसर्वकर्माणि

भस्मसात्कुरुतेऽर्जुनेतिस्मृतेः अत्रदृष्टांतमाह· नहीति यथा आकाशस्य धूमेन सह दृश्यमानापि संगतिः नास्तितथात्म ज्ञस्य नपुण्यादिसंगतिरित्यर्थः ॥३॥ भाषाटीका:- तत्त्वज्ञस्यपुण्यपापाभ्यांस्पर्शोऽअंतर्नजायते· जो आत्मज्ञानी· हैसोजो कदाचित समस्तकर्मऊ करैकिंवा नकरै तो कदाचि त्पुण्य पापादिकनिकरि नलिप्त होई· देहसों कर्म करावै· - आपन्यारो अकर्त्ताभयोहै तो दृष्टांत सुन· याप्रकार आका शस्यधूमेनस्पर्शोनगच्छति· आकाशविषैअनेकधूम धूलि मेघादिकनिकरिस्पर्शनहोइ· सदा एक समान रहै· दृश्यमा· नोपि·यद्यपि कर्मकर्त्तहु देषिये· अरु आकाश आच्छन्न दे षियै·परिदोऊ छिप्नन होहिं ॥३॥ दोहा· पुण्यपाप तेंलिप्तनहिं ज्ञानीअंतरअंग॥ जैसैनभआकाशके धूममें घनहिसंग ॥३॥ संस्कृत· ननुकर्मणिकृतेकथं नपुण्यादिस्पर्शइत्याशंक्य ज्ञानिनोविधिनिषेधाऽनियम्य त्वमाह॥४॥ श्लोकः आत्मैवेदंजगत्सर्वं ज्ञातंयेन महात्मना ॥ यदृच्छयावर्तमानं तन्निषेद्धुं क्षमेतकः ॥४॥ टीका·- आत्मैवेति येनमहात्मनाइदंदृश्य· मानंसर्वजगत् आत्मैवेतिज्ञातंतंज्ञानिनंयदृच्छयाप्रारब्ध वशादेववर्त्तमानं कोवचनकलापोनिषेद्धुंप्रवर्त्तयितुंवाक्ष· मः समर्थः नकोपीत्यर्थः तदुक्तंशारीरकभाष्ये अविद्याव· द्विषयोवेदइतिप्रबोधनीयएवासौस्कृतोराजेवबंदिभिरि तिस्मृतिः॥४॥ भाषाटीका·-येनमहात्मनाजाब्रह्म ज्ञानीकरि इदंसर्वंजगत्· यहजो कछु स्थूल सूक्ष्म विस्तार इंद्रिय मनोगोचर रहै· सो सकल आत्मैवज्ञानं एक केवल- आत्माजान्यो तो यदृच्छयावर्त्तमानं अपनी इच्छा ज्योंभा

वैत्यौं कर्त्तेसंतै शुभाशुभ कर्मऊ करतें· तन्निषेद्धुंकः क्षेमतः ताहिनिषेधविषै प्राप्तकरिवेकौ कौनसामर्थ्यहै· मायाकालकर्मादिककोऊ समर्थ नाहीं·यहजोई कछु शुभाशुभ करतुहैसो सकलशुभई होतुहै॥ ४॥ दोहा· दृश्य मानसबजगतकौं देखतब्रह्मसुभाव॥ इच्छावर्त्तीधीरकौं कोएऊनिषेधउपाव॥ ४॥ संस्कृत· ननुज्ञानिनोपिनयदृच्छया प्रवर्त्ततेकिंत्विच्छयैव इच्छानिच्छयोर्निवर्त्तयितुमशक्यत्वादित्याशंक्याह॥ ५॥ श्लोक· ॥ आब्रह्मस्तंबपर्यंते भूतग्रामे चतुर्विधे॥ विज्ञस्यैवहिसामर्थ्यमिच्छानिच्छाविवर्जने॥ ५॥ टीका आब्रह्मेति यद्यपि ब्रह्माणमारभ्यस्तबपर्यंतेइच्छानिच्छेविवर्जियितुमशक्येतथापि विज्ञस्यैवेच्छाद्वेषनिवर्त्तने सामर्थ्यमतोयदृच्छयाप्रवर्त्तमानोज्ञानीनविधिनियम्यइत्यर्थः॥ ५॥ भाषाटीका· - हेगुरो आब्रह्मस्तंबपर्यंतंचतुर्विधेभूतग्रामे· ब्रह्माको आदिदेकरि स्थावर पर्यंत जहांलौं चारिखान विस्तारहैतिनिविषै इच्छानिच्छाविवर्जने· राग द्वेषवांछा अवांछासमस्ततें निवर्त्तह्वैवेकों विज्ञस्यैवहिसामर्थ्य केवलएक आत्मज्ञानीहीकी सामर्थ्यहै दूजेकाहूकी शक्तिनाहीं· समस्तसुख सदैव याकेनिकटहाथजोरे अधीनहीरहैं· परियाकेकदाचित इच्छानहोई· या श्लोककरिशिष्य अपनेगुरु अष्टावक्रकौं वासुखकी श्रेष्ठताजनाई· अरु ज्ञानीकी महिमा जनाई· अरु समस्त मायाकाल कर्मादिक सुखदुःखादिकनितें निर्भयता देषाई· अरु गुरुके मनमें उत्साह वधायो· ता ब्रह्मसुखविषे वेगेहीअनुसरिवे कह्यो॥ ५॥ दोहा ब्रह्मादिकसब

निषेध

देहमें इच्छानिच्छादोय॥ ज्ञानीइनकौंजीतिकें इनमेंवर्त्तै· सोय॥ ५॥ ॥ संस्कृत॥ ॥ अद्वैतज्ञानेनद्वितीयस्य बाधितत्वात् ज्ञानिनाभयहेतुःकोपिनास्तीत्युपसंहरति ॥ ६॥ श्लोक· आत्मानमद्वयंकश्चिज्जानातिजगदीश्वरम्॥ यद्वेत्तितत्सकुरुतेनभयंतस्यकुत्रचित् ॥ ६॥ ॥ इत्यष्टावक्रानुभवोल्लासषट्कम्॥ ॥ टीका·- आत्मानमद्वयंकश्चित्जानातिजगदीश्वरमिति कश्चित्सहस्रेष्वेकएवजगदीश्वरंतत्पदार्थं आत्मानंत्वंपदार्थं अद्वयं अभिन्नंजानाति सयद्वेत्तिप्रारब्धवशात् बाधितानुवृत्या इदंकर्त्तव्यमिति मन्यते तत्करोति· एवंकुर्वतस्तस्य कुत्रचित् इहामुत्र च भयंनास्तिभयहेतोरद्वैत ज्ञानात् बाधितत्वादितिभावः॥ ६॥ ॥ इत्यष्टावक्रमुनिविरचितेअध्यात्मशास्त्रेशिष्यप्रोक्तानुभवोल्लास षट्कविवरणं समाप्तम्॥ ४॥ भाषाटीका·- यःकश्चित् योकोऊब्रह्मज्ञानी आत्मानंपरमेश्वरं यद्वयं वेत्ति· आपुको अरु संसारको अरु ब्रह्मको एककरिजानतुहै· अद्वैतभावउपज्योहै· सः सोपुरुष यद्वेत्ति तत्कुरुते· यो वाके मनमें आवै सो करतुहै· तस्य कुत्रचित् भयंन· ताकौं कहौं· कौनहूवस्तुते भयनाहीं· तातें जौं लगि आत्मज्ञान नाहीं उपज्यो· तौंलगि अनेक करैतो कहूं सुख नाहीं· छूटिवो नाहीं· अरु ब्रह्मज्ञान पाये अनेक करैतो कहु दुःख नाहीं· बंधन नाहीं तातें समस्त सामग्रीतें मन षेंचिकरि आत्मज्ञानविषे प्राप्त होइ इत्यादि ऐसेंहु अष्टावक्र मुनि अपनेशिष्यकों तृतीयउपदेशविषैचतुर्दशश्लोककरिकें आक्षेपवचन परिक्षा करिवेको सुनायेजब शिष्य आक्षेपवचनसुनिकेमन

अनुभवउल्लास भयो तब अष्टावक्र मुनिके सन्मुखही ष
ट्श्लोक अनुभवोल्लास नाम चतुर्थ उपदेशविषै आत्म-
ज्ञानकी प्रशंसाकीनी तब गुरु प्रसन्नचित्त होयके आपने
शिष्यकौ दृढउपदेश करने अर्थ च्यारश्लोक करके लयना-
मां पंचम उपदेश श्रीअष्टावक्र मुनि प्रारंभ करैंगे ॥ ६ ॥ ॥
दोहा आत्माब्रह्मसमानकरि लखेहजारनएक॥ नि
र्भयदेहस्वभावतै जोकछुकरैअनेक॥ १॥ निर्भयपद
ज्ञानीलहे विचरनघाटकुघाट॥ श्रीधरसोनेसोलवे क्यों-
करिलागतकाट॥ २॥ ॥ इतिश्रीअष्टावक्रभाषाटी
कासुगमप्रकाशताकौचोथोउपदेशसंपूर्णभयो॥ ४॥ ॥

पंचमोपदेशप्रारंभः

श्लोकः एवमुल्लासषट्केनस्वशिष्येपिपरीक्षिते॥ गुरु
र्दृढोपदेशार्थं लययोगमथाब्रवीत्॥ १॥ ॥
एवमुल्लासषट्केनशिष्ये परीक्षितेसति पुनर्दृढोपदेशार्थं
आचार्यो लयमुपदिशति श्लोकचतुष्टयेन॥ १॥ श्लोक
॥ नतेसंगोस्तिकेनापि किंशुद्धस्त्यक्तुमिच्छसि॥
संघातविलयंकुर्वन्नेवमेवलयंव्रज॥ १॥ टीकाः
ननेति हेशिष्य शुद्धबुद्धस्वभावस्यतव केनापि देहगेहा
दिना हंकार ममकारास्पदेन नसंगोस्ति अतः शुद्धोऽसं
गस्त्वं किं सत्यमुपादातुं चेच्छसि तस्मात्संघातस्य देहस्य
विलयं कुर्वन्नाहं देह इतिनिरसनं कुर्वन्नेवमेव देहादिनि
रसनरूपमेव लयंव्रज॥ १॥ भाषाटीकाः-रेशिष्य,
जोतू कहैहैकि मैंसमस्तको त्यागकरों निवर्त्तव्हैकरि ब्रह्म-
विषै प्राप्त होउं तो देष तूं ऐसी बुद्धि क्यों आनन है यह तो
अज्ञान है जहां कहूं जाइ तहां माया जोकछु करहि इंद्रि

य मनकरि जानहिं· सो माया अरु जो कछु सामग्री ब्रह्मांड
विषै सो समस्त तेरो देहविषै ता देह बिनु एक छन ऊ तेरी
स्थिति नाहीं तातें त्याग कहमें जो करयो तो सो कि तोको-
सत्यस्वरूप को बाधनिहारो दूजो कौन परि तोको एक यहै
बंधन जो कहितहै कि मैं सकल वस्तु को त्याग करौं· तूं तो अ
द्वैत है· तातैं केनापि संगो न· तेरे अद्वैत सत्यस्वरूप के को
नहू वस्तु करि संग नाहीं· जो कछु दूजो जानतहै सो मिथ्या
तूं सत्यसंग कैसो स्वप्नकी वस्तु सों संग कैसो· जैसो वो सोवै
तौलों सत्यसो जानैं त्यौं जाने अज्ञान में सोवतु है तौलों स
त्यसो जानतहै· जो आपकौ समझ्यो आपही है· तातें और-
द्वैए नाहीं· तातें त्वं शब्द व्यक्तु किं इच्छसि· परम निर्मल तूं·
जाकी जाकी शक्ति करि यह झूठो सो सत्य जानि यतु है सो तू
छोडिवेकों कहा वाछतुहै· संघातविलयं कुर्वन्· इंद्रिय-
मनोगोचर समस्त सामग्री को मिथ्या जानि हयतें दूरिक
रि आत्माकों एक सत्य आनंदमय जानिकरि एवमेव ल
यं व्रज· याप्रकार देहतें निःसंग ह्वैकरि देहमंदिरमें निश्च
ल बैठिकरि आत्मस्वरूप विषे लीन हो इत्यर्थः ॥१॥ ॥
दोहा· तासों संग न कोएसें कहा छोडिवे चाह॥ इंद्रि
य संघ निवारकें तूं निज ब्रह्मसमाह॥१॥ संस्कृत·
श्लोकः उदेति भवतो विश्वं वारिधेरिव बुद्बुदाः॥
इति ज्ञात्वैकमात्मानमेवमेव लयं व्रज॥२॥ ॥
टीका· - उदेतीति हे शिष्य भवतः सकाशाद्विश्वमुदेति
भवद्भिन्नमेव यथा वारिधेः सकाशाद्बुद्बुदो वारिधेरभिन्न
एवोदेतिइत्येवंप्रकारेण एकसजातीयादिभेदरहितमा
त्मानं ज्ञात्वा एवमेव एकात्मज्ञानमेव लयं व्रज पूर्ववत्॥२

भाषाटीका·-रेपुत्र इदंविश्वंभवतः उदेति·यहसमस्त· संसार दूजोनाहीं यहतोहीते उपज्योहै तोहीमेंहै·तूंहीहै दूजोनाहीं कोनभांति दृष्टांत·वारिधेबुद्बुदाइव·ज्योंसमुद्र हीतें अनेक भांतिके तरग उपने अरुवाहीमें वर्त्तैं·वाहीमें- लीनहोइ तौवेकछुदूजी कहिये·किन्तू एकसमुद्रईहै त्यों· इति याप्रकार एकं आत्मानं ज्ञात्वा·समस्तविषै एक अद्वैत भाव आनिकरि एवमेव लयंव्रज·याज्ञानकरि नकछु छो- डुं नकछुग्रहु·देह मंदिरमें न्यारो ह्वैकरि बैठिकरि लयजो लीनता नाहिप्राप्तहो इत्यर्थः ॥२॥ दोहा· ज्योंसमुद्रतैं बुद्बुदा विश्वब्रह्मतैंहोय ॥ ऐसीह्वैलवलीनता तहांन दीखैदोय ॥ २॥ संस्कृत ननुप्रत्यक्षतोभिन्नतया हारसर्पादिभेदे प्रतीयमाने कथं हानादिविलय इत्यत आह प्रत्यक्षमिति ॥३॥ श्लोक· प्रत्यक्षमप्यवस्तुत्वाद्विश्वंनास्त्यमलेत्वयि ॥ रज्जुसर्पइवव्यक्तमेवमेवलयंव्रज ॥ ३॥ टीका·-प्रत्यक्षमपीदंव्यक्तं दृश्यंविश्वं अमलेत्वयिनास्त्येव अवस्तुत्वात् रज्जुभुजंगवत्तस्मादेवमेवलयंव्रज ॥ द्वितीयस्यहेयोपादेयस्यैवाभावात् इत्यर्थः ॥३॥ भाषाटीका·-हेपुत्र प्रत्यक्षं अपि इदंविश्वं देषियतऊ·यद्यपिहै यहसंसार तोहू अवस्तुत्वात्·विनाशवंततें·विमले त्वयि·तूंनिर्मल·यहमल- रूपतू अविनाशी·यहविनाशवंत·तूं चेतन·यहजड·अरु नआदिहू तीन अंतरहसी·अब चित्तके भ्रमतें जानियतु सोहै·जोकहहिकिं वहांचित्तको भ्रमकैसोजाते·एकविषै अनेक देषिये·समुद्र तरंगनिकौंतो अनेक दृष्टि काहूके नउपजे·एकदृष्टिरहै·समुद्रकी दृष्टिरहै तरंगनिकीनाहीं

तौ सुनु रज्जुसर्प इवव्यक्त ज्यौं अंधियारे जेवरी विषे सर्प जानिये. परिन आदिहुतो. न तबहू. आदिनतो. जब यह जाने तबतिहुकाल जेवरीहै त्यौं आत्माहूविषे आपने भ्रमकरि अज्ञान अंधकार विषे भयको देषन हारो औरसो जानियतुहै. योंजानिकरि लयंव्रज. एकसत्यस्वरूपकी भावनाराषि ताहि विषे लीन ह्वो इत्यर्थः ॥३॥ दोहा. ॥ जगमिथ्यानिर्मलतुही तोमैविघ्नजोय॥ जैसीरज्जुसर्पविन योंसमुझलयहोय॥३॥ संस्कृत. ॥ श्लोक. समदुःखसुखः पूर्णआशानैराश्ययोः समः॥ समोजीवितमृत्योसन्नेवमेवलयंव्रज॥४॥ ॥ ॥ इति लयचतुष्टयम्॥ टीका. - समेतिआत्मानंदपूर्णस्त्वमतएवदैववशादुद्भूतयोः सुखदुःखयोः समः इच्छानिच्छयोश्चसमस्तथाजीविते मृत्यौवासमो निर्विकारः सुखदुःखादीनामनात्मधर्माणां तुच्छत्वानुसंधानात् त्वंसुखदुःखादिषुसमः ब्रह्मदृष्टिरूपंलयंव्रजेत्यर्थः॥४॥ ॥ इतिश्रीमद्विश्वेश्वरविरचितायामष्टावक्रटीकायां आचार्योक्तलयचतुष्कनाम पंचमप्रकरणंसमाप्तम्॥५॥ भाषाटीका. - हेपुत्र समदुःखसुखः तातेंतु समस्तसुखदुःखादि स्वर्गनरकादि मानापमान. धर्मादिक देहके जानिकरि सोदेह अरु एसकल झूठेजानिकरि समचित्तहोई. अरुपूर्णः आपनो एकसत्यस्वरूप जानिकरि आशानैराश्ययोः समः सकल झूठेजानिकरि नतौ कौनहू वस्तुपर आशाकरि मानु जोई देहविषे मैं सुख पावौं. तथा निराशा करि कौनहू वस्तुकी या देहविषे दुःखपावो. ऐसी समुझिके आशा निराशावि

षै समान होउ· अरु मतियों कहैंकि भाई·यावस्तनें मोकों बंधनहै·याकों त्यागयों करो·जौ कदाचित इंद्रिय मनमें· आन हीतो वहतो त्यागी नाहीं दृढकरि मनमें बाधि तातें· समस्त झूठो जानि मनतें विसारिकरि समजीविन मृत्युः सन्·जीवो मरिवो देहकोहै· सो देह झूठी जानिकरि आपु को अविनाशी जानि करि जीवेकी आसा मनतें दूरि करिए· वमेव लयं व्रज· याप्रकार एक सत्यस्वरूपको चिंतवन कर· तेसंते नाही स्वरूपविषे सुखही पूर्वक लीनहो इत्यर्थः·या हीप्रकार चारश्लोककरि अष्टावक्र मुनि शिष्यप्रति ब्रह्मवि षै लयनाम उपदेश वर्णनकीनो तब ज्ञानकरिके पूर्णभयो हैचित्तजाको·ऐसो शिष्यजो है सो मनविषैं विचारत हैकि मैं तो एकहीहों· मेरेतें दूजो कोऊ भीनहीं·तामें लीन होय· के द्वैतभाव छांडो·ऐसो विचार करिके अष्टावक्र मुनिप्रति च्यारश्लोक करिके लयनिषेधनाम छठाउपदेशविषे शिष्य कहतहैं·॥४॥ दोहा· आसनिराशासमकरे हानिलाभसमदोय॥ सुखदुःखजीवन मरणसम योंसमुझे लयहोय॥४॥ ॥समुझत भयभ्रम मिटिगयो व्है· निजज्ञानप्रकाश॥ श्रीधरजैसे रविउदे होततिमिरको नाश॥१॥ ॥इतिश्रीअष्टावक्र वेदांततार्की भाषाटीका सुगम प्रकाश ताको पांचमोउपदेश संपूर्णभयो॥५॥

षष्ठोपदेशः प्रारंभः

श्लोकः· गुरुणैवंपरीक्षार्थ मुपदिष्टे लये सति॥
पूर्णात्मनो लयादीनां शिष्योऽसंभवमब्रवीत्॥१॥
॥ तदेवंगुरुणात्यंत परीक्षार्थे लययोगे उपदिष्टे सति ल· याद्यभावोपपादकमात्मज्ञान मनुवदन्नेवशिष्यः·पूर्ण·

त्मनोलयाद्यसंभवमाह चतुर्भिः श्लोकैः ॥ १॥ श्लोक

आकाशवदनंतोहं घटवत्प्राकृतंजगत् ॥ इतिज्ञानंतथैतस्यनत्यागोनग्रहोलयः ॥ १॥ टीका:-

आकाशवदिति अहमात्मा आकाशवदनंतः नन्वनंतस्यात्मनो देहादिनिवासः कथमित्यतआह· घटवदिति· प्राकृतं प्रकृतिकार्यं जगद्देहादिकं घटवत्तथाचात्मनो देहादिरेकदेशावच्छेदक एव व्योमइवघटादिरित्यर्थः अत्र· प्रमाणमाह· इतीति इत्येवंवेदांतसिद्धं ज्ञानमतोन्यथाभाव शंकेत्यर्थः तथेति तथासत्यात्मनोनंतत्वेसत्येतस्यात्मनः त्यागोग्रहणं लयश्चन संभवति परिच्छिन्नस्यैव घटादेस्त्यागादिदर्शनादित्यर्थः ॥ १॥ भाषाटीका:-

हेगुरोः ज्ञानकरिकै पूर्णभयोहूं सकल तृष्णा जीतिकै ऐसोज्ञो मै कोनवस्तु संग्रह करौं· कोनवस्तु त्यागकरौं· कोनविषै लयहोवौं· अहं आकाशवत् अनंतोस्मि अहो मैं तो आकाशके समान याको अंतपारनाहीं· अरु एक अखंडितजगत प्राकृतं घटवत् यहजो मायामय स्वभावही तें उपज्यो संसारसो घटादिसमानहै· ज्यौं आकाशहीमे अनेक घट उपजै विनसै· एकनिमें उत्तम वस्तुभरियै· एकनिमे मध्यमनि कष्टभरियेतौ आकाश सबनिमें व्याप्तहै· परिन वस्तुसौं नघटसौं लिप्त· बाहेर भीतर मध्य सर्वत्र पूर्णस्थिर सत्य एकरस घटादिक चंचल झूठे अनेक रूपत्यौं· इतिज्ञानं· यह ज्ञानकहिये· तथा एतस्य नत्यागो नग्रहो· यौं सकल झूठे जानिकरि· आपुको निर्लेप जानिकरि नकोऊ वस्तु त्यागे कहिये· नग्रहे कहिये· मनतें भुलाइ हिंडाविये· एक आपनो सत्यस्वरूप विचारतें रहिये· इतिलयः इतनेहीतें-

ताहीक्षण ब्रह्मविषे लीनहोई॰ ओर कछु करणीयनाहींइ त्यर्थः ॥१॥ दोहा मैंआकाशअनंतज्यो घटज्योंस बसंसार॥ त्यागोछांडोकोणको ऐसोज्ञानविचार॥१॥ संस्कृत॰ घटाकाशदृष्टांतेदेहात्मनोभेदशंकास्यादित्य परितोषादाह॥२॥ श्लोक महोदधिरिवाहंस प्रपंचोवीचिसन्निभः॥ इतिज्ञानंतथैतस्य नत्यागो नग्रहोलयः॥२॥ टीका॰ -महोदधिरितिस्पष्टं॥ २॥ भाषाटीका॰ - सः अहंसोजोब्रह्मप्रभु कहीयतहै सोमैंहीहो॰ ज्यौंदेहविषे एककोऊअंग सोदेहतेंन्यारोना हीं॰ त्यौं एकमैंहीहीं॰ कैसोहों महोदधिरिव॰ ज्यौं महास- मुद्र अपार अगाध अक्षय समस्त जलजंतुनकी आधा र सबनिके कर्माकर्मसुखदुःखादिकनितें न्यारो त्यौंमेंप्र पंचोवीचिसन्निभः यहजोकछुनानात्व सोजानियतुहैं॰ सो वीचिजे लहरि अनेकभांतिकी तिनके समानहै क- छुदूजो नाहीं॰ त्यौं लहरिऊपजे विनसै समुद्र स्थिर अक्ष य त्यौंहऊपजे॰विनसै॰ मैस्थिर अक्षय इतिज्ञानं॰ याप्रका र अद्वैत जानिकरि तथा एतस्या नत्यागो नग्रहः नकछु त्यागकरे नसंग्रहे त्यौंकछू होइतो त्यागियै॰ग्रहियै एक- आत्माको चिंतवन करतेसंते इतिलयः ताहीविषेलीन- हों और कछु करणीय नाहीं॰ ब्रह्मविषे लीन ह्वैवेको एत नोईजतन ताते योंकरि लीनहों सुखहीपूर्वक महासुख- मयहों॥२॥ दोहा मैंसमुद्रगंभीरसम लहरस कलसंसार॥ लेणदेणलयकोणको ऐसोज्ञानविचार॥२॥ ॥ संस्कृत॰ समुद्रवीचिदृष्टांतेदेहात्मनोर्विकारवि कारिशंकास्यादित्यपरितोषादाह॥३॥ श्लोक॰

अहंसशुक्तिसंकाशोरूप्यवद्विश्वकल्पना ॥ इति ज्ञानंतथैतस्यन त्यागोनग्रहोलयः ॥ ३ ॥ टीका-अहंसइतिस्पष्टम् ॥ ३ ॥ भाषाटीका· - सर्वभूतानिमध्येव समस्तचराचरविस्तारतो मोहिविषैहै· अहवासर्वभूतेषु समस्तचराचर भूतनिविषेनो एक मैहीहों· एमोहिविषै·मैं इनिविषै· दूजोतोकछुहैएनाहीं· ज्यौंभूमिविषैनानाप्रकार ग्रह घटादिक नाममात्रहै· परिभूमिहीहै त्यौं इतिज्ञान यौंजानिकरि तथा एतस्य नत्यागोनग्रहः तातेंनकछूत्यागवेकों विचारियानग्रहवेकी विचारीयै· ज्यौंआपुहीहैं·दूजोहैएनाही तौकहात्यागियै· कहाग्रहियै· केवल एक अद्वैतभाव आनिकरि ताहीविषैंलीनहो औरकछू मतिविचारही इत्यर्थः ॥ ३ ॥ दोहा· सर्वभूतहूमोहिमैं आतमा सकलाधार ॥ त्यागनछांडौं कौनकों ऐसोज्ञानविचार ॥ ३ ॥ संस्कृत· शुक्तिदृष्टांतेऽप्यात्मनि परिच्छिन्नत्वशंकास्यात्तद्व्यावृत्त्यर्थमाह ॥ ४ ॥ श्लोक अहंवा· सर्वभूतेषु सर्वभूतान्यथोमयि ॥ इतिज्ञानंतथैतस्य नत्यागोनग्रहोलयः ॥ ४ ॥ इत्युत्तरोपदेशश्चतुष्कम् ॥ ४ ॥ टीका· - अहमिति अहंवासर्वभूतेषु ग्राकृतिकेषुसत्तास्फूर्त्याप्रदत्वेनास्मिअथातोहेतोः सर्वभूतान्यधिष्ठानभूतेमयि प्रवर्त्तंते इतिज्ञान वेदांतसिद्धं तथासत्येतस्यात्मनः त्यागादिकं नसंभवतीत्यर्थः ॥ ४ ॥ ॥ ॥ इतिशिष्यप्रोक्तंउत्तरचतुष्टयंनाम प्रकरणंषष्ठंसमाप्तम् ॥ ६ ॥ भाषाटीका· - हिनिश्चयकरि अहमेव· केवल एकमेहीहौं·यत्तुमनसोगोचरमपि· योकछु इंद्रियमनोगोचररूसमस्त· मतान्यतंन मोहितें औरनाहीं

एकमैंहीहों इतिज्ञानं अथवा कोईपुस्तक विषैं ऐसोभी पाठहै अहंसशुक्ति शंकाशोरूप्य वद्विश्व कल्पनाइति मैं कैसोहूं जैसो शीपशंकाशः शीपविषैं रूपेकी कल्पनाहै परिमिथ्याहै देखनेमैं तो शीपको रूपोही कहतहैं पनिशीपके अरु रूपाकेतो संबंधही हैनाहीं तैसेही अहंनाम मैं जो शुद्धनिर्लेप हौं ताविषैंतो विश्वकल्पनानाहीं जगतके कल्पेहुवे सुखदुःखादिक समग्र प्रपंच मोमें नाहीं इति ज्ञानं ऐसोहैज्ञान ताकोतो हेगुरो नत्यागो नग्रहोलयाकौ नवस्तुकौ त्याग नकरौं कौनवस्तुकौ संग्रहकरौं कौनवस्तु विषैं लय होवौं योजानिकरि तया एकतस्य नत्यागो नग्रहो नकछुत्यागवेकी बुद्धिआनौ नग्रहवेकीबुद्धि आनौ इति लयः यौंजानिकरि मेरे सत्यस्वरूप ताविषै लीनहौं इत्यर्थ ऐसेहु लययोगादिकनिकौ अनुष्ठान कियसंते व्यवहारनिरंकुश होतहै ऐसी आशंका करिके गुरुप्रति शिष्य अनुभवपंचकनाम सातमा उपदेशविषैं अनुभव कहतहै ॥ ४ ॥

दोहा॰ मिथ्याकल्पितजगतहै ज्यौंरजशुक्तीमांहिं ॥
त्यागैंछांडैकौएगकौं आपहिरूपसमाहिं ॥ ४ ॥ ॥
श्रीधरसंगतिसारहै जोकछुअनुभवहोय ॥ जैसोभूषण अंधकौ व्यथाकहत सबकोय ॥ १ ॥ ॥ इतिश्रीअष्टावक्रभाषाटीका ताकोछठोउपदेश संपूर्णभयो ॥ ६ ॥ ॥

सप्तमोपदेश प्रारंभः

श्लोकः लययोगाननुष्ठाने व्यवहारनिरंकुशम् ॥
आशंक्यशिष्यःप्रोल्लासादब्रवीद्गुरुमुत्तरम् ॥ १

॥ लययोगाभावे संसारविक्षेपोनिरंकुशो प्रसरेत्स्यादित्याशंक्य तस्यानिष्टत्वाभावमनुभवपंचकेनाहशिष्यः ॥ १ ॥ ॥

श्लोक· मय्यनंतमहांभोधौविश्वपोतइतस्ततः॥ भ्रमतिस्वांतवातेन ममनास्त्यसहिष्णुता॥१॥ ॥

टीका·- मयीति मय्यात्मन्यनंते महासमुद्रेविश्वाख्यःपोतः नौकास्वांतवातेनमनः पवनेनइतस्ततोभ्रमति अत्रममत्र्यसहिष्णुता असहमानतानास्ति समुद्रस्येव नौकापरिभ्रमणइत्यर्थः॥१॥ भाषाटीका·- हेगुरो मयि अनंतमाहांभोधौ मेंहीजोहौं अनंतअपार अगाध महासमुद्ररूप नाविषे विश्वइतस्ततः प्रोतं समस्त संसार च्यारहु ओरतें पोयोहै· मेरेही आधारहै लहरिसमुद्रकी आधारतौपवनतें उपजै यहकाहेतें उपजे·स्वांत वातेन भ्रमति· अपनोईमन भयोजो अतिचंचल वायु ताकरि भ्रमतुहै· अनेक भांति करिमम आसहिष्णुता नास्ति मोकों कहू क्षोभाक्षोभनाहीं·ज्यौं तरंगनिके भ्रमन संते समुद्रसों कछुक्षोभाक्षोभनाहीं त्यौं एवचन अष्टावक्रप्रति तन्मय व्हैकरि कहेहैं· पंचश्लोकुकरिश्रोता वक्ता को भेदनाहीदेषिबोलेहै इत्यादि॥१॥

दोहा· मैंअनंतदरियावसम विश्वप्रोतमोमांहिं॥ मनकेभ्रमनैंजगभ्रमै ज्यूंसागरसमनांहि॥१॥ संस्कृत·॥ जगद्व्यवहारस्यनिष्टत्वाभावःपूर्वमुक्तः अथजगदुदयापगमयोरपिनानिष्टतेत्याह॥२॥ श्लोक· मय्यनंतमहांभोधौजगद्वीचीस्वभावतः॥ उदेतुवास्तमायातुनमेवृद्धिर्नचक्षतिः॥२॥ टीका·- मयीति मयि आत्मनि अनंते विनाशरहिते महति व्यापकेऽभोधौ समुद्रेजगदाख्यावीचिःस्वभावतः दृश्यत्वादि स्वभावादुदेतु अस्तमायातु वा मे ममनदुद्ये वृद्धिर्नास्ति व्यापकत्वात्तदपगमेचक्षतिर्नास्ति अनंतत्वादित्यर्थः॥२॥ भाषा

टीका - मयिअनंतसुखांभोधौ मैंहीजोहौं अपार आनंदसमुद्र ताविषें स्वभावतः स्वभावहीतें जगहीची उदेतु वाअस्तमायातु उपजैतोउपजे अरुविनसैतोविनसे नमेवृद्धिनचक्षतिः नतोउपजेतें मोकों कछुवृद्धि अरु नविनसेतें कछूक्षतिः ज्योंसमुद्रकोनकछू वांछा नअवांछा परितरंगें स्वभावहीतेंउपजे विनसै अरुताके वांछा अवांछातो नहोइजोवे कछुदूजोहोहि अरुक्षतिवृद्धितो नबहोइ जोकछूदूजी वस्तुआवेजाई त्योंमैंहीहौं दूजोहैएनाहीं ॥२॥ दोहा मैंअनंतसागरविषे जगनतरंगसमान ॥ लहरबधेजलनावधै धटेनजलकीहान ॥२॥ ॥
संस्कृत सर्वदृष्टांतेचात्मनः परिणामित्वंस्यात् तद्वारणार्थमाह ॥३॥ श्लोकः मय्यनंतमहांभोधौ विश्वनामविकल्पना ॥ अतिशांतोनिराकारएतदेवाहमास्थितः ॥३॥ टीका - मय्यनंतमहांभोधौनाम प्रसिद्ध विकल्पनामात्रमेव नत्तुतात्विकंअंतःकरणादहमतिशांतः प्रपंचप्लवरहितः अत्रहेतुमाह निराकारइति एतदात्मज्ञानमेव अहमास्थितः आश्रितोनतुलययोगतस्यपूर्वमेषुदूषितत्वात् ॥३॥ भाषाटीका - मयिअनंतमहांभोधौ मैंहीजोहौं एकअद्वैत अपारसमुद्र ताविषें विश्वनामविकल्पना संसारसोयहजोनाम सोनाम विकल्पलीयोहै जोनाहीं सोकहीलीयोहै ज्यों मृगतृष्णाविषें जलसोनाम विकल्पलीजे तातें एतत् यहजोकछू मनोगोचरविस्तार सोसकल अहमेव आस्थितः केवल एकमैंहीस्थिररूपविराजतुहौं मैं अतिशांतः परमशांतसुखस्वरूप अरुनिराकारः आकारकरिरहित एकमेरो अद्वैत अस

य अखंडित निर्मल चैतन्य निराकार स्वरूप ताविषे है तन-विनाशवंत खंडित मलमयजड आकारवंत यह क्यों करि संभवै॰ तातें केवल कल्पनामात्र है॰ मनको भ्रम है॰ औरक छुनाहीं ॥३॥ दोहा मैं अनंतसागरविषे विश्व हुक-ल्पितनाम॥ निराकार अतिशांत सुख स्थित निश्चल निज धाम॥३॥ संस्कृत॰ अतिशांतत्वमेव स्पष्टयति॥

४॥ श्लोक॰ नात्माभावेषुनोभावास्तत्रानंतेनिरंजने॥ इत्यसक्तोस्पृहः शांत एतदेवाहमास्थितः॥ ४॥ टीका॰- नात्मेति आत्माभावेषु देहादिषु आद्यं-ततयानास्तिव्यापकत्वात् नोभावो देहादिस्तत्रात्मनिनास्ति निरंजनत्वात् इतिकारणादहमसक्तः संसर्गरहितोतएवा स्पृहः इच्छादिधर्मासंश्लिष्टो अतएवशांत इत्यर्थः॥४॥ भाषाटीका॰- आत्माभावेषुनभावा आत्मनिन तातें यह समस्तमनको भ्रम है॰ जो मनके नाना प्रकारके मान संकल्प विकल्पादिकनि द्वन्द्व होहीं तो मेरे न सुख न दुःख न जन्म म-रणादिक यथातत्रानंतेनिरंजने न॰ या प्रकार मनके भावने करि रहित जे है निरंजन ब्रह्म तिनिविषें कछु भावा भावना हीं॰ ताही प्रकार मे अनंत निरंजन उनहीको रूप ज्यों देह-विषें अंग ताको कौनवस्तुकी व्यापना परिकेवल मन कृत-है॰ इतित्यक्तस्पृहः अथवा और पुस्तकनिविषे इत्य सक्तो स्पृहः ऐसोभी पाठ है॰ याहीतें मनकीजे समस्त वांछा अ-वांछा सकलरूठी ते सोडि करिशातः ताही क्षण मात्र पर मशांतज्यौं मेरो स्वरूप है त्योंही होऊ अरु ताही क्षण ए तन् अहमेव आस्थितः यहजो कछू नानात्व जानियतु है सो मैं ही हौं॰ यह मोहिमें लीन होई ज्यौं आपने मन के ही भ्र

मतें जेवरी विषैं सर्पजान्यौ· अरु विवेकतें सर्प जेवरी हीवि षें लीन भयो त्यौं ॥४॥ दोहा· देहादिक आतमनहीं आतमदेहनजान॥ हैअनंतइच्छारहित शांतरूपस्थित मान॥४॥ संस्कृत· इच्छादिरहितत्वेहेत्वंतरमाह ॥५॥ श्लोक· अहोचिन्मात्रमेवाहमिंद्रजालो पमंजगत्॥ अतोमम कथं कुत्र हेयोपादेयकल्प- ना॥५॥ टीका·– अहोइति आश्चर्ये रूपमलौकि· कंचिन्मात्रंचैतन्यमेवाहं जगत्सर्वं प्रपंचजातं इंद्रजालोप मंदर्शनकालेपि पृथक्सत्तारहितं अतोविश्वस्य पृथक् सत्तारहितत्वात् मम वस्तुनि कथं केन प्रकारेण नहेयोपा देयबुद्धिः स्यात् नकुत्रापीत्यर्थः॥५॥ ॥इत्यष्टाव क्रटीकायां अनुभवपंचैक प्रकरणंसमाप्तम्॥७॥ ॥

भाषाटीका·– अहो यह बड़ो आश्चर्यहै· चिन्मात्रंएव· इदं· यहजो कछूनानात्वजानियतुहुतो सोतोसमस्तचैतन्य स्वरूप ब्रह्मरूप एकमैहीहौं तोयहदूजो सोअनंतकाल· को क्यौंजान्यौपरयौ· तौ इंद्रजालोपमं जगत्· ज्यौं वादीग रमंत्रादिक शक्तिकरि सबनकी दृष्टिकों बाधिराषे तबए· सकलओरवस्तुनि विषै ओरवस्तुदेषै· अनेक भेदसेंजा नेपरे जोई जोई वस्तुदेषै सोईसोई नजाने कछूओरही सेंजानि चरित्र मानिलेही·परिकेवल एक उनकीदृष्टिही· को फेरहै· ओरकछू जो देषतुहै सोनाहीं·जो कछु हुतोप्र· थम सोईहै तौ त्यौंही केवलएक मनकेफेरकरि नानात्व मा- निलीयौ तातें जान्यौसो परतुहै· तोपरिमेंही हौं· अतोमम· कथं कुत्र हेयोपादेयकल्पना· याहीतें जो केवल एकमेंही हौं तौकहात्यागिवेकी वांछाकरो· कहाग्रहिवेकी वांछा

करौ इत्यर्थः ऐसेह्नु आपने शिष्यके वचन अनुभव ज्ञानके सुनिकै मुनि अष्टावक्र आपके मनविषें विचार करतुहैं कि मैं याकौं षट्उपदेश विषें परस्पर संवाद शिष्य कीपरिक्षा करिबेकौं कियोः परंतु याकौज्ञान उदय होयकें निर्मल बुद्धिभई अबयाकौं मुख्यज्ञान उपदेशकीनो चाहिये ऐसैंमुनिविचारकें शिष्यप्रति बंधमोक्षकी व्यवस्था आठमाउपदेशमें करैंगे॥ ५॥ दोहा॰ अहोब्रह्मचेतनसकल इंद्रजालसंसार॥ तातें मोकौं काहिको छोडएग्रहएप्रकार॥ ५॥ ॥ श्रीधरमनकृतजगतमें बंधमोक्षकबहोय॥ ज्यूंतरवरगहकहतहै तरवरपकर्योमोय॥ १॥ ॥ ॥ इतिश्री अष्टावक्र भाषाटीका ताको अनुभवपंचकनाम सप्तमउपदेश संपूर्णभयो॥ ७॥ ॥ ॥

अष्टमोपदेश प्रारंभः

श्लोकः इत्थंपरीक्षितज्ञानंशिष्यमेवाभिनंदितुं॥ गुरुर्बंधस्यमोक्षस्य व्यवस्थासम्यगब्रवीत्॥ १॥ तदेवंषड्भिःप्रकरणैः स्वशिष्यंसम्यक्परीक्ष्य बंधमोक्षव्यवस्थानिरूपणव्याजेनगुरुः स्वशिष्यानुभवमाह चतुर्भिः श्लोकैः॥ १॥ श्लोकः तदाबंधोयदाचित्तंकिंचिद्वांछतिशोचति॥ किंचिन्मुंचतिगृह्णाति किंचिद्धृष्यति कुप्यति॥ १॥ टीकाः–तदेति हेशिष्य अतोममकथकुत्र हेयोपादेयकल्पने त्यंतयत्त्वयोक्तंतत्तथैव यतश्चित्तंविषयकांक्षायदावांछादिविकारवद्भवति तदैवजीवस्य बंधः इत्यर्थः॥ १॥ भाषाटीका –अबबंधमोक्ष कहतहै या तेबंध यातें मोक्षः हेपुत्र तदा बंधः तबही बंधन कब॰ यदाचित्तं किंचिद्वांछतिशोचति॰ जबहीचित्तकौं कोनहू वा-

नकी वांछा करैलाग्यौ· जब वांछा उपजी तब शोच आपुही उपज्यौ तब किंचिन्मुंचति गृन्हाति· एकवस्तु अप्रिय जानि त्यागे लग्यौ एकप्रियजानि ग्रहे लग्यौ तब किंचित्तु ह्ष्यति कुप्यति· काहूको हर्षमानि प्रसन्नहोई· काहूको दुःखमानि कोपकरै· तब अनेक प्रकारके अपारदुःखनिविषे सदाभ्रमें तातें एक आत्मस्वरूप छोडिकरि कौनहू वस्तुपर चित्त मनि आने· संसारको कारण एक चित्त उपज्यो· चित्त बाहेर नआवे दीन्हो· ह्दयविषे आत्मामों लीन राष्यो तौ तहांई लीनभए तातें समस्तको चिंतवनछोड्डु· ॥१॥ ॥

दोहा जबचित्तमैं चिंताविथा हर्षशोकअभिमान॥ लेणदेणमन मैबसे एहीबधनजान॥१॥ संस्कृत ॥

श्लोकः तदामुक्तिर्यदाचित्तनवांछतिनशोचति॥ नमुंचतिनगृण्हातिनह्ष्यतिनकुप्यति॥२॥ टीका· — तदामुक्तिरिति मोक्षोपिचित्तं वांछादिकं नकरोति तदामुक्तिरित्यर्थः॥२॥ भाषाटीका· — हेपुत्र तदामुक्ति तबहीमुक्तिकब· यदाचित्तंनशोचति· नकांक्षतिजब कछू चिंतवन नकरे· जबचिंतवनतें रहितभयो· न कौनहू वस्तुकी वांछा· नकौनहू वस्तुको शोच· नमुंचतिनगृण्हाति· तब नकछुत्यागै· नग्रहै· नह्ष्यतिनकुप्यति तबन कौनहू वस्तुतें हर्षमानि काहूको प्रसन्नहोई· नकौनहू वस्तुनें दुःखमानि· काहूको क्रोध करै· समभावविषें प्राप्तभयो· द्वंद्वनितें रहितभयो· तबही ब्रह्मतातें संसारको बीज चिंतवनहै· सो छोडिए· त्यागऊकरिये· कौनहू वस्तुविषे मनजाने नदीजे केवल एक आत्मस्वरूपके चिंतवनविषें रहिये इत्यादि॥२

दोहा· आशातृष्णाचित्तकी मिटैहर्षअभिमान॥ लेण

द्वेणमदक्रोधतज तबहीमुक्तिनिदान॥ २॥ संस्कृत ॥ तदेवपृथक् बंधमोक्षावुक्तौ अथ समुच्चयेन बंधमोक्षा वाह॥ ३॥ श्लोक तदाबंधोयदाचित्तं सक्तं का- स्वपिदृष्टिषु॥ तदामोक्षोयदाचित्तं नसक्तंसर्वदृष्टिषु ॥३॥ टीका:--तदाबंधइति· यदायदाचित्तंकास्वप्यना- त्मदृष्टिषुससक्तं तदाबंधः यदाचचित्तंसर्वास्वपिविषय· दृष्टिषु संसक्तंनभवति तदामोक्ष इत्यर्थः॥३॥ भाषा टीका·- हेपुत्र यदाचित्तंकास्वपि दृष्टिषु सक्तं जबचित्त कौ नहूएक स्थूल सूक्ष्म इंद्रिय मनोगोचर मोक्षादिक वस्त विषै आसक्त होइ तदाबंधः तबही वहई बंधन· यदाचित्तंअ सक्तं सर्वदृष्टिषु· जबचित्त समस्त जोहै स्थूल सूक्ष्म इंद्रि यमनोगोचर मोक्षादिक नाममात्र वस्तसामग्री ताविषै क हूंसदा चित्त न आसक्त होइ तदामोक्षः तब वहई मोक्ष संसारतें निवृत्त होनो·॥३॥ दोहा· मोक्षादिक आ- सक्तचित्त ताकों बंधनजान॥ निर्बंधन सबदृष्टिमें तबही मोक्षनिदान॥ ३॥ संस्कृत चित्तानुवृत्त्यासर्वा पि विषयदृष्टिः बंधहेतुस्तन्निवृत्तौ मोक्षइति पूर्वमुक्तं तथाप्यहंकारनिवृत्तौ मोक्षस्तदनिवृत्तौ बंधइति वदन् वशिष्योक्तमर्थमभिनंदितुमनुवदति ॥ ४॥ श्लोक यदानाहंतदामोक्षोयदाहंबंधनंतदा॥ मत्वेति हेलयाकिंचिन्माग्रहाणविमुंचमा॥ ४॥ टीका-- यदानाहमिति यदाहमित्येवरूपः प्रथमोध्यासोनर्थभू तोनिवर्त्तते तदाचमोक्षः यदाचननिवर्त्तते तदाबंधइति ज्ञात्वा हेलया अनायासेनैव हानोपादानादिक्रियाणामक र्तृत्वमास्ति अकर्त्ता आत्मज्ञानेन कर्तृत्वाभिमानोनिवर्त्तत इ

तिभावः॥ ४॥ ॥ इत्यष्टावक्रटीकायांगुरुप्रोक्तं बंधमोक्षव्यवस्थाप्रकरणं अष्टमम्॥ ८॥ भाषाटीका·-हे·तात यदानाहं·जब मनतें द्वैतभाव मिटायो एक अद्वैत भाव अन्योदेहादिकनिविषैंजो आत्मभाव अहंकारउपज्यौ हुतो सो दूरिभयो· तदामोक्षः तबही वहई छूटिवो·यदाहं जब देहविषै आत्मभाव अहंकार उपज्योकियहमें बंधनतदा·तबही वहई बंधन तातें इतिमत्वा·यो मानिकरि हेलयापि रूठेहू ख्यालहू पूर्वक कदाचित् देहैआदिदेकरि किंचित्-कोनऊ इंद्रिय मनोगोचर स्थूल सूक्ष्म सामग्रीताहि मांग्र-हाणविमुंचमा मनो वचनादिकनिहूं करि कदाचित् मति गृहे· मतिछोडहीतें मन षेंचिकरिएक आत्म स्वरूपविषैलीनहो·॥४॥ दोहा· अहंताछोडेमोक्षहै ममताबंधनमूल॥ यौंमानेसबरूठसे लेणदेणभ्रममूल॥ ४॥ ॥ श्रीधरसभास्कसगकी करतकुसंगतिनाश॥ जैसोदीपकनिर्मलो तैसोकरतप्रकाश॥ १॥ ॥ इतिश्रीअष्टावक्र-भाषाटीकाकोबंधमोक्षनाम अष्टमउपदेशसंपूर्णभयो·॥ ८॥ ॥ श्रीसीतारामचंद्रोजयति॥ ॥

नवमोपदेश प्रारंभः

श्लोकः शिष्योक्तानुभवस्यैव दार्ढ्यार्थं गुरुणोच्यते॥ निर्वेदः स्पष्टमष्टाभिरिच्छादित्यजनात्मकः॥ १॥ ॥ मत्वेति हेलयाकिंचिन्माग्रहाणेति यदुक्तं तत्किंद्वारमित्यपेक्षायागुरुरनुमोदनमुद्रयावैराग्याष्टकमाह ॥ १॥

श्लोकः कृताकृतेच द्वंद्वानि कदाशांतानि कस्यवा॥ एवंज्ञात्वेहनिर्वेदाद्भवत्यागपरोव्रती॥ १॥ टीका· कृतेति कृताकृते इदंकर्त्तव्यं इदमकर्त्तव्यमित्यभि

निर्वेशो द्वंद्वानि सुखदुःखादीनि कस्य कदा वा शांतानि निवृत्तानि अपितु न कस्यापि न कदापि शांतानीत्यर्थः एवंज्ञात्वा इह कृताकृतादिषु निर्वेदात् अभिनिवेशपरित्यागादेव त्यागपरो भव कीदृशस्त्वं अव्रती नास्ति व्रतं कुत्राप्याग्रहो यस्य सः ॥१॥ भाषाटीका· - रे पुत्र कृते अकृते न कदा कस्य वा द्वंद्वानि शांतानि· भई यह कर्म उत्तम है· याके करतें में द्वंद्व जे हैं संसार के भ्रमावनहारे तिनतें रहित होनु सुखी होऊं तातें यह कर्म करों· अरु भाई यह कर्म निषिद्ध है· या कर्मतें संसार को छूटिवो नाहीं· तातें यह न करो तो दृषु· या प्रकार वर्ततसंते कबहू काहूके द्वंद्व निवर्त भए· किन्तु कदाचित काहूके नाहीं द्वंद्व निवर्त भये· अधिक अधिक उपजें ज्यों घरिमें अग्नि लगी है· अरु घृत तैलादिकनिसों बुझावें कि भाई औरनिके जो अग्नि लागति है तो यों ही गागरि भरि भरि बुझावति हैं· अरु अग्निकौं तप्तजानि करि वायुकों शीतल जानि करि शांत करवे के निमित्त समिकरि पवन करै तो कबहूं शांत होइ किंतु अधिक वर्द्धमान होई· एवंज्ञात्वा· यों जानि करि इह निर्वेदात् या समस्ततें विरक्त व्हैकरि अव्रती भव त्यागपरः जिनि संसारतें छूटिबेकी इच्छा करी तिनि जो कछु उपजी सामग्री है स्थूल सूक्ष्म रूप सो सकल मनतें विसारी करि एक ब्रह्मविषें मन राखि करि एकरूप भए· इत्यादि ॥१॥ दोहा सुखदुखकर्णअकर्णके कभु किहको भये शांत ॥ मैं अग्रह यों जानिके काहे दोत अशांत ॥१॥ संस्कृत· चित्तधर्मत्यागरूपो निर्वेदस्तु कस्यचिदेवस्यात्र सर्वस्येत्याह ॥२॥ श्लोकः कस्यापि तात धन्यस्य लोकचेष्टावलोकनात् ॥ जीवितेच्छा

बुभुक्षाच बुभुत्सोपशमंगताः ॥ २॥ टीका -कस्या पीति- हेतात शिष्य सहस्त्रेषु मध्ये कस्यचिद्देवधन्यस्योत्प त्तिविनाशरूप लोकचेष्टावलोकनात् जीवितेच्छायाभोगे च्छादय उपशमंगताः इदंतु तादृशनिर्वेदसंपन्न शिष्यमभि नंदितुमेवोच्यतेनत्तूपदिश्यते प्रागुक्तमेव ॥ २॥ भा षाटीका - हेतात कस्यापिधन्यस्याः काहूएक धन्यपु- रुषकी लोकचेष्टावलोकनात् उपशमंगताः संसारविषै- जेनानारूप इंद्रिय मनोबुद्धि चित्त अहंकारतें उपजती चेष्टा निवर्त भई है एकसोधन्य है जीवितेच्छा जीवनकोजो- इच्छा अरु बुभुत्सा इंद्रियार्थ भोगनिकीजो इच्छा अरु- मुमुक्षो मोक्षादिकनि हूकी इच्छा इत्यादिक समस्त वां- छा अवांछा जाकी निवर्त भई है एकसो धन्य पुरुष है- औरनाहीं- याश्लोककरि संसारको भ्रम देषायो- यातें- शिष्य भ्रमके निकट नजाई- अरु त्यागी पुरुषकी महिमा- ब्रह्मादिकनितें श्रेष्ठ जनाई- शिष्यके मनमें उत्साह बढा यौंकि- देषरे पुत्र प्रथम तो मनुष्यदेह पाइवो- अति दु- र्लभ- बहुरि पायेतें जोकछुक भलीसंगती होइ तो ऐसो जत्न करौंके भाई सोकछू करीये- जो बहुत कालजीवनेर हिये कोऊ कहैकि सोजत्न करिये- जो स्वर्गादि लोकनि वि षै जाइ भोग करीये- काऊ एकजो परमदुःखमय संसार- देषिकरि विरक्त होई मोक्षकी वांछाकरे- विनुज्ञान आत्म स्वरूप कों समझै नाहीं- तातें थोरीथोरी झूठी जड वस्तु- विषै ललचाइ जांहि तातें यह भ्रमज्ञानविनु दुर्निवार है- ब्रह्मादिकनिलौं पूरिरह्यो है- तातें जिनि वांछानिवर्तक री सो एक धन्य तातें तूं एक केवल वांछा निवर्त करु एक-

आत्माकी भावनाराषि निवर्त होहि ॥२॥ दोहा· ॥
देखतचेष्टालोककी एसोलारवन एक॥ जीवनमरणरुमो
क्षकी इच्छातजीअनेक ॥२॥ संस्कृत· ननुज्ञा·
निनांसर्वत्रेच्छोपशमः किंहेतुक इत्यत आह॥३॥ श्लो
क· अनित्यंसर्वमेवेदं तापत्रितयदूषितम्॥ अ·
सारंनिंदितंहेयमितिनिश्चित्यशाम्यति॥ ॥३॥ ॥
टीका·- अनित्यमिति इदं दृश्यमानं सर्वं प्रपंचजातं
अनित्यं चैतन्ये ध्यस्तं तथापृथक् सत्वेनगृह्यमानं नसत् अ
ध्यात्मिकाधिदैविकाधि भौतिक तापत्रितय दूषितं· अ·
तएव असारंतुच्छं अतएव हेयं पृथक् सत्तयानैवादरणीयं·
इति निश्चित्यं ज्ञानीशाम्यति कुत्रापि इच्छांन कुरुते· ॥३॥
भाषाटीका· इदंसर्वअनित्यमेव· यहजो कछु इंद्रिय
मनोगोचर स्थूल सूक्ष्म विस्तार सो सकल झूठोहै· ज्यौंल
गिदेहादिकनि विषै अहंकार बुद्धिहै तौं लगि जानियतुसो
है· जब आपुको समुझै तब कछूहै एनाहीं · अरुजो कदाचि
तकहैकि जौंलगि ज्ञानकीउत्पत्ति नाहीभई तौंलगि देहमें·
अहंकारबुद्धि सदारही वोईकरै· ताते संसारऊ रहिवोई·
करैतो भलोइहै· तोकहत· तापत्रितय दूषित सांचेहू योहीहै
जौंलगि छूटिवो नाहीं तौंलगि साचसो है परि वाको रूप
कैसोहै· त्रिविधजे नानाप्रकारके संताप अध्यात्मिक· अ
धिभौतिक· अधिदैवक· जहांलौ त्रिगुणमयविस्तार सो
सकल महासंतापमयहै· एकक्षण शांतिनाहीं· तातैं अ
सारं अतिनिकृष्टहै· तातें निंदितं परमनिंद्यरूपहै· सा·
धुजननिकरि तिरस्कृतहै· ताहीतें हेयं मनोवचन कर्मादि
कनिकरि त्याज्यहै· एकनिमिष संगनहीं करणीयं इति

निश्चित्य याहीप्रकारनिश्चयकरित्हृदयमे राषिकरि शाम्यति आत्मस्वरूपको चिंतवनसंते ताहीविषें लीनहो. और कछू कारणीय नाहीं इत्यर्थः ॥३॥ दोहा· तापती नको दुःखहे ऐसोजगतअसार॥ निंदकज्यूंत्यागनकरो· इच्छाशोचनिवार॥३॥ संस्कृत· द्वंद्वारामारब्धकर्मवशादवश्यंभावित्वात्तत्रेच्छानिच्छेविहाय यथाप्राप्तभोगात् मुक्तिमवाप्नुयादित्याह॥४॥ श्लोक· कोसौ कालोवयःकिंवायत्र द्वंद्वानि नोनृणाम्॥ तान्युपेक्ष्य यथाप्राप्तवर्ती सिद्धिमवाप्नुयात् ॥४॥ टीका· कोसाविति यत्र नृणां द्वंद्वानि न कोपि इतिविचार्य तानि द्वंद्वानि उपेक्ष्य तत्रेच्छामनिच्छामकृत्वा यथाप्राप्तेषु अनायास सुखदुःखादीनि नसंति असौ कः कालः किंवा बाल्यादि वयोलक्षणा शरीरावस्थापितु उक्तयावर्ती सिद्धिं· मुक्तिमवाप्नुयादित्यर्थः तर्कशास्त्रादिज्ञानेषु निष्ठानकर्तव्यानानाविप्रतिपत्तिग्रस्तत्वात्॥ ४॥ भाषाटीका· - यत्रनृणां द्वंद्वानि· जहां मनुष्यनिके द्वंद्व निवर्त्त भये तहां असौकालः कः यहजो ब्रह्मादिकनिहूं करि महा दुर्जय कालहे सो क्यों करि प्राप्त व्हैसकै· जहांलो द्वंद्व तहांलों कालको राज्य जहां द्वंद्वनाहीं तहां कालको गम्य क्यों करिहोई· तहां एक केवल अविनाशी कालादिकनिको· प्रभुईश्वर अरु वयः किंवा जहां द्वंद्वनाहीं तहां बहिक्रम कैसो एकवयः क्रममें सुख पाइये· एकमें दुःख पाइये· तोजो सुखदुःखादिक द्वंद्वानितें रहित भयो ताको भेदाभेद कौनबाततें उपजे· वह देहही जाको मुक्त व्हैरह्योहै वाविषे काहूको हसल नाहीं· जानें तानि उपेक्ष्यति नि

द्वंद्वनिह्नीतें संसारमें छूटिवोजानिकरि स्वदयतें इनिके चित्वनहूकौं दूरिकरि यथाप्राप्तवर्त्ती अकर्त्ता व्हैकरि ज्यौंज्यौं आनिप्राप्त होई त्यौंत्यौं शरीरकौ वर्त्तावर्त्त सं तेआप साक्षीरूप तमासा देषतसंते सिद्धिं अवाप्नुयात् परमसिद्धिजो है ब्रह्मस्वरूप ताही प्राप्तहोई॥ ४॥ दोहा· जहानसुखदुखद्वंद्वहै तहांकालवयनाहिं॥ समैप्राप्तजोदैवतें वर्त्ततसिद्धिसमाहिं॥ ४॥ संस्कृत· नापिकर्मकनाप्यष्टांगयोगादिषु इत्याह॥ ५॥ श्लोक
॥ नानामतंमहर्षीणांसाधूनांयोगिनांतथा ॥ दृष्ट्वानिर्वेदमापन्नः कोनशाम्यतिमानवः॥ ५॥ टीका·- नानामतमिति महर्षीणांगौतमजैमिनिप्रभृतीनां मतंनानाविधं अपरिच्छिन्नंदृष्ट्वा तर्कशास्त्रादिभ्योनिर्वेदमापन्नः तथासाधूनांकर्मनिष्ठानांमतंनानाविधंकेचिद्धोमपराः केचिज्जपपराः केचित्कृच्छ्रचान्द्रायणादिपराः इति नानाविधंदृष्ट्वा कर्मभ्योपिनिर्वेदमापन्नः तथा योगिनांमतंनानाविधं केचिदष्टांगयोगपराः केचिन्मृदुदादिप्रसंख्यानपराइतिनानाविधंदृष्ट्वा ऽष्टांगयोगादिभ्यो निर्वेदमापन्नः केवलमात्मानुसंधाननिष्ठः कोनशाम्यतिकः सुखंनप्राप्नोतीत्यर्थः ॥५॥ भाषाटीका·- हेपुत्र निर्वेदंआपन्नोपिकः मानवः नशाम्यति संसारके अनेक नानाप्रकारके अपारजन्ममरणादिक दुःख देखिकरिपरमविरक्त भयोहै· यद्यपि मनुष्यः तथापि एसोकोनुहै सोसमस्ततें न्यारो व्हैकरि शांतताही प्राप्त होई· तौ क्यौंन शांतिहिं प्राप्त होई· महर्षीणांनानामतंदृष्ट्वा· भृगुमरीच्यादिकजे नानाप्रकारके बडे बडे ऋषीश्वर तिनिके

अनेक नानाप्रकारके मतने देषकरि अरु अनेक भांतिकी महिमाकरि युक्त देषिकरि अनेकनिकौं लगेदेषकरि अरु तथायोगिनां ताहीप्रकार नानाप्रकारके जे योगी तिनिके मते देषिकरि ते कोन योगी एक तो कर्मयोगी तेते कर्मयोगई दृढावे एकचक्रयोगीते यों कहेहैकि वायु अभ्यास करि षट्चक्र भेदिये. एककहैकि मायाको त्यागकरि सुखमय होई. यहइहैजोलों माया सो लग्योहै तोलों दुःखभय है जबछोडै तब सुखीहोई. और प्रभुको एकई सूक्ष्मम तीदेषिकरि निर्द्धार नहोई. उनमतेंनुमे अनेक लोदेषिये. यानि वृत्तिके मतेमें कोऊएक देषिये. अरु ताके तीनि यौं लोक बेगरो कहै. अरु बेगस्योई सोजानिये. वेदशास्त्रस्मृतिविषै जे कछूकर्म कहेहै. एकउनकरतें देषिये. मूर्षसें जानिये. ताते या निवृत्तिके मतमें कोनुआवै. तातें निवृत्त होनो परमदुर्लभहै॥ ५॥ दोहा. नानामतमहऋषिनके अरुयोगीजनसाथ॥ देषत होय निर्वेदना छूटतसकलविवाद॥ ५॥ संस्कृत. केवलज्ञाननिष्ठामेवाश्रित्य कर्मादिकं माकुर्वित्याह॥ ६॥ श्लोक कृत्वामूर्तिपरिज्ञानंचेतनस्यनकिंगुरुः॥ निर्वेदसमतायुक्त्यायस्तारयतिसस्वतेः॥ ६॥ टीका कृत्वेति निर्वेदसमतायुक्त्यानिर्वेदोनामविषयानासक्तिः तथाशत्रुमित्रेषु समता सर्वत्रात्मबुद्धिः युक्तिर्नाम श्रुत्यानुग्राहकस्तर्कः एतैः चेतनस्य सच्चिदानंदस्यमूर्तिपरिज्ञान स्वरूपसाक्षात्कारं कृत्वा तदनंतरं नास्तिकश्चिद्गुरुर्यस्य सःनकिंगुरुःएवंविधोयः सःसंसृतेसकाशादात्मानंतारयति॥६॥भाटी० – तोजो कदाचित्त कहैकि जो निवृत्त होनो दुर्लभइहै

तौ कहाजत्नकरिकरि मरियै· कूठोईश्रमतो सनु यहथों हीहैं परिऐसो कठिनभ्रम रूपसंसारतौ तरिवेकौंतो दुर्ल भइतो जौंगुरु षेवटनहोई तौ तातें याके तरिवे कौंतो कछु अवे श्रमनाहीं चेतनस्यमूर्ति सविज्ञान् कृत्वा· यहजडदे· हकेसंगतें जडसो ह्वैरत्योहै· जोजीव ताके स्वरूपकों ज्ञान् स्वरूप करिकें गुरुः किंसंसृतेः पारंननयति अपितु नयत्ये व गुरु परमदयालु कहा संसार समुद्रके पारहिनाहीं प्रा· प्तकरते· किंतुकरतेईहैं· तौकाहे करि पार करत हैं· निर्वे दसमतायुक्त्या· नतौ कौनहू वस्तुतें विरक्त करै· अरु नकौ नहू वस्तुविषें अनुरक्त करै· नकछु छोडावै· नग्रहावै· शु· भाशुभ पुण्यपाप स्वर्ग नरकादिक समस्तविषै मायाज नाई· समानबुद्धि बांछा अबांछा निवर्तकरिवो सो समा· नताईभई· परमयुक्ति ताकरिज्यौं षेवट पार करतुहै सो जोपारगयोचाहै सो आपनें सिरको भार समस्त नावमें छो डै· अरु आप कहूं करै करावैनहीं· केवल स्थिरव्है नाववि षें बैठरहै· तो सुखही पूर्वक पारहीजाई· और अनेकजत नकरैतो कछुनाहीं· केवल श्रमईहै· त्यौंजो संसार समुद्र पारहीगयोचाहै सो गुरु षेवटकी शरण आईकरि सम· ताजौ समस्त शुभाशुभविषे एकबुद्धि ता नाव विषे आ पनेसिरको जो संकल्पविकल्पादिक भारीभारसो छोडिक रिअरु ताहीनावविषे समस्त करिवे कराइवेतें निवर्त्तव्है करि आपु स्थिरव्है बैठे तो सुखही पूर्वक पारंगत होई और अनेकजतन करैतो केवल श्रमईहोई· अरु अधि कबूडिमरै॥ ६॥ दोहा· आतमज्ञानप्रकाशकर जी वाकारविचार॥ सुखदुखशमकरिकेगुरू क्यौन उतारैपार॥ ६

यहांसैंक्षेपकहै॥ ॥गुरुकौंएकहीयेसुकहतहै
विष्णुचेताः प्रशांतात्माविमन्युः सुहृदोनृणांसाधुर्महा
न्सदालोकेसगुरुः परिकीर्तितः॥१॥ याश्लोकविषैंसदै
वगुरुकहियतहै यहजोमंत्रोपदेशहै सोव्यवहारमात्र है
संसारसमुद्रकोंषेवटरूपसोगुरु कहियतहै तौगुरुसो
जोनामराख्योसोयाको अर्थ कहासोई कहीयतहै जोआ
पुतें अरुब्रह्मादिस्थावर पर्यंत यासंसार समुद्रकेजीवनें
तेगरिष्टश्रेष्ट होइ सो गुरुकहीये संसार समुद्रकों तारि
वेयोग्य तातें ब्रह्मा स्थावरपर्यंतजहांलौं कछू स्थूलसू
क्ष्म संसार विस्तारहै सोसकल तीनगुण अरु एक आत्मा
इनहीकोहै औरकछूनाहीं तातें इनमें गरिष्ट कोनुजोगु
रुकहीये एतो सकलसमान तौ सोंगरिष्टकौन विष्णुचे-
ताः जहांलों समस्तजीवहै तहांलों त्रिगुणमय व्यवहार
निविषै उत्पत्ति विनाशवंत सामग्रीविषै रहै परिजोउत्प
त्ति विनाशादि समस्त उपाधिनकरि रहित अरु समस्त
उपाधिनको मिटावनिहारो सर्व व्यापकजहांइ समरीये
तहांई प्रत्यक्ष अखंडित एक अद्वैत आनंद समुद्र सत्य
चैतन्य मन बुद्धि इंद्रियादिकनितेपरे परम शांति प्रकाश
स्वरूप जे ईश्वर तिनिविषें आसक्तव्हे चित्तजाको ताहीतें
प्रशांतात्मा परम शांतके संगतें समस्त संतापनितें नि
वृत्तव्हैकरि प्रकर्षकरिशीतलताकों प्राप्त भयोहै प्रकर्ष-
कहांजाशीतलताको पायो ते बहुरि कदाचित कछू सं
ताप वांछादिकनउपजै सदैव अक्षय सुखविषै मग्न
है ऐसोजोहै याहीतें विमन्युः शांत समुद्रविषै मग्न भ
येतें क्रोधाग्निकरि रहितहै मानापमानादि निंदादुःखा

दिकनिहूतें क्रोधाग्नि क्यों करि उपजै याहीतें नृणांसुख्य
दः जहांलों समस्त प्राणीहैं तिनको मित्र समान हितवां
छतुहै· ताहीतें समस्त प्राणिजाको मित्ररूप भये हैं जानेसो
कछू शुभव्यवहार आपने हृदयविषे होइतौ सोई समस्त
संसारविषे देषिये· ज्यों आरसीविषे इति अरु याहीतें·
साधुः समस्त इंद्रिय मन बुद्धि चित्त अहंकारादिक बढे
शत्रु जिमि साधि करि आपने वश करेहैं ताहीतें महान् अ
हंकारजोहैसो इंद्रिय मनके वश भये ते देहविषे बंधतुहै
तौ एसकल वशकीयेतें सर्वत्र आपुहीकों देषतुहै· द्वैत·
भावही करि रहितहै· अहंकारकैसो इति· तातें जो ईश्वरके
संयोगतें ऐसो भयोहै सो सबनिविषे गरिष्ट है सो सदा·
गुरु कहीयतु है इत्यादि ॥१॥ श्लोक· अकिंचनस्य·
दांतस्य शांतस्यसमचेतसः॥ मयासंतुष्टमनसः सर्वाः
सुखमपादिशः॥२॥ हेउद्धव शांतस्य जोपुरुषपर
मशांत शीतलताकों प्राप्त भयोहै· ताकों सर्वा दशः सुखम
पा दशऊ दिशा परम सुखरूप है· जहांई जाइ तहांईपर
मसुखतौ शांतकाहेतें भयो· अकिंचनस्य जहांलों कछू
इंद्रिय मनोगोचर सामग्रीहै सो सकल स्वप्नरूप जानि·
करि हृदयतें दूरिकरि न्यारो भयो· तातें अरु न्यारो भयोतें·
दांतस्य समस्त इंद्रिय मनविकारादिकनितें छूटि करि स्व
तंत्र भयो· ताहीतें समचेतसः भेदाभेदजो कछूहुतो सो
इंद्रियार्थनितें हुतो· तातें समान दृष्टि भयो एक आत्मा·
की दृष्टि आई देहदृष्टि दूरि भई· तौ इत्यादिक समस्त ल
क्षण काहेतें भये· इनसबनिको कारण कौनुतौ मयासं
तुष्टमनसः एक मेरो आश्रय गहेतें ऐसी संतुष्टता उपजी

सो समस्त सुखदुःखादिव्यवहार इच्छा अनिच्छा भूलि
होगई· परमसुख समुद्रविषें मन भयो जहां जाइ तहां
ई परमसुख इत्यादि तौजो कोई आशंका करैकि यह तो
जानो सत्यजो वांछादिकनिकेरहित भयो· संतुष्टभयो सु-
खीव्हैकरि समस्त व्यवहारनिरहित व्हैकरि स्थिर भयो प
रि कदाचित जन्मांतरको कस्यो देहको कर्म आइ प्राप्त हो
ई· अरु दुःखादिकनि विषें प्राप्त करीयै तो कहा दुःखन-
प्राप्त होई· यासंसार दशहू दिशि विषै कहूंतो स्वर्गादिक
नाना प्रकारके सुख अरु केहू नरकादिक नाना प्रकारके
दुःख तातें कदाचित कर्मसंयोगतें स्वर्गनरकादिकनिवि
षें प्राप्त होइतो कहा सुख दुःखादिक न प्राप्त होइनो या
को दृष्टांत· वसिष्ठजी श्रीरामचंद्रसों कह्योहै सो सुन हु·
॥२॥ श्लोक पूर्णेमनसिसंपूर्णं जगत्सर्वंसु
धाद्रवैः॥ उपानद्गूढपादस्य ननुचर्माश्रितेव भूः॥
३॥ वसिष्ठजी कहतहैकि देषहु रामचंद्र यह समस्त
संसार सुखदुःखादिव्यवहारतें मनके करेहैं· नाहींतो
एक अद्वैत आत्माको कैसो जन्म कैसो मरण· कैसो सु-
खदुःखादिव्यवहार· परि केवल एक मनकोहै तो कौन
भांति देषहु· मनजोहै सोचंद्ररूपहै सो सोरह कलाकरि
संजुक्तहै· परिज्यों चंद्रमाकीकला नको देवता पान करि
लेहि अमृतपीलेहि· अरु चंद्रमा क्षीण व्है जाई शोभा
करि सुखकरि प्रसिद्धता करि रहित होई कोऊ जानै ना-
हीं· उत्पत्ति विनाशसें होई· बहुरि जब कला आवती जाहि
तब शोभा सीतलता सुख प्रसिद्ध इत्यादिकनि करि यु
क्त होतेजाई· जब सोरहऊकला आइ प्राप्त होहि· तब-

अद्वैतलक्षण होइ परमशीतल प्रकाश अमृतमय होई
समस्त अग्निसूर्यादिकृतजो औरनिकों संताप ताहूको
दूरिकरि शीतल करै त्योंही मनकीजे सोरह कलातिनको
इंद्रियनिके अधिष्ठाता देवतापानकरि बैठेहैं तातें ऐसो
दुःख समुद्र विषे प्राप्तहै· तातें पूर्णो मनसि·जब श्रीगु-
रुकेशब्दकरियाको जन्म होइ अरु पूर्ण होते होइ सोर
हऊकलानिकरि पूर्ण होई तब सर्वेजगत्सुधाद्रवैः पू
र्णं संपूर्ण संसार सोऊ अमृतप्रवाहकरि पूर्णहै· ज्यौं
पूर्णचंद्रको जेशीतलजल तुषारादिकते शीतल अरु-
जे तप्त अग्न्यादिक तेऊ शीतल· याहीकी शीतलताकरि
वैसकल सीतलसे होहिं· परिवे ज्योंहीहैं त्यों समस्तसं
सार तोज्योंकि त्योंही रहै· परियहजो अमृतमयभयो·
तातें केवल याहीको संसार अमृतमय भयो· तहां और
दृष्टांत·उपानगूढपादस्यभूः चर्माश्रिता एव पायतन-
निकों पहिरैहैजो पुरुष ताकोंसमस्त जो भूमि सो चर्मही
करि वेष्टितहै· ज्यौं कदाचित कौनहू संयोगतें कांटेपा
षाणादिक किंवा उत्तम ठौरि वट वस्त्रादिक किंवा पाव
न अपावन वस्तुपरपायधरै तौहू यह संबंधितें न्यारोप
रिभूमि चर्मसों वेष्टित नाहीं त्योंही संसारके सुखदुः
खादिकनितें यह न्यारो· ॥ ३॥ ॥ इतिक्षेपकः॥
॥ यहांतकक्षेपकहै॥ संस्कृत चेत
नस्यस्वरूपज्ञानोपायमाह ॥ ७॥ श्लोक· पश्य-
भूतविकारांस्त्वं भूतमात्रान्यथार्थतः ॥ तत्क्षणा
द्बंधनिर्मुक्तः स्वरूपस्थो भविष्यसि॥ ७॥ ॥
टीका·-- पश्येति हेशिष्य भूतविकारान्देहेंद्रियादीन्

यथार्थतस्तत्वतः भूतमात्रान्यश्यन तु आत्मस्वरूपान् एवंसति तत्क्षणात् बंधनिर्मुक्तः शरीराहंभावनिर्मुक्तः सन् शरीरादिविविक्तात्मस्वरूपस्थो भविष्यसि शरीरादावनात्मतया ज्ञातेसति तत्साक्षिभूत आत्मा झटिति स्फुरेत् इतिभावः॥ ७॥ भाषाटीका- हेपुत्र त्वंभूतविकारान्यः पश्यन् तू एजेते कछु ब्रह्मादिस्तंब पर्यंत चराचर हैं ते समस्त विनसतेदेषि विनाशवंत जानिकरि हैं कैसे ए समस्त यथार्थतः भूतमात्रान् जो विचारि देषीयैं तौ केवल पंचभूतई हैं पृथ्वी आप तेज वायु आकाश एई हैं औरकछू नाहीं तातें एपंचभूत ई उपजे तें विनसतेहैं तो इन देहादिकनकी कौन स्थिरता यों या प्रकार समस्त विनाशवंत जानि आत्माकौं अविनाशी जानि संग छोडि करि तत्क्षणाद्बंधनिर्मुक्तः ताहीक्षण समस्त बंधननितें मुक्त व्है करि स्वरूपस्थोभविष्यसि आत्मस्वरूपविषै लीन व्हैहै तातें जबही येतनो जतन करै तबही निवृत्त आजु तो अरु कहूं कल्पांतर तो तातें यह जतन अबही करुन्या है तनानादुःखनितें रहित हो एकक्षण गाफल मत होहि॥ ७॥

दोहा- देखतत्वनिजबोधतें पांचौभूतविकार॥ तब निर्बंधन होयकै स्थितस्वरूपनिर्धार॥ ७॥ संस्कृत- नन्वेवमात्मनिज्ञातेपि नत्रनिष्ठा कथंस्यादित्याशंक्य वासनात्यागादित्याह॥ ८॥ श्लोक वासनाएव संसार इतिसर्वाविमुंचिताः॥ तत्त्यागो वासनात्यागात्स्थितिरद्य यथा तथा॥ ८॥ इतिनिर्वेदाष्टकम्॥ ९॥ टीका- वासनाइति वासनाविषयए वइति कारणात् ता वासनास्त्वं विमुंच वासनात्यागात्

निष्ठायां सत्यां तस्य संसारस्यत्यागइत्यर्थः अद्य अधुना वास
नात्यागे सति स्थितिर्यथा तथा प्रारब्धं तथास्थितिरित्य·
र्थः ॥८॥ इतिश्रीमद्विश्वेश्वरविरचितटीकायांगुरु
प्रोक्तं निर्वेदाष्टकंनाम नवमं प्रकरणंसमाप्तम् ॥ ९ ॥ ॥
भाषाटीका· - हेपुत्र वासनाएव संसारः संसारजोहै·
सो वासनाईहै· और कछु हैएनाहीं· जो मनविषें कछूचिं
तवनकस्यौतो सोही बाहेर स्थूलव्है प्रगटि बंधन होई ता
तें यौंहू मति मनविषें आनैकि भाई एतो बंधन मोकौ हुतो
सोमें त्याग्यो अब यह वस्तकौ त्यागकरों ताते इतिसर्वा
विमुंचनाः यों जानिकरि मनके चिंतवन संकल्प विकल्प·
त्यागु· वासनात्यागात्तत्त्यागः ज्योंज्यों वासनात्यागेत्यौं
त्यौं संसारको त्याग जबसमस्त वासना छूटी तबसंसार
छूट्यौ· अरु यौं मतिजानेकि संसारको कहूंपार है तहांसं
सारछोडि जाऊं तौ निवृत्त होऊं किभलो अबही नकछू ज·
तन करौं· वहविनाशवंत कहीयतुहै· तातें जब विनसिजा
ईगी तबमैं सहजही निवृत्तव्हैहौं· तौ यौं कदाचित भूलि
हू मनमें मति आनै देषि· यथा अद्यस्थितिः जौंही अब·
हैं तथा सदैव· यहतो सदैव रहतुहै· विनाशवंत वातें जो
एके उपजै· एके विनसै· ज्यौं जल विषें बुद्बुदाज्यों· वृक्ष वि
षें शाखा पान पुष्प फूलादिक अनादि अनंत अपार तातें
जाकी वासना नाहीं ताको संसार नाहीं· और सबनिके वा
सनाहै तातें संसार क्यों दूरिहोइ तातें केवल वासना दूरि
करु· जब आप सुखी तब समस्त लोकादिक जहांजाइ
तहां सुखमय· अरु आपु दुःखी तो जहांजाइ तहां दुः
खमय ॥८॥ दोहा सर्ववासनाजगतहै ताकौंत्या

गस्कज्ञान॥ जोजगत्यागीवासना जाकीस्थितमतिमान ॥८॥ ॥ श्रीधरबुद्धीबोधतें जेकोइ बोधकहोय ॥-ज्यौंनिद्रामैदोज्ञऐ किसेजगावैकोय॥१॥ ॥इति श्रीअष्टावक्रभाषाटीका ताकोनिर्वेदाष्टकनामनवमोपदेशसंपूर्णभयो॥९॥ श्रीरस्तुशुभम्‌·

दशमोपदेशप्रारंभः

श्लोकः विषयाणामभावेपितुष्टिर्निर्वेदईरितः॥ तत्सिद्ध्यर्थंचविषयेवितृष्णंशान्तिरीर्यते॥१॥ ॥ विषयैर्विनापिसंतोषरूपोनिर्वेदः प्रागुक्तः अथेदानींविषयतृष्णोपशममभिनंदनमुद्रयागुरुराह॥१॥ श्लोक ॥ विहायवैरिणंकाममर्थंचानर्थसंकुलम्‌॥ धर्ममप्येतयोर्हेतुंसर्वत्रानादरंकुरु॥१॥ टीका--विहायेति· कामंवैरिणंज्ञानशत्रुंविहाय अर्थमनर्थसंकुलं अर्जनेरक्षणे व्यये ऽनेकशोकदुःखसंकुलं अर्थंविहायतथा-एतयोः कामार्थयोः अनर्थयोर्हेतुं धर्ममपिविहायसर्वत्र त्रिवर्गहेतुकर्मसु अनादरंउपेक्षांकुरु॥१॥ भाषाटीका·- हेपुत्र· वैरिणंकामंविहाय महाशत्रुजोहैकाम ताहि छोडिकरि अर्थंचानर्थसंकुलं· अर्थसञ्चयजोहै सोअनर्थकको भंडारहै· सोछोडिकरि धर्मेअपि धर्मकोंछोडिकरि सर्वत्रअनादरंकुरु· मोक्षादिक सकल वस्तु विषें कदाचित मनको मति प्राप्ति करै· जब मनमें कोनऊ कामना उपजेतब ताकेनिमित्त अर्थ संग्रह करै· अरुजो कामनानाहीं· अर्थसंग्रहै· यौंही सहजही भयोतो कामना· कछु उपजै· औरऊपजैताते काम अरु अर्थ दोऊ छोडियै तोजो कदाचित कहैकि भलोकामतो छोडियै परिअ

अर्थतेंतो अनेकधर्म होहि दरिद्रसों कछू न होई· तातें अर्थक्यों त्यागिये तो सुन· हे पुत्र याधर्मके निमित्त तू अर्थ· संचय कहे· सो धर्म अर्थ अरु काम इन दुहूतें बड़ो शत्रु जानिकरि छोड़िये काहेतें· एतयोर्हेतु· एजो कोऊ उपजतेहें तें केवल एधर्मतें उपजतेहें· तातें जो एक धर्म कस्यो तो समस्त करैहै तातें अर्थ धर्म काम मोक्ष समस्तते चित्त वैराग्य राख· ॥ २॥ दोहा धर्मकियेधनहोतहै धनतेंकामविचार ॥ वहतीनोंअरिज्ञानके मनतैंदूरिविहार ॥ २॥ ॥ संस्कृत· ननु मित्रक्षेत्रादिफलेषु कर्मसु कथमनादरः इत्याशंक्य मित्रादीनामनित्यतामाह ॥ २॥ श्लोक स्वप्नेंद्रजालवत्पश्य दिनानि त्रीणि पंच वा ॥ मित्रक्षेत्रधनागारदारदायादिसंपदः ॥ २॥ टीका·-- स्वप्नेंद्रेति हे शिष्य मित्रादिसंपदः स्वप्नेंद्रजालवत्पश्य यतो दीनानि त्रीणि पंच वास्थास्यतीत्यर्थः ॥ २॥ भाषा टीका· -- हे पुत्र मित्रक्षेत्रधनागारदारदायादसंपदः॥ जो मित्रकहियतुहे अरु देशभूमि नगरग्रामादिक लक्ष्मी अनेक भांतिके गृह स्त्री अनेक प्रकारकी पुत्र जे अनेक और जे नाना प्रकारकी हस्ती हयादिक संपत्ति ते समस्त स्वप्नेंद्रजालवत्पश्यन् ज्यों स्वप्नदेषिये अरु सत्यसो जानिये· अथवा बाजीगरकी बाजी ज्यों दृष्टिबंदतें सत्यसी जानिये परिहे सकल मिथ्या· दिनानि त्रीणि पंचवा· किंतु आपुही छोडि जाई· कि वेई छोडि जाई· क्षणभंगूर हैं तातें यों जानि करि कदाचित् कोनहू प्रसंग करि इनि विषेंमनु मति प्राप्त करै इत्यर्थः ॥ २॥ दोहा· मित्रक्षेत्रधनधामघर दाससुतसुखकेल॥ दिनापांचहेस्वप्नसे ज्यूं

बादीगरखेल॥२॥ संस्कृत· सर्वत्रानादरंकुर्वि-
त्यनेनोक्तंवैतृष्ण्यंपुरुषार्थहेतुरित्याह॥३॥ श्लोकः
यत्रयत्रभवेत्तृष्णा संसारंविद्धितंतदा॥प्रौढवै-
राग्यमास्थाय वीततृष्णः सुखीभव॥३॥ टीका-
यत्रयत्रेति यत्रयत्रयेषुयेषु प्रसिद्धेषुविषयेषुतृष्णाभ
वेत् तंतमेवसंसारंविद्धिविषयतृष्णया एवकर्मद्वारा
संसारहेतुत्वात् अतःप्रौढवैराग्यंप्राप्तेःप्रीत्यभावमा
स्थाय वीततृष्णअप्राप्तेर्थैच्छारहितः सन्नात्मनिष्ठयासु
खीभवेत्यर्थः॥३॥ भाषाटीका· तौजौकदाचित
कहैकि यह समस्तत्याग करि कहुं एकांत जाइये· तो यहब
डो अज्ञान कहीये· यह निवृत्त मार्ग सूक्ष्म मार्ग इंद्रिया-
दिकनितें न्यारो मनकरि चलनो· तातें तोसों सुखही पूर्व
क संसारको त्याग काहीं· अरु सुखप्राप्ति कहांदेखु यत्र
यत्र भवेत्तृष्णा· जाही जाही वस्तुविषे चाह होई· संसार
विधितत्रवै· सोई सोई संसार जानु· वहई बंधन· तातेंप्रौ
ढवैराग्य आस्थाय· भावैघ नरहु भावैग्रहरहु· केवलस
मस्त इंद्रिय मनोगोचर सामग्रीविषें परम दृढवैराग्यआ
नि करि मनसों त्यागिकरि वीततृष्णाः तृष्णा दूरिकरि
आगे कोनऊ बांछा मतिकरै· विरक्त व्हैकरि सुखीभव·
सुखही पूर्वक संसारतें निवृत्तव्हैकरि परम शांत स्वरू
पविषें मग्नहो इत्यर्थः॥३॥ दोहा· जहांजहांतृ
ष्णावधै तहांजानिसंसार॥ बैठप्रबलवैराग्यमें गतइ-
च्छासुखसार॥३॥ संस्कृत· अमुमेवार्थंरच
नांतरेणाह॥४॥ श्लोक तृष्णामात्रात्मकोबं
धस्तन्नाशोमोक्षउच्यते॥ भवासंसक्तिमात्रेणप्रा

प्तितुष्टिर्मुहुर्मुहुः ॥५॥ टीका· – तृष्णामात्रेति तृ
ष्णामात्र स्वरूप एवायं बंधः कर्मवासना बंधहेतुत्वात् त-
न्नाशस्तृष्णा नाश एव मोक्षो निवृत्तिहेतुत्वात् तन्नाशे मो-
क्षइत्यत्र हेतुमाह· भवेति भवतीति भवोदेहादि विषय
स्तत्रसंगाभावमात्रेणमुहुर्मुहुर्वारं वारं प्राप्ति तुष्टिः आ-
त्मप्राप्त्यासंतोषः स्यात्तदेव तृष्णापगमो मोक्ष इत्यर्थः प्रा
प्तिस्तुष्टिरिति पाठे प्राप्तिः तुष्टिश्चस्यात् इत्यर्थः ॥ ४॥ ॥
भाषाटीका· – तृष्णामात्रात्मकः बंधः देषरेपुत्र कहा-
त्यागि कौनस्थलविषें रहिये· त्रिगुणमय ब्रह्मांड· त्रिगुण
मयदेह तातें जहांरहे तहां ब्रह्मांडमों अरुदेहमों तातें-
रहिवेकी कछु मनहीन आनिये· देषु यात्रिगुणमयवस्तु
विषें जाहीपर तृष्णा सोइ बंध· और बंधनाहीं मनकोबं
धिवोसोईबंध· तन्नासोमोक्षउच्यते· सकल वस्तुझूठो·
परमदुःखदायकजानि तिनि सबनितें मनकों जो छोडा
इवो सोई छूटिवो कहिये· भावसंसक्तिमात्रेण प्राप्तितु
ष्टिर्मुहुर्मुहुः जोकछुउपजी अरुविनाशवंत सामग्रीहैता
विषै कौनहू थोरीहू वातविषें मनकों जो प्राप्त करिवो नाही
तेमुहुर्मुहुः वारंवारस्पष्टेप्राप्तिः अनेक नाना प्रकारकेज-
न्ममरणादिकनि विषें पर्यौ कदाचित सुख पावै नाहींभ्र
मतेंईरहे तातें जहांभावे तहांरहु· ज्यौंभावैत्यौंरहु·या
पर सकलको झूठीजानि कदाचित कौनहू प्रसगहू करि-
मनको मति प्राप्ति करै इत्यर्थः॥ ५॥ दोहा· तृष्णा
बंधन आत्मकों विनतृष्णासुखभवन॥ देहादिकआश
क्तिहै ताकों आवागवन॥ ४॥ संस्कृत ननुबुभु
त्सारूपा तृष्णा कथंत्याज्ये त्याशंक्याह॥ ५॥ श्लोक

त्वमेकश्चेतनः शुद्धो जडं विश्वमसत्तथा ॥ अविद्यापि न किंचित्सा का बुभुत्सा तथापि ते ॥५॥ टीका॰ त्वमेक इति इह जगति त्रय एव पदार्थाः आत्मा जगदविद्या च तत्रात्मानावस्त्वमेवैकश्चेतनः शुद्ध इति न तु चिद्भिन्न इति स्वात्मानमेवैकं पूर्णं जानीहि नान्या पुनरात्मबुभुत्सा युक्ता नापि जगद्बुभुत्सा युक्ता जगतः असत्वात् जडत्वाच्च नापि अविद्या बुभुत्सा युक्ता तस्या अपि सदसद्विलक्षणा रूपानिर्वचनीयत्वात् तथा च तव बुभुत्सापि का युक्ता न किंचिदस्तीत्यर्थः ॥५॥ भाषाटीका॰ -रे पुत्र त्वं एकः तूं एक ही अद्वैत है॰ दूजो है ए नाहीं॰ चेतनः परमचैतन्यस्वरूपः अरु शुद्धः परमनिर्मल अजन्मा अविनाशी जड विश्वं॰ यह संसार समस्त जडरूप तथा वाही प्रकार असत् उपजै विनसै खंडित अशुद्ध तातें अपि अविद्या॰ केवल आपने मन ही को फेर है॰ और कछु है ए नाहीं॰ ऐसे तेरे अद्वैतस्वरूप विषै द्वैत ऐसे क्यों संभवै॰ तातें तथापि ते का बुभुत्सा॰ तो हु तेरे कौंन भोग भोगवेकी वांछा है॰ तूं आपु कौंतो समुझ इत्यादि ॥५॥ दोहा चेतन एक हि शुद्ध है जड असत्य संसार ॥ वृथा अविद्या जानि कै मिथ्या भोग निवार ॥५॥ संस्कृत जडं विश्वमसदित्युक्तं तद्विशदयति ॥६॥ श्लोकः राज्यं सुताः कलत्राणि शरीराणि धनानि च ॥ संसक्तस्यापि नष्टानि तव जन्मनि जन्मनि ॥६॥ टीका॰ - नानाजन्मकृतनष्टानीत्युक्तो विश्वमसदित्यर्थः ॥६॥ भाषाटीका अरे पुत्र राज्यं सुताः कलत्राणि संसक्तस्यापि तव नष्टानि अनेक भांतिके राज्य॰ अनेक भांतिके पुत्र॰ अनेक भांति

कीस्त्री इत्यादिकनिविषें परम आसक्तऊरह्यो जो तूं ता
केजन्मविषे नाशही प्राप्तभयो हैं. कछुसंख्याईनाहीं.
अरजन्मांतराण्यपि. उनकी कहा कहीये. जाकेवे साथी
हूं तेतेदेहादिकऊनरहे. जिनको अनेक भांतिकरि पोष.
तुहुतो. सुखानिच. औरजे इंद्रादि लोकनिके सुखतेऊ
ते केतेक वारनि पायेहैं. अरु गयेहै तातें तिनिसों कहा.
प्रीतिकरिये. जे छोडिजाते बिलंब नकरे. अरु जिनिकीप्री
तिनें अविनाशी आनंदस्वरूप आपकों वारवारजन्म.
मरणादि अरु अनेकदुःखसे प्राप्तही होहि तातें ऐसेप
रमशत्रु बेगही दूरिकरिये. जातें निरंतर आनंद पाइये.
॥६॥ दोहा राज्यदेशसुतकामिनी सबसुख.
सुधनशरीर॥ नाशहोन आसक्तितें जैसीचपल समीर
॥६॥ संस्कृत. बुभुत्सापि नकर्त्तव्येति प्रागुक्तं
अथधर्मार्थकामेष्वपीच्छा नकार्येत्याह॥ ७॥ श्लो
क. अलमर्थेन कामेन सुकृतेनापि कर्मणा॥ ए
भ्यः संसारकांतारे नविश्रांतमभून्मनः॥ ७॥ टी
का.- अलमिति अर्थादिना अलं अर्थधर्मकामेषु इ
च्छानकार्येत्यर्थः अत्रहेतुमाह. यतः कारणात् संसार
कांतारे संसारलक्षणे दुर्गमे वर्त्मनि भ्राम्यत्सुएभ्यः का
मार्थेभ्यः विश्रांतं भ्रमणविच्छेदो नाभूद्‌तोर्थादि तृष्णा
नकर्त्तव्येत्यर्थः॥ ७॥ भाषाटीका.- देषरे पुत्र. अ
र्थेन कामेन अलं अबहूतूं परम अनर्थरूपजे अर्थ अरु
सदाके शत्रुजे काम तिनितें पूरो देहि. तृप्तिमान कछु सं
ख्यानाहीं. जबकोतूं इनकीप्रीतितें भ्रमतुहै अरु सु.
कृतेनापि कर्मणा जाकोतूं कहतुहै कियहसुकृतय

हपुण्य कर्म करों जो सुख पाऊं ताहूतें अब पूरे देहि॰ एत
नेई दिन जो सुख पायो सोई बहुत करिमानि अरु जो कदा
चित कहैंकि अर्थ अरु कामतो त्यागिये परि धर्म कोतो वे
दशास्त्रादिक कोऊ निषिद्ध नाहीं करते धर्मतें क्यों रही
ये तोसुनु॰ देष अर्थ अरु काम एदोऊ धर्म हीतें उपजते हैं
याधर्मविनु न अर्थ उपजै॰ अरु न कामउपजै॰ एकधर्मतें
तीन्यो होंहि॰ एक धर्म विनु तीनहू परम शत्रुनिको नाश हो
ई॰ ज्यों घरमें बीज है॰ अरु बोये नाहीं तौं कछू कदिन नि
मेषाइ लीजै रहै नाहीं॰ जोउत्तम भूमि सवारिकरि बोये अ
रु ज्यौं ज्यौं सींचिये त्यौं त्यौं कैलऊ विस्तार होई तोजो लौं
या षेतीके उद्यममें रहै॰ धर्मभूमिसो संयोग होइ तबवि
स्तार होई नाहीतो क्षीण व्है जाहि॰ ताते बीज रूपजे का
मनाते समस्त बेगेई षाइ लीजै॰ धर्म भूमिसों संयोग नक
रि वा॰ एसबनितें विरक्त व्हैकरि॰ परम शत्रु जानिकरि मन
षेंचि लीजै॰ कदाचित भूलि नजाइ दीजै॰ एभ्यः इनितीनि
हू महा शत्रुनके संगतें संसार कांतारे॰ संसारई भयोजो॰
महाविषमपंथ ताविषें मनः विश्रांतं अनुभूत्॰ जन्मजन्म
विषें जब ए आवैं तब मित्र कोसो रूपकरि आवैं॰ आइ॰
करि आपनो राज्यकरि प्राणीकों बंधमें डारिकरि रहै॰ अ॰
रु ऐसे मोहिडारै जोयह प्राणी भलोई सो मानि लेई ज्ञा
नादिकनिको नाश भये तें उनहीके राज्यको भलो करिमा
नै॰ अरु जब ए क्षीणसे होते देषै॰ तब महा दुःख पावै॰ अ॰
रु बहुत उद्यम करि वर्द्धमान करै ताते एक क्षणऊ कदा
चित स्वतंत्र नहोइ॰ महादुःख जन्म मरणादिकनि विषें
भ्रमते रहै॰ ताते परम शत्रु जानि व्याकुल व्हैकरि इनको

दूरिकरु· एसकुलजडहैं तैही गहि लयेहैं· तातें एनिर्वल हैं· तूशक्तिवंतहै· आपने स्वरूप को समुझिकरि स्थिरहो किमन्यत्॥ ७॥ दोहा कामकर्मधन सकृतनपै पूर्णभयोचितठाम॥ इनतें वन संसारमें मननभयोविश्राम॥ ७॥ संस्कृत· तृष्णाया उपशमः प्रागुक्तः अथक्रियोपशममाह॥ ८॥ श्लोक· कृतंनकतिजन्मानिकायेनमनसागिरा॥ दुःखमायासदंकर्मतदद्याप्युपरम्यताम्॥ ८॥ इत्युपशमाष्टकं॥ टीका· - कृतमिति हेशिष्य· आयासदं प्रयासप्रदं अतएवदुःखं कर्मकायादिनाकतिजन्मानि नकृतं· अपितु यावदद्यप्राचीन सर्वजन्मस्वपि कृतं कर्मणा तुल्यानर्थ एवलब्धस्तस्मा दद्यापि अधुनाकर्मभ्यउपरम्यताम्॥ ८॥ इत्यष्टावक्रेगुरुप्रोक्तोपशमाष्टक प्रकरणम् दशमम्॥ १०॥ भाषाटीका· - रेपुत्र· कतिजन्मानित्यया कर्मनकृतं केतेकजन्मतें कर्मनाहीं करे कछु संख्याहै केसेकर्म दुःखं दुःखरूपईहै· आदि अंत मध्य· आप दुःखरूप अरु और अनंत महा दुःखनिके· उपजावनि हारेहैं· बहुरिकेसेहै आयास्पदं मायाके ग्रहहैं· ज्यौं एकशत्रुके नगरमें जाइ भूलिपरीये तो वह और कहां चाहतुहै· आपने वसकरि पायो वैगेही मारिलेई· ज्यौं जे कर्मनिविषैं प्राप्त भयो तौं मायाके घरगयो छूटिवो काहेकों· कर्ममायाको ग्रह· निः कर्म ब्रह्मकोघरे जहाजावें तहां जाई· तातें कायेन मनसागिरा· मन वचन कर्मकरि अद्यापि उपरम्यतां अबहूतोनिवर्त हो· कदाचित मन वचन कर्मकरि मायाके गृहविषे मतिजाहि· निः

कर्म ब्रह्मके घरमें स्थिर रहु· किंबहुना ॥८॥ दोहा
कायावाणीदेहतें नकियैंजन्मप्रवर्त ॥ तजमायाधर-
कुकर्मकों अबतोहोहुनिवर्त ॥ ८॥ श्रीधरश्रोताब
हुतहै भेदसमुझकेमाहि ॥ तोलकनकसमगुंजहैमो
लकनकसमनाहि ॥ १॥ इतिश्रीअष्टावक्रभाषा
टीका ताकोउपशमाष्टकनाम दशमउपदेशसंपूर्णभ
यो ॥ १०॥ श्रीकृष्णोजयति ॥

एकादशोपदेशः

श्लोक· उक्ताशांतिर्निर्विज्ञानं विनाकस्यापिजाय
ते ॥ इतिनिश्चिनुमेवाहगुरुर्ज्ञानामृताष्टकम् ॥ १॥
॥ उक्ताशांतिर्विज्ञानादेवस्यान्नत्वन्यथेति बोधयितुंज्ञा
नाष्टकमाह तत्रादौज्ञानसाधनान्याह ॥ १॥ श्लोक
॥ भावाभावविकारश्चस्वभावादितिनिश्चयी ॥
निर्विकारोगतक्लेशः सुखेनेवोपशाम्यति ॥ १॥ ॥
टीका· – भावाभावेति भावाभावरूपविकारःस्वभावा
त् मायातत्संस्काराद्देवजायते· नतुनिर्विकारादात्मन
इतिनिश्चयवान् पुरुषो निश्चयबलात्· सुखेनानायासे
नैवोपशाम्यति ॥ १॥ भाषाटीका· भावाभाव
विकारश्चस्वभावात् जन्ममरण अरु अपारजे सुखदुः
खादिक तेसकल आपने मनकरि आपुकों करिलीए·
नाहीतो आत्मा अद्वैतजाके दूजो हैएनाहीं· अजन्मा
अविनाशी आनंदस्वरूप ताकों कहा· इतिनिश्चयीया
बुद्धिको जाकेसुनिकरि निश्चल भावभयोसो प्राणीनि
र्विकारः तहांलक्षण सुखदुःख भयजे नानाप्रकारकेवि
कार तिनितें रहितभयो· तबगतः क्लेशः जोक्लेशहु-

तो सो सकल सुख दुःखनितें होतु हुतो· तातें दूरिभयो· तब सुखेनैवोपशाम्यति तबनकहूं आवै नजाईने कछू· करैनकरावै· नकछुत्यागै नगृहै सुखही पूर्वक ब्रह्मवि षैं लीन होई· तातें समस्त मनके भाव दूरिकरु· ब्रह्मवि षै सुखेहीलीनहो ॥१॥ दोहा· भावाभावविका रज्यो सवस्वभावतेंजान ॥ योंसमुरुगनक्लेश अति· सुखतें ब्रह्मसमान ॥१॥ संस्कृत· ननुमाया जइत्यादेवचकथंभावाभावविकारइत्याशंक्याह ॥२॥ ॥ श्लोक· ईश्वरःसर्वनिर्माता नेहान्यइतिनिश्चयी॥ अंतर्गलितसर्वाशः शांतः क्वापिनसज्जते॥२॥ टी का· – ईश्वरइति ईश्वरएवसर्वनिर्मातानत्वन्योजीवःई श्वरपरवशत्वात् इतिनिश्चयीपुरुषोनिश्चयवशादेवांतर्ग लितसर्वाशः गतसर्वतृष्णः अतएवशांतोनिश्चलचित्तः सन्क्वापिनसज्जते ॥२॥ भाषाटीका· – सर्वनिर्मा ता ईश्वरः उत्पत्तिप्रतिपालसंहारादि पुण्य पाप सुख- दुःख माया काल कर्मादिकनिको कर्त्ता एक ईश्वर नारा यणहै· हेनान्यः सकलवस्तु निर्मे थोरियो करिवेको· और दूजो कोऊ कदाचित समर्थ नाहीं· ज्यों बेहर वाजी विषैं नानाप्रकारके देहधारीहैं· और नाना प्रकारके कर्म करते देखिये· परि उनसबनमें कोऊ थोरीहू वस्तुको कर्त्ता नाहीं· केवल एक बाजीगरहीतें वहचेतनहै· अरुज्यों ज्यों नाचतहै· इतिनिश्चयी· यहू सांचो निश्चय जाके हृ दयकें विषै स्थिर भयोसो अंतर्गलित सर्वाशः भाई- जो मेरो कस्यौ कछु वैनाहीं होतु तामें क्यौं आपुको कर्त्ता कहाऊं तासाहिबको कृत क्यौंमेटो· अरुकरिवेकों क्यों·

उद्यत होऊ अरु समस्तमुक्ति आदि दे करिजे सुख तेजि- निके उपाये है· अरु जिनिके आधीन है· जिनिके सन्मुख होंन एक सकल आय सेवाविषें तत्पर होत है तो ऐसे प्रभुकों छोडि एक निमिष ऊ इनिविषें मन क्यों प्राप्त करिये· एस मस्त कैसे है शत्रुरूप है· जो इनसों संगकरिये तो नाराय एनें छोडाइ करि जन्ममरणादि प्रवाह विषैं डारिकरि आपु जाते होहि· ताते इनकी आशा मनविषे क्यों आनीयें यों जानि करि दूरि करी है· समस्त आशा जिनि ताते शांतः परमशीतल ताकों प्राप्त भयो है· सकल संतापनितें निवृत्त भयो है ऐसे पुरुष क्वापि न सज्जते· सदा संसारही में रहे· असंख्यसुखादिक सिद्ध्यादिक सदा सेवाही में रहे परि कदाचित मन हू करि लिप्त होइ नाहीं परम शत्रु करि जाने ताते देषरे पुत्र यों जानि करि कर्त्ता जो प्रभुताविषें सदा मन राष करि वस्तु वाजी विषे कदाचित मन मति प्राप्ति करे तो तूं वेगेही ब्रह्मानंदविषें मग्न होइ इत्यर्थः॥२॥ दोहा·
ईश्वरकर्त्ता सकलको ऐसो निश्चय ज्ञान॥ मनकी आशा मिटतही त्यागी शांत समान॥२॥ संस्कृत· नन्वीश्वरश्चेत्सर्वनिर्माता तर्हि कांश्चित्सुखिनः कांश्चित्तु दुःखिनो रचयंस्तस्य वैषम्यनैर्घृण्ये स्यातामित्याशंक्याह॥३॥ श्लोक· आपदः संपदः काले दैवादेवेति निश्चयी॥ तृप्तः स्वस्थेंद्रियो नित्यं न वांछति न शोचति॥३॥ टीका·- आपद इति काले समन्यविशेषे आपदः संपदश्च दैवात्प्राक्तनादृष्टा देवेश्वरपरियाचिता देवेति निश्चयी अत एव तृप्तो वीततृष्णः अत एव नित्यं स्वच्छेंद्रियो विषयानाकृष्टेंद्रियः अप्राप्तं न वांछति नष्टं न च शोचतीत्यर्थः॥३॥ भाषाटीका·-
आपदः संपदः काले· भाई आपत्तो सदा सुखई वांछिये· दुः

दया

पा

खतौ तिहूंलोक विषैं कोऊ नाहीं चाहतु· परि कबहूं सुख-
खअवांछें ई आवै· कबहू· अनेकभांतिकरि वांछियै तौहू
नआवै· अरु अचिंतेई दुःख आवैसो कहाहै कहातें· देवा
देय· ऐतो अपनेही करे कर्म तें उपजतहै· जासमय जैसो
कर्म कस्यौहै तासमय तैसो सुखदुःखरूप फल आइरहै
तातें जो सुखदुःखादिक कर्मनितें होतहै आपनेही करे तो
कर्म क्यौं करीये· आपनेहाथ आपको बंधन अरु सुख-
दुःखके देनहारो औरकों नमानिये इतिनिश्चयी· यहनिश्च
य जाके ह्रदयमें स्थिरभयोहै ऐसापुरुष तृप्तः कर्माकर्म·
वांछा अवांछा· सुखदुःखराग द्वेषादिक द्वंद्वनिचूत्तव्हैक
रि आत्मासुखसों तृप्तहै· सदा सुखीहै· अरु स्वच्छेंद्रि·
यः भाईजेकछु कर्मादि करीयै तेतो मैंनाहीं करतु· मैं अक
र्त्ता· केवल इंद्रिय कर्मकरै· अरु इंद्रिय भोगवै· अरु मनजो
भ्रमें सो केवल इंद्रियनके अर्थ मैं भ्रमें· इनिके संगतें मो·
कों जन्ममरणादिक अपारदुःख होहि यों जानि ज्ञानेंद्रि
यपंच· श्रोत्र १ त्वक् २ चक्षु ३ नासिका ४ जिव्हा ५ इनि·
के अर्थजे शब्द· स्पर्श· रूप· रस· गंध· तिनिकोंजीतिकरि क
र्मेंद्रियजे वाक् १ पाणि २ पाद ३ पायु· ४ उपस्थ· ५ इनके
कर्मजीतिकरि देहनिर्वाहमात्र करतुहै· सोऊ यों ज्ञान तु
हैकि देह आपने सुखनिमित्य कर्मकरतु है· फलभोगव
तिहै· सुखदुःख पावतिहै· क्षीण पुष्ट होतुहै· मैंसदा
अकर्त्ता अभोक्ता· आनंदस्वरूपजोयों जानतु है सो पुरु·
ष नवांछतिनशोचति· नकोनहू वस्तुकी वांछा करै· नको
नहू वस्तुको शोचकरै सदा आत्मानंद विषैं मग्नहै· तातें·
सुखदुःखादिक कर्माधीनजानि कछु मनविषें मति आनें

काहूकों सुखदुःखको देनहारो मतिजाने· रागद्वेषादिकनि
तें रहितहो· अरु अब मनहूकारि कर्म मतिकरहि· मनए·
कईश्वरविषें राख इत्यर्थः ॥३॥ दोहा· आपदसं·
पदकालमें दैवयोगतेंजोय॥ तृप्तिभईजब इंद्रियां इच्छा
शोचन होय॥ ३॥ संस्कृतः ननुतत्वनिश्चयेपिक
र्माणि कुर्वन्नेवदृश्यतइत्याशंक्याह॥ ४॥ श्लोकः
सुखदुःखे जन्ममृत्यू दैवाद्देवेतिनिश्चयी॥ सा-
ध्यादर्शीनिरायासः कुर्वन्नपिनलिप्यते॥ ४॥ ॥
टीकाः- सुखेति कर्मफलभूते सुखदुःखादिके दैवाद्दृ
ष्टाद्देवेतिनिश्चयी अतएवमया इदंफलं साध्यमित्यदर्शी
अतएवनिरायासः श्रमरहितः प्रारब्धवशात्कुर्वन्नपिनलि-
प्यते कर्मजानर्थभागी नभवति कर्तृत्वाऽध्यास रहितत्वा
दित्यर्थः॥४॥ भाषाटीका·- सुखदुःखे सुखदुः
खमयजेनाना प्रकारके द्वंद्व अरु जन्ममृत्यू जन्म अरुमर
ण इत्यादिक· दैवाद्देवपूर्वजन्म आपही करेजे कर्म तिनि
तें होतहें· नकछुघटै नवधै· इतिनिश्चयी· जाके हृदयमों·
यों निश्चय आयोहै· साध्यादर्शी· ताकी साची मतभई· नि
रायासः यौंजानिकरि समस्त उद्यम करिवेतें निवृत्त भयो-
है· ऐसोपुरुष· कुर्वन्नपि· जोकर्म अपने करिवोऊ करे तो
हु नलिप्यते कदाचित कर्मसों नलिपें औरजो बिनज्ञानजो
कर्म छोडिहू बैठै तोहू कदाचित निःकर्म होइ नाहीं· ज्ञा-
नीजो कर्म करिवोऊ करै तोहू लिप्त होइ नाहीं· जानैकिपू
र्वजन्मके करेजो कर्महे ते करवावतु है· यहजड देह मेरी
शक्तिकरि·चेतन व्हैकरि करतिहै· मैंअकर्त्ता अभोक्ता प
रमानंदमय तातें देषरे पुत्र यहज्ञान कहिये· याविषें त-

सरहोज्यों है त्यों देष इत्यर्थः ॥४॥ दोहा· सुख-
दुखमरणोजीवणो दैवयोगतें देख ॥ कर्मकरैपरिनालिपै
तृष्णारहितविवेक ॥४॥ संस्कृत· ननुकुर्वंश्चे
त्कथंनिरायास इत्याशंक्याह·॥५॥ श्लोक· चिंत
याजायते दुःखं नान्यथेहेतिनिश्चयी ॥ तयाहीनः
सुखीशांतः सर्वत्रगलितस्पृहः ॥ ५॥ टीका·-
चिंतयेति इहदुःखं चिंतयाजायते नान्यथेति निश्चयी अ
तएवच तयाचिंतयाहीनः अतएवशांतः स्थिरांतःकरणः
अत एव सर्वत्र सुखसाधनयोर्गलितस्पृहः पुरुषः सुखी
भवतीत्यर्थः ॥५॥ भाषाटीका·- चिंतयाजाय
तेदुःखं· भाई केवल एक चिंतातें दुःख उपजते हैं· और दू-
जो कारण दुःखनिको नाहीं· इतिनिश्चयी· यह जाके हृदय
विषें निश्चय आयो है सो पुरुष तयाहीनः ताचिंताकरि रहि
तभयो· सुखी ताही क्षणतें अक्षय सुख पायो· शांतः तब
हीतें नानाप्रकारके जे संताप तिनितें छूटिकरि परम शीत
लभयो· तातें सर्वत्रगलितस्पृहः समस्त मोक्षादिक सा·
मग्रीविषें गलित भई है स्पृहाजाकी तातें देषरे पुत्र· संसा
रविषें प्राप्तकरिवेको मूल एकचिंता है· अरु ब्रह्मविषें प्रा
प्ति करिवेको मूल एकनिश्चिंतिता है· तो तूं केवल एकचिंता
छोडि निश्चिंत हो· जातें सत्य स्वरूप विषें प्राप्ति होहि· इत्य
र्थः॥५॥ दोहा· चिंतातैंदुखहोत है यहनिश्चय
करिजोय॥ सुखीहोनचिंताविना तृष्णाछांडै सोय॥५॥
॥ संस्कृत· उक्तसाधनैः सिद्धज्ञानिनां निजदशांनि
रूपयति॥६॥ श्लोकः नाहंदेहोनमेदेहो बो
धोहमितिनिश्चयी॥ कैवल्यमिति संप्राप्तोनस्मर

त्यकृतंकृतम् ॥ ६॥ टीका· अहंदेहोन तथा मेदेहोन किंतु नित्यबोधोहमितिज्ञान वशाद्देहादौनिवृत्ता हंममाभिमानः देहादिनाकृतंच मयाकृतमितिनस्मरति यथाकैवल्य विदेहकैवल्यंप्राप्तः कृताकृतंनस्मरतिन ह्दित्यर्थः ॥ ६॥ भाषाटीका· नाहंदेहः अरथादेहकोजोमें आपकहतहुतो सोतोदेहमेंनाही नमेदेहः यादेहविषेंजो ममत्व आनोकि यहमेरी देहसो तोयहमेरीनाहीं· अहंबोधः मैंचैतन्य यहजड· मैंअविनाशी यह विनाशवंत· मैंतोयातें न्यारोहीं कहुलिप्त नाहीं· इतिनिश्चयी ऋनिकरि जाके ह्दयमें यहनिश्चय आयोहै· कैवल्यंइवसंप्राप्तः मोक्षपदवीकों यादेहविषेंप्राप्तः अकृतं कृतंनस्मरति· देह यद्यपि आपने व्यवहारविषें वर्तिवोऊ करै तथापि यह कछू जानेनही कियह कछूमेंकस्यो· यहकछूमोहि करिवेहै· यह अकर्त्ता भयो· केवल आत्मस्वरूपविषें मग्नरहै· तातें यादेहविषें अहंकार ममता भूलिहू मति आने आपुको समुऊ इत्यर्थः ॥ ६॥ दोहा देहनमेरीमेनदेहहौंनिजबोधआनंद॥ योकैवल्यहिपायकें कृतअकृतनकरियाद॥ ६॥ संस्कृत· ॥ श्लोक· आब्रह्मस्तंबपर्यंत महमेवेतिनिश्चयी॥ निर्विकल्पः शुचिः शांतः प्राप्ताप्राप्तऋनिर्वृतः॥ ७॥ टीका· - ब्रह्माणंहिरण्यगर्भमारभ्य तृणस्तंबपर्यंतंसर्वजगदहमेवेति प्रत्यक्षनिश्चयवान् पुरुषः निर्विकल्पः संकल्पविकल्पशून्यः अतएव शुचिः विषयासंगरूपमलरहितः अतएवशांतो निश्चलांतः करणः

अतएवप्राप्ताप्राप्तयोरपिविषयेनिवृत्तः परमसंतोषवा-
नात्मानंदपूर्णत्वादित्यर्थः ॥ ७॥ भाषाटीका.-आ
ब्रह्मस्तंबपर्यंत अहं एव. भाई जोकदाचित देहादिक.
ऊ देषीयेतोऊ ब्रह्मादिदेकरि स्थावर जंगम पर्यंत जोक-
छूविस्तार सो पंचभूत. पृथ्वी १ आप २ तेज ३ वायु ४
आकाश ५ इनहींकोविस्तार औरनाहीं. तातें देह एक
ई. अरु आत्मा अद्वैत अखंडित एक तातें मैंहीहों. दू.
जोनाहीं. इतिनिश्चयी यहसत्यज्ञानजाकेस्थिरभयो.
सोनिर्विकल्प. भेदाभेदकरिरहितभयो.कि भाईऊंचो
नीचो कोनकहिये. यह देहमें अनेक अंग तिनमें भेद-
कैसो. एकआपही तातें शुचि. राग द्वेषादिकनितें निवृ
त्तभये. भेदछोडि परम निवृत्तजहां हुतो त्योंही भयो ता
तें शांतः. तबहीदेह संयोगके जेअपार संताप हे तिनितें
रहित व्हैकरि परमशीतल विश्राम विषे प्राप्त भयो. तातें
प्राप्ताप्राप्तविनिर्वृत्तः भाई यह वस्तुमें पाइ. यहवस्तु.
नपाई. यहवस्तु मैंने होइतो भली. यहनहोइतो भली
इनिसबनितें छूटिकरि परमानंदसत्यस्वरूप विषे प्रा.
प्तभयो. तातें तू एक आत्माविचारसंते भेदाभेद छोडि
करि सत्यानंद आत्मस्वरूपविषे प्राप्तहो कि मन्यत् ॥ ७
॥ दोहा. ब्रह्माकीटपतंगलों मेंहूनिश्चयजान ॥
निर्विकल्पशुचिशांतव्है हानिलाभमतिमान ॥ ७॥ ॥
संस्कृत. नन्वात्मज्ञानीकथंनिर्विकल्पादिरूपइत्या
शंक्याह ॥ ८॥ श्लोक. नानाश्चर्यमिदंविश्वं
नकिंचिदितिनिश्चयी ॥ निर्वासनःस्फूर्तिमात्रो-
नकिंचिदिवशाम्यति ॥ ८॥ इतिज्ञानाष्टकंस

माप्तम् ॥ ८ ॥ टीका - नानेति अधिष्ठानतत्वसाक्षात्कारेण ध्यस्त बाधे सति नानाश्चर्यमयं विश्वं न किंचित् पृथक् सत्ताशून्यमिति निश्चयी पुरुषः निवृत्तवासनः केवलं चिद्रूपः सन् नकिंचिदिव विशेष व्यवहारागोचरएवशाम्यति निवृत्त कार्य कारणोपाधिर्भवति तत्वज्ञानेन सर्वस्यापि स्वभवन्निवृत्तेरित्यर्थः ॥ ८ ॥ इतिश्रीमहेश्वरविरचितायां अष्टावक्रटीकायां ज्ञानाष्टकं समाप्तम् ॥ ११ ॥ भाषाटीका नानाश्चर्यमिदं विश्वं न किंचित् एक अद्वैत आत्मा अखंडित अजन्मा अविनाशी एकरस ताविषै जो कछू यह परम आश्चर्यरूप अनेक भांति कौ दूजो सो जानियतु है सो कछु है नाहीं स्वप्नसमान है भ्रम निंद्राविषें साच सो जानियतु है इतिनिश्चयी यह जाके निश्चय आयो है सो निर्वासना वांछा अवांछा करै कौन वस्तुको निश्चल भयो तातें स्फूर्तिमानि परम प्रकाशज्ञान स्वरूपभयो अज्ञान अंधकार जडता निवर्त भई शश्वद्देव ताही क्षण निरंतर अवशाम्यति ब्रह्मस्वरूपविषें प्राप्त होइ तातें समस्त इंद्रिय मनोगोचर विस्तार कौं मिथ्याजानि मन षेंचि करि सत्यस्वरूपविषें प्राप्त ह्वो इत्यर्थः ॥ ८ ॥ दोहा नानाइचरजमयजगत तूं जिन दूजी जान ॥ तूं प्रकास निर्वासना ह्वै निज ब्रह्म समान ॥ ८ ॥ ॥ श्रीधरज्ञानविचारतें सब अज्ञानन साहि ॥ ज्यौं हि सावकी कंकरी घसत घसत घासि जाहि ॥ १ ॥ ॥ इतिश्री अष्टावक्र भाषाटीका ज्ञानाष्टकनाम एकादशउपदेश संपूर्ण भयो ॥ ११ ॥ श्रीरस्तु ॥ ॥ ॥

अथद्वादशोपदेशप्रारंभः

श्लोक·–गुरुणोदीरितज्ञानंनकिंचिद्विशाम्यति॥त त्स्वस्मिन्नप्यभिज्ञातुंशिष्योवदतिसांप्रतम्॥१॥ ॥ उक्तंज्ञानाष्टकेन नकिंचिद्विशाम्यतीतितदेवशिष्यः स्वस्मि न्विशदयितुमेवाष्टकमाह॥१॥ श्लोक कायकृत्या सहःपूर्वंततोवाग्विस्तरासहः॥ अथचिंतासहस्त स्मादेवमेवाहमास्थितः॥१॥ टीका·– कायेति तत्र प्रथमंकायवाङ्मनसांव्यापारोपरममाह अहंपूर्वमपिका यिकरूपकर्मासहस्ततोहेतोर्वाग्विस्तारासहः जपकर्मास हः अथअतोमनोव्यापारचिंतातत्रासहः तस्माद्धेतोःए वमेवनिर्व्यापारएवाहमास्थितइत्यर्थः॥१॥ भाषाटी का·–हेगुरुः पूर्वकायकृत्यासहः प्रथमहीतो देहकृत जेस्थूलकर्म तिनिकों बंधनजानिछोडो· ततोवाग्विस्ता रासहः ताके अनंतर· यहसकलजोहै सोवचनहीकोवि स्तारहै· दृढबंधन शब्दहैतो वचनकृत कर्माननें रहितभ यो· मौनग्रह्यो एक ईश्वर विनुजोबोलिये सोबोरु· अथचि तासहः याके अनंतर चित्तकृतजे कर्म· तेही बाहीर आनि स्थूलरूपव्है प्रगट होतहै· तातें मूलदृढबधनहै· वे चित्त कीवासनाहै· तातें सकल त्यागी·तस्मात् औरजलकछू नकर्यो केवल एतनेहीतें एवमेवाहमास्थितः मैंजो होंसु नानात्वतें छूटिकरि एकआत्मस्वरूपविषें·प्राप्त भयो·अ बजहां देषो तहां एकअजन्मा अविनाशी परमानदस्व रूप आपहीको देषतुहों·निर्भयभयो देहहीमें·तातें मै समस्त मनोवचन देहादिकनिकरि यहहैंजे कर्म तेकेवल बंधनजानि छोडो· एक आत्माके चिंतवनविषें तत्पर होय·

तो सुखनिधानविषे वेगेही प्राप्त होहि इत्यर्थः॥ १॥ ॥
दोहा पहिलीकायककर्मसहित फिरवाएीविस्तार ॥ चितनै निर्व्यापारव्है मैहूस्थितसुखसार॥ २॥ संस्कृत उक्तव्यापारो परमैहेतुं वदन्नेवोक्तमनुवदति॥ २॥ श्लोक· प्रीत्यभावेनशब्दादेरदृश्यत्वेन· चात्मनः॥ विक्षेपैकाग्रहृदय एवमेवाहमास्थितः ॥ २॥ टीका - क्षयिष्णु फलजनकस्य शब्दादेः शब्दकार्यकर्मद्वयस्य प्रीत्यभावेन प्रीत्यविषयत्वेनआत्मनश्चादृश्यत्वेनत्रिविधविक्षेपेभ्योव्यावृत्तं एकाग्रंहृदयंयस्य सविक्षेपैकाग्रहृदयइति मध्यमपदलोपीसमासः क्षयिष्णुफलजनकस्य कर्मजपादेः प्रीत्यविषयत्वात्॥ जपादिरूपोविक्षेपो ममनास्तिआत्मनश्चादृश्यत्वाद्ध्यानाद्यविषयत्वात् चिंतारूपोपि विक्षेपो ममनास्तीत्यर्थः अतएवमेवस्वरूपेणैवअहमास्थितः॥ २॥ भाषाटीका·· आत्मनः शब्दादेः प्रीत्यभावेनमनकी अरु शब्द स्पर्श रूप· रस· गंध इनइंद्रियार्थनकी तो परस्पर प्रीति नाहीं काहेतें अदृश्यत्वेन मानुंदिनदिन प्रीति वधावत्तु जातुहै इन कोएकफल ऊनाहीं छोडत्तु· एसकल परमनिरादर करि छोडिजातेहैं· तातेंतिनिसों कौनपुरुष प्रीतिकरे· दूजो अर्थ अदृश्यत्वेनचात्मनः प्रीतिभावेनवा· अरुया देहसहित जबतें संसारविषे आइये तबतो आठऊपहर परम प्रीति करि· याकी सेवाहीविषे रहिये· जो कछुकरिये सो समस्त· यादेहके निमित्त करिये· अपनो अर्थ विस्तार ही डारयो·याके दुःख दुःखी· याके सुख सुखी· मेपरमप्रीति दिनदिन· वधावत्ते जाऊ यह परम निरादरकरि मोहि छोडजाई ता

तें ऐसो कौनहै जो आपनो कृतज्ञान अरु देहको कृतज्ञा
निकरि देहनाम महाशत्रुसो संगकरें· तीजोअर्थ आत्म
नःप्रतिभावेन वासदेव यामनहीकी आज्ञामें चलते रहेज्यों
ज्यों मननचावतेरह्यो त्योंहीत्यों नाचतेरहे· सदामनही
कों रिझावते रहे· मनकेदुःखदुःखी· मनके सुख सुखी
परियहमन त्यौंत्यों अधिक संसार समुद्रमें लेबोरे· याके·
संगतें मोकों परमदुःख नाहीं·तोमेरो परम सुखमय·ताकों
दुःखदाताकोन· एक मनही दुःख दायक· तातें अपनो कृ
तद्वेषि अरु मनको कृतद्वेषि करि ऐसो कोनु अज्ञानहै जो
ऐसे परमशत्रुसों प्रीतिकरे· चोथोअर्थ· आत्मनः शब्दा·
देः प्रीति भावेन· आत्माती एकअद्वैत अजन्मा अविना
शी सदाशांत निस्पृह परमानंदस्वरूप एजेकछु देह इं
द्रिय मन बुद्धि चित्त अहंकार विषय· शब्दादिक समस्त·
तिनि सबनितें मैं आत्मा अगोचर हौं· मोहिजानिवेकों इ
नके काहेकी शक्ति·एतोसकलजडहै· मेरीशक्तितें चेतन·
ह्वैकरि आपने अर्थनि बिषें वर्त्ततेहैं· तातें इनसों मोसों
कैसो संग· कोनअर्थनिमित्त·तातें विक्षिप्य· मेरेवर तायें
एसकलअर्थतहै· इनिविषेंतो वहीवंध्यो हौं इनकी शक्ति
कछूनाहीं· मैंबंधि बंधि दुःख सह्यो इनको कोन अपरा·
ध तातें जाको आपतें अंगिकार करयो ताकों दुःखमें र
हनदीजे· आपसुखमेजाइ एतो युक्त नाहीं· यौंजानि क
रि इनकों सबनिकौं प्रेरिकरि आपने संगलेकरि एका·
ग्रहृदयः एकअद्वैत अविनाशी ईश्वर विषें सन्मुखभयो
जो सदाको साचो मीतमहै जासों हम सदातो रहीरहै·
सो प्रभुसदानिरंतर प्रीति करेही रह्यो· हम कदाचित कु

तउनमान्यो सोप्रभुसदा एकरसरह्यो तासों मनुख भयो तातें एवमेवाहमास्थितः कछुउद्यम नकरयो याहीतें सन्मुख होतसंते ताहीप्रभुविषें प्राप्तभए दूजो देखियत नाहीं ताविषें स्थिरहै तातें इनकों संसारतें छोडाइ करि आपने संगलेकरि सदाको प्रीतम परम प्रभु परमानंदमय विषें प्राप्तहों ॥ २॥ दोहा· शब्दादिकविषयानकी प्रीतीमनतें नाहिं॥ तातें मैं एकाग्रचित्तस्थित परमानंदमांहिं॥२॥ संस्कृत· ननुतथापि समाध्यर्थ्यैव्यवहारः कर्त्तव्यइत्याशंक्य नेत्याह॥३॥ श्लोक· समाध्यासादिविक्षिप्तो व्यवहारसमाधये॥ एवंविलोक्यनियममेवमेवाहमास्थितः॥३॥ टीका समाध्यासादीति कर्तृत्वभोक्तृत्वाध्यासादिभिर्विक्षिप्तो सत्यांतन्निरासार्थं समाधये व्यवहारो नान्यर्थेति नियमंविलोक्य शुद्धात्मज्ञानिनामध्यासाभावादेवमेव समाधिशून्य एवाहमास्थित इत्यर्थः॥३॥ भाषाटीका· - समाध्यासादिविक्षिप्तो व्यवहारःसमाधयेभवति· जो कछुसंसारको व्यवहार है सो समस्त जो समानभावकरि जानियेः भेदाभेद छोडियेतो समाधयेभवति एहुई सकल ब्रह्मरूप होइ जोकछू करें सो सकल ब्रह्मइहै वहपुरुष सदानिरंतर समाधिहीमें रहे· एवंनियमंविलोक्य· यहमतोजानिकरि सकलविषें भेद छोडिकरि समभाव विषें आइ करि· एवमेवाहमास्थितः यातें में एकसत्यस्वरूपविषें स्थिरभयो· सुखही पूर्वक· तातें सकल इंद्रिय मनोगोचर व्यवहारविषें भेदाभेद छोडिकरि एक भावविषें स्थिरहोजाते· अनायासही· ब्रह्मविषें प्राप्त होहि इत्यर्थः॥

ता ता

३॥ दोहा देखतजगव्यवहारसम सकलब्रह्म मयजांहिं॥ कलहकलपनाछांडिके स्थितपरमानंदमां हिं॥३॥ संस्कृत॥ श्लोक· हेयोपादेयविर हाद्देवंहर्षविषादयोः॥ अभावादद्यहेब्रह्मन्नेवमे वाहमास्थितः॥४॥ टीका·- पूर्णात्मदर्शिनो मम हेयोपादेयवस्तुनो विरहा देवममुना प्रकारेण हर्षविषादयो रप्यभावात् हे ब्रह्मन् गुरो अद्य अधुना ऽहमेवास्थित इत्य- र्थः॥४॥ भाषाटीका·- हेब्रह्मन् हेयोपादेयविरहा न· यावस्तुतें मोकों दुःख व्है है· याकों त्याग करों तो यौं जानि करि एकवस्तु त्यागी· अरु सोई यावस्तुतें मोकों सुख व्है है यों जानि करि एकवस्तु संग्रही· तब वह सुख आई क रिया प्राणीकों अपने वशकरि याकों मन लेकरि दुःखमें डा रिकरि आपजाते होई· तातें याको महादुःख प्राप्त होई· ज्यों ज्यों सुखचाहै· त्यौंत्यौं दुःख आपुही होई· तातें अभावा त्· पुण्यपाप सुखदुःख समकरिजाने· पुण्य अरु सुख- इनकीजो आशाछोडी तोपाप अरु दुःख आपहोए गये- तो अद्यजबही एछोडी ताही क्षणमात्र एवमेवाहमास्थि तः एकमेंही व्हैरह्यो· और दूजो कोऊ है ए नाहीं· एक मेंहीहों परमानंदमय· सदा शांत स्थिररूपनिर्भय स्थितहों तातें पा पतें पुण्य बडोशत्रुजानिकें अरु दुःखतें सुखबडो शत्रुजा- निकें इनिसबनिकों त्यागकरि परमानंदस्वरूपविषें प्राप्तहों इत्यर्थः॥४॥ दोहा· छांडण त्यागण विरहतें हर्ष विषाद बताहिं॥ विनाभावतें हेगुरो स्थितपरमानंदमांहिं ॥४॥ संस्कृत॥ श्लोक· आश्रमानाश्रमं ध्यानं चित्तस्वीकृतवर्जनम्॥ विकल्पंममवीक्ष्यैतैरे

वमेवाहमास्थितः ॥ ५ ॥ टीका - आश्रमेति आश्रमानाश्रमंध्यानंच तथातत्प्रयुक्तं चित्तस्वीकृतं चित्तवर्जनंच एतैस्त्रिभिरेवं ममअविकल्पंवीक्ष्य अहंएवमेव एतत्त्रितय रहितएवास्थितः ॥ ५ ॥ भाषाटीका - स्वप्नतोमेहानिर्नास्ति तथा सिद्धिर्नास्ति जोस्वप्नविषें कछुहानिभई कछुलाभभयौ तौजानीये तौ साचसोपरि न हानि नलाभ नव्यवहारत्यौं ज्यौंलगी अज्ञान रात्रिमें सोयोहे आपने सत्यस्वरूपकों भूल्यौ देहकों आपुकरि जानतुहे तौलौं यह व्यहार सत्यसो जानतुहे परि हेकछु नाहीं तौज्ञानवंतो मेकिं अज्ञानरात्रिगई ज्ञानसूर्यको प्रकाशभयो एक एक आत्मस्वरूपजान्यो तौ नहानिनलाभ नव्यवहार अस्मात् याहीतें नाशो ह्रासौ विहाय जन्म मरण सुखदुःख लाभालाभ पुण्यपापादिक छोडिकरि एवमेवाहमास्थितः परमानंदविषें प्राप्तहौं तातें एक लशुभाशुभ व्यवहार मिथ्याजानि सत्य स्वरूपविषें प्राप्तहौं किमन्यत् ॥ ५ ॥ दोहा यतनकिये प्राप्तननहीं स्वप्नमिलेनहिहानि ॥ जन्ममरणभ्रम छांडिकें स्थितनिज रूपसमानि ॥ ५ ॥ संस्कृत श्लोक कर्मानुष्ठानमज्ञानाद्यथैवोपरमस्तथा ॥ बुध्वासम्यगिदंतत्वमेवमेवाहमास्थितः ॥ ६ ॥ टीका - कर्मेति यथैव कर्मानुष्ठानमज्ञानात्तथैवोपरमः कर्मोपरमोपि अज्ञानादेव इदंसम्यग्यथार्थतो बुध्वाहमेवमेव कर्म तदुपरमरहितएवाहमास्थितः ॥ ६ ॥ भाषाटीका अज्ञानात्कर्मानुष्ठानो जोई आत्मा अकर्ता अभोक्ता अनीह सदानंदमय एकर्मजड बंधन नानाप्रकारके ते सकल

अज्ञानतें है· इदंतत्त्वंसम्यग्बुध्वा· यह जो साचोज्ञान सो दृढनिश्चय सो जानिकरि· अरुयथैव उपरमस्तथा बुध्वा· ज्यों इनि कर्मनितें छूटिये सोई तत्वज्ञान· ज्यों कर्मनिविषे मनआनीये सोई अज्ञान· यह साचो तत्त्वज्ञान हृदयमें राषिकरि कर्मनितें निवृत्त ह्वैकरि एवमेवाहमास्थितः याहीतें मैं परमसुखविषें प्राप्तभयो· द्वैतभावनिवृत्तभयो· तातें यहई ज्ञानजो शुभाशुभ समस्त कर्मनितें रहितहो· आपुकोंनिःकर्मजानो इत्यर्थः ॥ ६॥ दोहा· कर्मनकों अज्ञानतें जानितजैज्यों कोय॥ तैसें तत्वहिसमुझिकें स्थितपरमानंदहोय॥ ६॥ संस्कृत· श्लोक· अचिंत्यंचिंतमानोपिचिंतारूपं भजत्यसौ॥ त्यक्त्वातद्भावनंतस्मादेवमेवाहमास्थितः॥ ७॥ टीका· - अचिंत्यं ब्रह्मेति चिंतमानोप्यसौ आत्मचिंता लक्षणरूपं भजति तस्माद्धेतोः तद्भावनंअचिंत्यं ब्रह्मेति भावनात्यक्त्वाऽहमेवभावनारहित एवास्थितः॥ ७॥ भाषाटीका·— अचिंत्यंचिंत्यमानोपि· असौचिंता रूपं भजति· जाकोचिंतवन कदाचित् करणीयनाहीं· परमदुःखरूपहै कछूनाही मिथ्याहै परिचित्तमें आनतें नाहीको रूपह्वैयतुहै· यहबडो आश्चर्य· जोनाहींकछू सोचितवनतें साचसो ह्वैकरि आपने समान करि लेतहै· "यहांनेक्षेपकहै" तेउवचननगीताविषें कृष्णजी अर्जुनकों कहैहै· श्लोक· यंयंवापिस्मरन्भावं त्यजत्यंते कलेवरम्॥ तंतमेवैति कौंतेयसदातद्भावभावितः॥ १॥ भाषा· श्रीकृष्णजी अपने भक्त अर्जुनकों उपदेशतहैकि हे कौंतेय तूंतो परम सुज्ञान अरुभक्तिकरिसंयुक्तजे कुंतीता

को पुत्रहै·तोकौजो ईश्वरकी कृपा हुई· भक्ति ज्ञानादि कप्रा
प्तहोइतौ कहाआश्चर्यं· भक्तके दर्शन मात्रतें अनेकलो
क कृतार्थ होतहै· तातें तूंतो पुत्रईहै तातें तोहि उपदेश
तहौं· देष एजो वेदशास्त्रादिकनिके वचनहैंकि देहत्या
गके समयविषे जाहीको स्मरण होई ताहिको प्राप्त होई
सो योंहीहै· परि याविषें बडोई भेदहै यों मति जानहिंकि
वा समयविषें में ईश्वरको स्मरणकरि ईश्वरहीको प्राप्त
व्हैहौं· अबहीतैं काहेकोंजत्नकरो· देषु·यहतो योंहै·
यंयंभावस्मरन् वर्त्तते· जाहीजाहीके स्वरूपकों चिंतवन
सदायाके मनविषें रहै· तंतं एवस्मरन्· अंतेकलेवरंत्य
जति·जब देहत्यागको समय होई तब अनेकजतन को
ऊ करै तौहू औरवस्तुकी चिंतवन कदाचित नहोई·ताही
को स्वरूप आहि याके हृदयविषें स्थिर होई· अनाया
सयाहीतें वाको स्मरत संते तंतंएवएतिच· देह छोडि-
करि बहुरि जाई ताहीको प्राप्त होइ काहेतें· सदा तद्भा
वभावितः अनेकजतनकरि औरवस्तुको स्मरणऊकर
वाइयेतो हू याकेमनविषें नआवै तावस्तुको स्मरण अ
नायासहीआवै सोकाहेतें देषु· सदैवजो ताको भाव-
आदरकर किंवा शत्रुजानि भयकरि याही प्रकार और
हू कारणतें स्मरण करणो· तातें भावित कहिये·तन्म
य ताहीको रूपव्है रह्यौहै· तातें इत्यादि· तातें जोतू अ
बही तैं सावधान व्हैकरि ईश्वरके स्मरणविषें·रहै· अ-
रु समस्तसामग्री मिथ्याजानि मनतें दूरि करहीतोजी
वतहीसंते तन्मय व्हैकरि देहत्यागि तिनहीको प्राप्त हो·
इतिश्रद्धामयोयं पुरुषोयोयः श्रद्धः सएवसदेष· अर्जुन-

अयंपुरुषः श्रद्धामयं यहजोजीवब्रह्मादि स्थावर पर्यंत सोसबश्रद्धाकरि युक्तहै· काहूके सात्विकी काहूके राजसीः काहूके तामसी· काहूके त्रिगुणातीत ईश्वरकी तातें योयच्छ्रद्धः सएवसः जाकेंजावस्तुकी श्रद्धाहै सो ताही कों स्वरूपजानु· अंतताहीको प्राप्तव्हैहै· इति· यहां तलकक्षेपकहै· तातें तद्भावनात्यक्त्वा· समस्तस्थूल सूक्ष्म सामग्रीको चिंतवन छोडिकरि एवमेवाहमास्थितः एकमेही सदानंदमयविराजतुहै· दूजोअर्थअचिंत्यचिंत्यमानोपि· असौचिंतारूपभजति· अचिंत्यजे ईश्वर इंद्रिय मनबुद्धि चित्त अहंकारादिक समस्तजाको जानिनसकै काहूचिंतवनमें नआवै ताको चिंतवन करतें संतें ताहीके रूपकौं प्राप्ति होइ· याको कहाआश्चर्यः जो· कछु हैएनाहीं संसार सोइ चिंतवनतें साचुसो व्हैकरि· आपुको मिलाइलेतुहै सो सत्यस्वरूप ईश्वरके कोकहाआश्चर्य· तातें संसारको चिंतवन छोडिकरि ब्रह्मके चिंतवनविषें प्राप्तहो· जातें ताहीस्वरूपकों प्राप्त होहि॥ ७॥ दोहा करतहिंचिंताअचिंतकी चिंतारूपसमाहिं॥ त्यजचिंतासंसारकी स्थितपरमानंदमांहिं॥ ७॥ ॥

संस्कृत· एवमेवेत्यवस्थायाः साधकोपिश्रेष्ठः किंपुनस्तत्स्वभावइतिकें मुक्तिकन्यायेमाह॥ ८॥ श्लोक·

एवमेवकृतंयेनसकृतार्थोभवेदसौ॥ एवमेवस्वभावोयः सकृतार्थोभवेदसौ॥ ८॥ टीका·—

एवमेवेति· येन एवमेवसर्वक्रियारहितं तमेवस्वरूपंसाधनवशात्कृतं सोसौ कृतार्थोभवेत् यस्तु एवमेवस्वभावो वान्सोसौ कृतंयेनसकृतार्थो भवतीत्तिकिंवक्तव्यमित्य

र्थः ॥ ८ ॥ ॥ इतिश्रीमद्विश्वेश्वरविरचितायामष्टावक्र टीकायां एवमेवाष्टकसमाप्तम् ॥ १२ ॥ भाषाटीका· येनएवमेवकृतं· ज्याप्राणियोंकर्यौसंसारको चिंतवनछोडि यौ· ईश्वरकोचिंतवनकर्यौ· कृतार्थः संजातः सोईसोईप- रमानंदस्वरूपको प्राप्तभयो· ताहीप्रकार एवमेवस्वभावो यः जोयाप्रकार संसारको चिंतवन छोडि करि ईश्वरको चिं तवनविषे तत्परहै· समहाशयः सोमहापुरुष· कृतार्थः ईश्वरहीविषे प्राप्तहै· यो मतिजानो कियह देहविषेंहै· अ रुयः एवमेव कुर्यात्· जोयाही प्रकारकरे· सः कृतार्थो भवे त् सोई कृतार्थ होई· ताहीप्रकार ईश्वरको प्राप्त होई इ- त्यर्थः ॥ ८ ॥ दोहा· ऐसोनिश्चयजिनिकियो सो· कृतार्थजगजीत ॥ प्राप्तहोतईश्वरविषे परमानंदप्रतीत· ॥ ८ ॥ ॥ श्रीधरजगजगदीशतें ईशजगतमेंजोय ॥ ज्यौं बटतरुवरबीजतें बीजवृक्षमेंहोय ॥ १ ॥ ॥ इतिश्रीअ ष्टावक्रकीभाषाटीकाताकोएवमेवाष्टकनामद्वादशउपदेशः समाप्तभयो ॥ १२ ॥ ॥ ॥ ॥

अथत्रयोदशोपदेशप्रारंभः

श्लोकः एवमेवेत्यवस्थायाःफलीभूतांसुखस्थितिं ॥ प्राहशिष्यःस्फुटीकर्त्तुमहमासेयथासुखं ॥ १ ॥ ॥ अथैवमेवेत्यवस्थायाः फलीभूतांसुखावस्थांस्वकीयां- विशदयितुमाह ॥ १ ॥ श्लोकः अकिंचनभवंस्वा स्थ्यं कौपीनत्वेपिदुर्लभम् ॥ त्यागादानेविहायास्मा दहमासेयथासुखम् ॥ १ ॥ टीका· - अकिंचने- ति अकिंचनभवं सर्वसंगाभावप्रभवं स्वास्थ्यं चित्तस्थैर्यं· कौपीनत्वेपि कौपीनाशक्तावपिदुर्लभं अस्मात्कारणादहं

त्यागादानेविहाय त्यागादानयोरासक्तिं विहाययथासुखं सुखमनंतिरूम्याहमासेन कदाचिद्दुःखीत्यर्थः ॥१॥ भाषाटीका - अहंयथासुखआसे हेगुरो में यथासुखं कहीये जाके पाये तें और कोनऊ इच्छा न उपजे अरु अक्षयनिरंतर सर्वत्र पूर्णदुःख कदाचित मन हूविषें न आवे तासुखईपाइकरि सुखरूपभयो वर्ततुहों तो तासुखकी उत्पत्तिकाहेतें अकिंचन भवं जबस्थूल सूक्ष्म सामग्री सकल छोडि मनविषें कोनहू वस्तु कोन अन्यैः तबतानि किंचन तातें उपज्योहै कैसो कौपीनत्वेपि दुर्लभम् और सकल सामग्रीत्यागीहै वांछा अवांछा कछुनाहीं परिकदाचित केवल एक कोपीन हूकी इच्छा उपजैतो यहसुखको कदाचितसुनि बेऊन करै पाइके की कहापरम दुर्लभहै कैसो है सासुख स्वास्थ्यं जाके पायेतें परम शांत स्वरूप विषें प्राप्त ह्वैकरि सदास्थिर रहीये नकबहू सुखकी हीनता न अपनी हीनता अस्मा त्यागादाने विहाय मन वचन कर्मकरि कछून संग्रहीये नाहीं परिकाहूको कछुमन वचन कर्मदेइतोसिकरु संग्रहकस्यो तातें दोनसंग्रह दोऊ छोडिकरि सुखी वर्ततुहों तातें योंहीकरु ज्यों परमसुख पावहिकिमन्यत् ॥१॥ दोहा स्वस्थअकिंचन होतजब नहि करवाकोपीव ॥ त्यागदान मन छाडिके सर्वसुखीदुखहीन ॥ ॥१॥ संस्कृत श्लोक कुत्रापिखेदःकायस्य जिह्वाकुत्रापिखिद्यति ॥ मनः कुत्रापितत्त्यक्त्वापुरुषार्थेस्थि तःसुखम् ॥ २ ॥ टीका - कुत्रापि शरीरकर्मणि कायस्यखेदः कुत्रापि वाचिक कर्मणि जिह्वाखिद्यति कुत्रापिध्यानादिकर्मणिमनः खिद्यति अतोहंतत्रितयमपि

त्यक्त्वा सुखं यथा स्यात्तथा पुरुषार्थे स्वात्मन्येव स्थितः ॥२॥
भाषाटीका - कुत्रापि कायस्य खेदः कांहूनो देहकृत व्यवहारनितें दुःख उपजे - कहूं वचन कृत व्यवहारनितें बंध उपजे - ए सकल बंधनिके करनिहार तातें तत्त्यक्त्वा - मनकृत वचनकृत देहकृत समस्त व्यवहार छोडिकरि इनिको आपने वस करिके पुरुषार्थे स्थितः पराक्रमविषे तत्पर होत संते सुखं स्थितः परम सुखमविषें स्थिर भयो - तातें जो मनकृत वचनकृत देहकृत समस्त व्यवहार छोडिकरि उद्यम करिये - तो परम सुख पाइये - दूजो अर्थ - मनकृत वचनकृत देहकृत व्यवहार जबही छोडे तब और कछू करिवेन रह्यो - पुरुषार्थे सुखं स्थितः पुरुष आत्मा - ताको अर्थ परमेश्वर ताविषें सुखही पूर्वक स्थित भयो - तातें केवलमें स्थूल सूक्ष्म व्यवहार छोडि ताही क्षण ब्रह्मविषें प्राप्त होहो - और कछु उद्यम करणीय नाही - इत्यर्थः ॥२॥ दोहा - कायाकोइ कर्मे दुखी - बकवाणी मन ध्यान ॥ तातें तीन्यू त्यागिके मैं सुख ब्रह्म समान ॥२॥ संस्कृत - ननु कायवाङ्मनो व्यापारत्यागे देह एव सद्यः पतेत् भोजनांबुपानादेरपि त्यागादित्याशंक्याह ॥३॥ श्लोक - कृतं किमपि नैवास्यादिति संचिंत्य तत्वतः ॥ यदा यत्कर्तुमायाति तत्कृत्वासे यथासुखम् ॥३॥ टीका - कृतमिति शरीरेंद्रियादिभिः कृतं किमपि तत्त्वतः आत्मकृतं न स्यादिति संचिंत्य यदा यच्छरीरादिकर्म कर्त्तुमायाति तदहंकार शून्यत्वेन कृत्वा अहं यथा सुखमासे ॥३॥ भाषाटीका - कृतं किं अपि नैवास्ति हे गुरो मे आत्मा एक अविनाशी अजन्मा अखंडित सदा आनंदमय अनीह -

अकर्त्ता अभोक्ताजे कछू कर्मादिक ते सकल देहके इति
तत्वतः संचिंत्य. विवेक करि यह ज्ञान हृदयमों राषि करि
यदायत्कर्त्तुमायाति. जबआइ करि अचित्यो जोकछु भोज
नादि कर्म प्राप्त होई तब तत्कलासे सोकरवावते संतमें सा
क्षीरूप तमासो देषतसंते यथासुखं आसे परमानंद स्वरू
प अक्षय सुखविषें प्राप्त होतातें आपुको अकर्त्ता जानि
कर्मबंधन जानि स्थित हो. स्थूल सूक्ष्म कर्मत्यागः जेकछु
आवांछे भोजनादिकर्म आई प्राप्त होहि तिनिको देहसों
करवावत संते सुखमय हो किमन्यत् ॥३॥ दोहा.
तत्वज्ञानविचारतें कृत्यकछू हैनाहिं॥ जोहैतो अभिमानवि
न करकैफिरसुख माहिं॥३॥ संस्कृत. ननुकर्मवा
नैष्कर्म्यं वायत्कर्तृनिष्ठावश्यं स्वीकार्यपुरुषार्थेस्थित इत्याशंक्या
ह ॥४॥ कत्र श्लोक. कर्मनैष्कर्म्यनिर्बंधाद्भावादेह
संयोगा, स्थयोगिनः ॥संगात्संयोगविरहादहमासेयथासु
खम्॥ ४॥ टीका. - कर्मनैष्कर्मनिर्बंध रूपाभावा
त् स्वभावाद्देहस्थयोगिनः देहासक्तयोगिन एव अहंतुदे
संयोग हसंयोगविरहादपि यथासुखं आसे तथाच ममदेहाध्या
स योगाभावान्न कर्म नैष्कर्म्यनिर्बंधइत्यर्थः ॥४॥ ॥
भाषाटीका. - कर्मनैष्कर्म्यनिर्बंधाद्भावासंगात् देहस्थ.
योगिनः यावानतें मोक्षोंकर्म लगतु हैं. यावानतें मैंसे कर्म
करतुहैं इत्यादिकजेविचारनेदेहाभिमानीजो योगीहै ता
केदेहके संगतें होतहैं. अहंसंयोगविरहात् यथासुखआ
से. मैंअकर्त्ता निष्कर्म यों जानिकरि नकर्मन निष्कर्म दुहु
विचारतें न्यारोव्हैकरि सदा अक्षय सुखविषें प्राप्तहोइ
त्यर्थः॥४॥ दोहा. कर्मअकर्मकेमानतें योगीसं

गशरीर॥ मैंअसंग इनतैंजु दो सदायथासुखधीर॥४॥

संस्कृत॰ अथ लौकिकव्यापारेपिनममनिर्बंध इत्याह॥५॥ श्लोक॰ अर्थानर्थौनमेस्थित्यागत्यावाशयनेनवा॥ तिष्ठन्गच्छन्स्वपंस्तस्मादहमासेयथासुखम्॥५॥ टीका॰- अर्थेति ममस्थित्यादिनासाध्योअर्थानर्थौनस्तः पूर्णात्मदर्शित्वात् तस्माद॰ नासत्त्या तिष्ठन् गच्छन् स्वपन्वा अहं यथा सुखं आसे॥५॥

भाषाटीका॰- मेस्थित्या अर्थानर्थौन॰ मेंजोकदाचित स्थिरव्है बैठिरहों तौकछू मेरी अर्थ नाहीं अरु अनर्थऊ कछुमोकौंनाहीं॰ गत्यावाजो चलौंतो कछु अर्थ नाहीं॰ अरुन अनर्थ कछू शयनेनवा॰ जो सोऊं किंवा नसोऊंतो मेरोकछू अर्थनाहीं अरु अनर्थ कछूनाहीं॰ मेंसदा एकरूप स्थिर सदानंदमय॰ अनीह एसमस्त देहके व्यवहार है॰ यौंजानिकरि तिष्ठन्॰ जौंबैठौंतोबैठौं॰ गच्छन्॰ जोचलौंतो चलौं॰ जोसोऊंतो सोऊं अदन् जोभोजनकरौंतो करौं॰ देहको प्रवर्ताऊं॰ अहंयथा सुखं आसे॰ मेंसदा एकरस॰ निरंतर सुखमय प्रवर्ततुहौं तातें एकसकलदेह व्यवहारजानु॰ आत्माअनीहजानिकरि स्थिरहौं॥५॥ दोहा मोकौंस्थितिगतिशयन सुख बैठणचलणअहार॥ इनतें अर्थ अनर्थ नहिं मैंअतिसुखनिर्धार॥५॥ संस्कृत॰ एतदेव भंग्यतरेणाह॥६॥ श्लोक॰ स्वपतोनास्तिमेहानिःसिद्धिर्यत्नवतोनवा॥ नाशोल्लासौविहायास्मादहमासेयथासुखम्॥६॥ टीका॰- स्वपतोयत्नरहितस्यमेममहानिर्नास्ति यत्नवंतश्चवाममसिद्धिर्नास्ति अस्मात्कारणात् यत्नायत्नयोर्नाशोल्लासौविहायाहंयथा सुख

मासे ॥६॥ भाषाटीका - स्वपतोमे हानिर्नास्ति जो सोवत संते कछू हानि देषिये कछू लाभ देषिये सुख दुःख जन्ममरणादिक व्यवहार देषीये परि हैकछु नाहीं केवल जानिये सांचु सोतो क्यों जानिये साचु सोजो यह आपने सत्यस्वरूप देहकों भूलिजाइ तब साचजानें जबया साचें देहको समुझै तब समस्त स्वप्नको व्यवहार देहादिक झूठे करिजानें त्यौंही जो लों सत्यस्वरूप आपुको भूल्यौहै देहविषै अहंकार बुद्धिहै तोलौं देहादिक समस्त व्यवहार साचेसे जानतुहै याहीतें नाशोछासोविहाय भाई मेरोजन्मकिमेरोमरण मोकों प्राप्तकी अप्राप्ति सुखदुःख इत्यादिक समस्त कल्पना छोडिकरि अहंयथासुखं आसे मैंसदा विश्राम अक्षय सुखमय वर्त्ततुहों तातें एसमस्तदेह व्यवहार झूठो जानिकरि आपुको सर्वातीत जानिकरि सुखमयहो इत्यर्थः ॥६॥ दोहा सोये तेनहिंहानिहै यत्ननलाभकराय ॥ जन्ममरणभयत्यागिकै मैहूं अतिसुखभाय ॥६॥ संस्कृत श्लोक सुखादिरूपानियमं भावेष्वालोक्य भूरिशः ॥ शुभाशुभेविहायास्मादहमासेयथासुखम् ॥ ७॥ ॥ इति यथासुखसप्तकम् ॥ टीका - सुखादीति भावेषु अवतारेषु सुखादिरूपानियमं सुखदुःखादि धर्माणां अनित्यत्वं भूरिशो बहुस्थलेष्वालोक्य अस्मात्सुखाद्यनित्यत्वदर्शनाद्धेतोरहंयथासुखमासे ॥ ७॥ ॥ इतिश्रीमद्विश्वेश्वरविरचितायामष्टावक्रटीकायां यथासुखसप्तकंनाम त्रयोदशोपदेशः ॥१३॥ भाषाटीका सर्वतोभावेषु सुखादिरूपानियमं आलोक्य ब्रह्माके-

लोकतें शेषदेवके लोकलों जेते कछु व्यवहार हैं तेते सबनि विषें दुई वस्त निरंतर है· और तीजी वस्त नाही· कौन स्तु ख अरु दुःख जहां जेतनो सुख तहां सुखके पीछे· तातें अनंत दुःख तातें यह जो कछु संसार कहीयत है सो सकल सुख दुःखको कस्यो है· सुख दुःखरूप है· अस्मात् यह विचारिकरि शुभाशुभविहाय कोई सुखदुःखनिको मूल तो पुण्य अरु पाप है· तातें सुखदुःखनिकी वांछा छांडिकरि पुण्य अरु पाप इनिके संगतें न्यारो भयो· ताहीतें अहं यथा सुख आसे· मैं अक्षय सुखविषें स्थित भयो· समस्त संताप वांछा अवांछा भूलिही गई· तातें सुखदुःखादिकनिनें निस्पृह ह्वैकरि समस्त पुण्यपापादि कर्मनितें निवृत्त ह्वैकरि परम सुखमय हौंहि· किं बहुनोक्तेन·॥७॥ ॥

दोहा· सुखदुःखादिकनियम सब रहे सृष्टिआराधि ॥ त्यागशुभाशुभदेहतें मैं सुखब्रह्मसमाधि ॥७॥ ॥

शिष्य कह्यो श्रीगुरु प्रती ज्ञान यथासुखधाम॥ श्रीधरपुनि शिष्य कहत है शान्तिचतुष्टयनाम॥१॥ श्रीधरज्ञानसमुद्रपैं विचरत संत सधीर॥ हंस हंस सब एकठे ज्यौं सरवरकी तीर॥२॥ ॥ इति श्री अष्टावक्रकी भाषाटीका ताको यथासुख नाम त्रयोदश उपदेश संपूर्ण भयो·॥१३

अथ चतुर्दशोपदेश प्रारंभः

श्लोक· उदीरितां सुखावस्थां समर्थयितुमात्मनि ॥ प्राह शिष्यः शमावस्थां चतुःश्लोक्या गुरुं प्रति॥१॥ पूर्वं तु गुरुणा उपशमाष्टकं उक्तं संप्रति तु शिष्यः स्वसुखावस्था समर्थनार्थमात्मनः शमावस्थामाह॥१॥

श्लोक· प्रकृत्या शून्यचित्तो यः प्रमादाद्भावभावनः॥

निद्रितोबोधितइवक्षीणसंसरणोहिसः॥१॥ टीका· - प्रकृत्येति प्रकृत्यास्वभावेनविषयेषुशून्यचित्तः प्रमादादबुद्धिपूर्वकमारब्धवशाद्भावान् विषयान् भावयतिचिंतयतीतिभावेभावनकइवनिद्रितोबोधितइवसयथा निद्रावशाच्छून्यचित्तः केनचिद्बोधितत्वात्प्रमादाद्भावनः एवंविधोयः पुमान्विषयेषुशांतचित्तः सःहिनिश्चितक्षीण संसरणः संसारहेतुविषयानुस्मरणाभावादित्यर्थः॥१॥

भाषाटीका· - प्रकृत्याशून्यचित्तोयः हेगुरो· याप्राणि· स्वभावहीतें यहसकलविस्तारझूठो जानिकरि आपनोचित्त षेंचिकरि शून्य विषेंराष्यौहै· अरु प्रमादात् भावभावनः असावधानभएदेहादिक व्यवहार करतुहै औरऊ कछु कर्म वसनें करतुहैं सो कौन भांति निद्रितो बोधितइव ज्यौं कोऊ कछुक निद्रावसभयोहै· कछुक चेतन है आर· वाके आगें अनेक प्रकारके वाद्यंत नृत्यगानादिकसुखदुःख रूप होइ अरु यह देषै सुनैं निद्रिए अरु वासों कछु वात-कहीये सोऊसुनें अरु औरऊ नानाप्रकारकी चेष्टाहोहि परि याकोमन जोनिद्राविषें प्राप्तभयोहै· तातें हृदयविषें कछूठहराइनाही· कछूजावैनाहीं· त्योंही वहपुरुष कछू जानैनाहींतौ ऐसोजोहैसः सोपुरुष ही निश्चयकरि· क्षीणसरण· अबतें आगें देहपाइवेतें रह्यौ· ईश्वरपरायण भयो· तातेंयहसमस्त व्यवहारझूठोजानिकरि मनईश्वरविषें राषिहू· किमन्यत्॥१॥ दोहा· सुनौचित्तसुभावतें विषयेन संगअनेक॥ताकोजन्मनहोतज्यों स्वप्नेंअईविवेक॥१॥ संस्कृत· श्लोक क्वधनानि क्वमित्राणि क्वमेविषयदस्यवः॥ क्वशास्त्रंक्वचवि

ज्ञानंयदामेगलितास्पृहा ॥२॥ टीका - केतिविषय भावनाशून्यस्यपूर्णात्मदर्शिनोमेयदास्पृहा विषयेच्छाग लितातदामेधनानिक्वविषयरूपादस्यवश्चोराः क्वशास्त्रं क्वविज्ञानमहंब्रह्मास्मीतिनिदिध्यासनंक्वधनादिविज्ञा नांतेष्वपिममअवस्थानास्तीत्यर्थः ॥२॥ भाषाटीका यदामेस्पृहागलिता जोएककेवलवांछानिवृत्तभईतोध नानिक्व· धनआयेतोकहा अरुधनगयेतोकहा· जोधन- कीवांछाहोइतो आएतें सुखपावे· गयेतें दुःखपावे· अरु मित्राणिक्व· मित्रताकिनहूराषितोकहा· अरु शत्रुताराषी तोकहा· अरुविषयदस्यवक्व· शब्दस्पर्शरूपरसगंध इत्या दिकजेविषय तेईभयेजो महाचोर सर्वस्वके· हरिनिहारबे कहाकरे अरु शास्त्रंक्व· शास्त्रादिकनिसोंकहा·प्रयोजन अ रु विज्ञानंचक्व· विज्ञानबहुरिकहा· विज्ञानतो चाहियेकि भा ईजोविज्ञान उपजेतो आत्माअनीहजान्यो परेजे कछु वांछा अवांछाहे तेसमस्तदेहेंद्रियादिकनिकेहै· ताते जोवांछा ईदूरिभई तोकहा कौनहूवातसों प्रयोजन ताते केवलवां छादूरिकरु औरकछु करिवेकी नाहिरहतु· सुखहीनि वृत्तव्हैहै ॥२॥ दोहा· विषयनतेइच्छामिटी जहांकहाधनधाम॥ शत्रुमित्रविज्ञानकहा लाभालाभ निकाम॥२॥ संस्कृत· ॥ श्लोकः॥ ॥

विज्ञातेसाक्षिपुरुषेपरमात्मनिचेश्वरे॥ नैराश्येबं धमोक्षेचनचिंतामुक्तयेमम॥३॥ टी· विज्ञातइति· देहे द्रियादीनांसाक्षिपुरुषे त्वंपदार्थेपरमात्मनिचेश्वरे तत्प- दार्थेविज्ञातेब्रह्माहमस्मीति साक्षात्कृते सति नित्यनिर्मु क्त चिद्रूपात्मतानुभवात् बंधमोक्षेपिनैराश्ये सति ममम

स्त्यर्थेनचिंता ॥३॥ भाषाटीका. - साक्षिपुरुषे विज्ञा तेसंति. सकलतें न्यारे साक्षिरूप सबको दृष्टानिर्लेप ऐसे प्रभुकों जानै संते बहुरि कैसै परमात्मानि. जहांलौं कछु इंद्रिय मनोबुद्ध्यादि गोचरवस्तु है तासमस्ततें परे. बहुरि कैसे ईश्वरे. जहांलों काहूके कछु आश्चर्य है. कोनऊ शक्ति हैसो नाही ईश्वरकी दीन्हीहै. वैसमस्त ईश्वरादिकनिके ईश्वर बहुरिकैसे नैराश्ये जिनिके कौनहू वस्तुकी वांछानाहीं बहुरि- कैसे. अबंधमोक्षे. बंध अरु मोक्ष इन दुहुतें दूरितातें मम. मुक्तयेचिंतान. मेरेमनमें कदाचित मुक्तिको चिंतवन नाहीं भावै कहोकि भाई जोलों तो ईश्वरकों प्राप्त नहूंजे. तोलौं अनेक करै. कहूंजीयपरि स्फुरव नाहीं. अरु वैप्रभु आशादूरितें जहां कोनहू वातकी वांछा तहां उनकी प्राप्त नाहीं. तातें मैं समस्त आशा छोडि. अरु वैप्रभु बंध अरु मोक्ष दुहूतें दूरि. तातें मोक्षकी चिंतामें शत्रुजानि दूरि करी. तातें देखि ताप्रभुकों सबतें न्यारो जानि करि मै सबतें न्यारो ह्वैकरि तो ताप्रभुकों प्राप्त होकि मन्यत् ॥३॥ दोहा. जानतसंतेजु ब्रह्मकों बंधमोक्षहैव्यर्थ ॥ आशातृष्णा मोहिमें नहीयुक्तिकेअर्थ ॥ ३॥ संस्कृत. ननुप्रमादाद्भावभावकः कथंशांत इत्याशंक्याह ॥ ४॥ श्लोक. अंतर्विकल्पशून्यस्य बहिः स्वच्छंदचारिणः ॥ भ्रांतस्येवदशास्तास्तास्तादृशाएवजानते ॥ ४॥ ॥ इतिशांतिचतुष्कम् ॥ १४॥ टीका. - अंतर्विकल्पेति- अंतःकरणेविकल्पशून्यस्य बहिर्भ्रांतस्येव स्वच्छंदचारिणः ज्ञानिनोदशाएव तादृशाएवजानते ॥४॥ ॥ इतिश्रीमहेश्वरविरचितायामष्टावक्रटीकायां शिष्यप्रोक्तं शांतिचतु

ष्कंनामचतुर्दशप्रकरणंसमाप्तम् ॥ १४ ॥ ·भाषाटी· का· - अंतर्विकल्पशून्यस्य· हृदयविषेंनौजो कछु सकल्पचिंतादिक तिनसबनि करि रहितहै· बहिः स्वच्छंदचारिणः बाहेरपरमनिर्भयलोक वेदतें न्यारोजो इच्छा होनिहै - ज्यौंही आवतुहै· भ्रांतस्येव· कोऊ देषै सोयौं जानेकि वाव रोहै· ज्यौं वावरोलोक बेद दुहूतें न्यारो परि तस्यतास्तादशाः तादृशा एनजानते तापुरुषकी जेते तेदशा तिनिको जोकोऊ महापुरुष ताहीकेसमान होहि· केवल तेईजाने इत्यर्थः ॥ ४ ॥ दोहा जाकैमनदुबधामिटी निर्भयविचरत सोय ॥ ऐसेजनकोंसोलखै जोकोईज्ञानीहोय ॥ ४ ॥ ॥ श्रीधरतत्वविचारतें होतसकलनिरधार ॥ नौकाचढकरिजाइवै जैसैसागरपार ॥ १ ॥ ॥ इतिश्रीअष्टावक्रकीभाषाटीका ताकोशांतिचतुष्टयनामचतुर्दशउपदेशसपूर्णभयो ॥ ॥ १४ ॥ ॥ श्रीरामोजयति ॥ ॥

अथ पंचदशोपदेश प्रारंभः

श्लोक· दुर्लक्ष्यमात्मनस्तत्त्वप्रबोधयितुमंजसा ॥ मुहुस्तत्वोपदेशार्थं गुरुराहदयोदधिः ॥ १ ॥ ॥ यद्यपि प्रथम मात्मतत्वोपदेशः कृतएवतथापि तदात्मतत्वं अंते बालेभ्यः शिष्येभ्यः पुनः पुनरुपदेष्टव्यं दुर्लक्ष्यत्वात् तथा छांदोग्योपनिषदिति नवकृत्वः श्वेतकेतुप्रतीत्याचार्यः शिष्यार्थमसकृदात्मोपदेशं गुरुराह तत्रादौ ज्ञानाधिकारिणामनधिकारिणमेवाह· ॥ १ ॥ श्लोक· यथा तथोपदेशेन कृतार्थः सत्वबुद्धिमान् ॥ आजीवमपिजिज्ञासुः परस्तत्र विमुह्यति ॥ २ ॥ टीका·- सत्वबुद्धिमान् शिष्यो यथातथा आपाततोप्युपदेशेन कृ-

नार्थः स्यात् अतएवकृतयुगे प्रणवमात्रोपदेशेनापिशिष्याः कृतार्थाः बभूवुःपरः असत्वबुद्धिः यावज्जीवंजिज्ञासुर-पि बहुधोपदिष्टोपिविमुह्यतियथाविरोचनोब्रह्मणा बहुधोपदिष्टोपि मुमोहैवेत्यर्थः॥ १॥ भाषाटीका·- अष्टावक्रमुनीजब शिष्यके मुखतें ज्ञानमयजो तीयउप्रकरण·एवमेवाष्टक १ यथासुखसप्तक २ शांतिचतुष्क ३ यहीसुनिकें पुनःप्रसन्नहोंतसंतें आत्मतत्वउपदेशतहें·यद्यपि कोउकहेंगेकि आत्मतत्वतो प्रथमही उपदेशकियो·फेरवार वारहु काहेकों करतुहे· तदुक्तं दुर्लक्ष्यमात्मनस्तत्वं प्रबोधयितुमजसा॥ मुहुस्तत्वोपदेशार्थं गुरुराहदयोदधिः·हेशिष्य यह आत्मतत्व बहुत दुर्लक्ष्यहे· तातें अंतेवासिभ्यःशिष्येभ्यः पुनःपुनःउपदेष्टव्यं·हे पुत्र तेरेअर्थ वारंवार कहतहों· जैसें छांदोग्य उपनिषदविषें श्वेतकेतुंप्रति·आचार्यः नवकृत्वः वारंवार उपदेशकियोहे·तेसेंही आत्मतत्व महादुर्लक्ष्पहे तातें पुनरुक्ति लक्षणा वाणीविषें शंका नाहीं जानें हेपुत्र, अब कहतहूंकि, ज्ञानको अधिकारीकोण·अरु अनधिकारी कोण सो कहतहों· सुनरेशिष्य, सत्वबुद्धिमान्·ज्याकी सात्विकीबुद्धिहे·निश्चय धैर्यसहित जोपुरुष हे सो·तथातथा उपदेशेन कृतार्थः ज्योंहीज्यों कोऊ दुर्वचन कहे कोऊ सुवचन कहे·कोऊ प्रवृत्तिकहे·कोऊ निवृत्तिकहे परियाकों वेंसमस्तवचन अध्यात्मविद्यारूपहे·परमउपदेशरूपहे· तातें ऐसो पुरुष जीवनमुक्तहे· और वाहि कछु करणीयनाहीं· आजीवं अपि जिज्ञासुः परस्तत्रविमुह्यति· जोसबनिकेहृदयकी जानतुहे· ब्रह्मादि स्तंभपर्यंत· सोऊ याके मतेमें भूलिरहे·याके हृदयकी जाने नाहीं॥ १॥

दोहा· जसतसहीउपदेशतें होतकृतार्थसुधीर॥ बहुजिज्ञासुअधीरकै उपजतमोहशरीर॥१॥ ॥
संस्कृत· अथ बंधमोक्षौसुखरोपायेन संग्रहेण नि रूपयति॥२॥ श्लोक· मोक्षोविषयवैरस्यंबं धोवैषयिकोरसः॥ एतावदेवविज्ञानंयथेच्छसित थाकुरु॥२॥ टीका· – मोक्षइति विषयेष्वनुरागा भावएवमोक्षः विषयेच्छानुरागस्तु बंधइत्यर्थः एवं एता वदेवबंधमोक्षयोर्वेत्तांतोर्विशिष्टमुत्कृष्टज्ञानं एवंज्ञात्वा त- त्वंयथेच्छसि तथाकुरु॥२॥ भाषाटीका· – मोक्षो विषयवैरस्यं· जब शब्द स्पर्श रूप रस गंध इत्यादिक वि- षयनितें विरक्तभये सबछोडे तब वहई मोक्ष· और कछु कर्णीनाहीं· ईश्वरबीच अरुजीवबीच एतनीये औरहे· य हओटीदूरिकरि तबएकके एक बंधोवैषयिकोरस जीवन्मु क्त हूकेकरिजो कदाचितविषयानिसों संगकरे तोहू बंधविष य संगसोई बंध और बंधन नाहीं· विज्ञानं एतावदेव· जाको· विज्ञान कहतहैसो एतनोई आगे ब्रह्माजो अनेक अध्यात्म· शास्त्र उपनिषद पढतेरहे· अनेक साधुनिसों सुनते रहे अ रुजाने समुझे· परिविषयनिसों प्रीतिछोडे तो सकल वृथाहे जो कछू पढ्योनाही· अरु शत्रुजानि करि विषयनिको त्याग करी तो तहांई मोक्ष याविज्ञानविना मोक्षनाहीं· तातें यों बं· धमोक्षकरि यथेच्छसि तथा कुरु· ज्यों तेरी इच्छा होइ त्यों हीकरु· एपरम विषरूपजे विषय तिनिसों संगकरिज्योंबंध्यो चाहेतो बंध· अरु संग छोडि छूट्यो चाहेतो दुःखसमुद्र तेंछूट बहुत कहासमझाइये॥२॥ दोहा· विषय नत्यागे मोक्षहे बंधविषयमनलाग॥ वहीतत्वविज्ञानको क

रइच्छाअनुराग॥२॥ संस्कृत· इदंतुविषयवैरस्यं तत्वबोधनार्थमित्याह॥३॥ श्लोक· वाग्मिप्रज्ञा- महोद्योगंजनंमूकंजडालसम्॥ करोतितत्वबोधोयमतस्त्यक्तोबुभुक्षुभिः॥३॥ टीका· - वाग्मीति अयंप्रसिद्धः आत्मतत्वबोधः वाग्मिनंबहुचतुरवाक्यभाषिणंमूकंकरोति· प्रज्ञंनानाविशेषवेदिनंजनंजडंकरोति महोद्योगंनानाक्रियानुष्ठानशालिनं अलसंकरोतिनिःष्क्रियमनसः प्रत्यक्प्रवणतया वागादयः कुंठिताभवंति· तद्रहितोभवतीत्यर्थः॥३॥ भाषाटीका· - अयंतत्वबोधः यहजोपरमतत्वज्ञानसो वाग्मिप्राज्ञ जनंजडीकरोति· अनेकजो वेदशास्त्रादिक शब्दब्रह्म ताविषे·परम निपुणहैं अतीव प्रसिद्ध पूज्यहैं· और अनेक उद्यम चातूर्य· विद्या प्रतिष्ठा भोगसामग्री भोगशक्ति इत्यादिकनि करि· संयुक्त ऐसोजो चतुर बडो पुरुष कोटिनमध्ये एककोऊ ताहूके हृदयमें जो यह तत्वज्ञान आई प्रवेश करै·तोहू एसोहू पुरुषको जडकरि डारै· बावरोकरिडारै· आलसी करिडारै कि तब वैसो प्रवीण प्रतिष्ठतु हुतो·परम पूज्य हुतो· किं अब ऐसो भयोजोजहांकहू पर्योहैतो पर्योहूहै· नागो उघारोहैतोहै· ए अशक्तिहैतोहै· नकोऊ क्रियानकर्मन· काहूचारिहूवर्णकी शिष्या मानेन आश्रमकी मानें लोकवेदशास्त्रादिकनिको काहूको कह्योनमाने· अरु काल मृत्यु मायामय कर्मादिक तेऊ सूझेनाही· काहूको कछुभयनसमुझे· जिनिके भयकरि ब्रह्मादिकऊ कंपायमान रहतहैतो ऐसो जडकरि डारै· अरु ऐसो शास्त्रज्ञ हुतो सो यौंव्है जाहि·जो कोऊ आई अशुद्ध पढै· कछू औरको औ

रई कहे प्रवृत्तिकी वा निवृत्त अरु अनेक भांतिके यंत्रादिक वाद्य बाजे· अनेक भांतिकरि राग होहिं· अरु अनेक भाईबंधु स्त्री चेरी सेवग पुत्र राजाधिकारी निंदा करे· किंवा अनेक राजादिक पंडितादिक अनेक भांतिकी स्तुति करें· परि यह कछू न समुझे· ऐसो बावरो करि डारें· अरु कितो द्रव्यके उपायवेकों भोगादिकनिके करिबेकों· वैसो प्रवीण हुतो कि अबजो अनेक तीर्थादिकनिहूं ले प्राप्त करिये· अनेक भांतिकरि स्नानादिक करिवेकों समुझाइवे· परि याके लेखे तैसो मगहदतैसी काशी· औरकी कहा जो आठऊ सिधि· नवऊ निधि· त्रिभुवनको राज्य आइ आगे ठाढो होई· आधीन होई· किंवा हाथी सिंह सर्पादिक सामुहे आवतु है· किंवा अग्नि जली है· तौ यह नऊनको अंगिकार करें· नइनतें टरिके· देहहूकी रक्षा करे अरु जो मोक्षकी कहीये तो कहूं संभावनाई नजानै एनाही· जो कोऊ मोक्षकी महिमा कहि सुनावे· अरु कहैंकि तोकों मोक्षपदवी दीजे· तोइ यह कछु समुझे एनाहीं· तातें ऐसो आलसी करि डारे· अरु बहुरि कैसो करे· महोद्योग· जहांलों· अनेक भांतिकरि संचित सामग्री अतीव परमप्रीय स्त्री पुत्र औरकी कहा· देहऊ जो आपनी तिनहूंकी कछु शकाइन राषे· ऐसो यह तत्वज्ञान अतो मुमुक्षुभिः त्यक्ता· जे महापुरुष परम दुःखमय संसार जानि करि· त्रिभुवनराज्य आठऊ सिद्धि औरऊ जे अनेक सुख तिनहूंतें विरक्त व्हेकरि केवल मोक्ष कहीकि इच्छाकरि स्थिरचित्त व्हेकरि रहेहैं· तिनि जो यातत्वज्ञानको षोज नकर्यो· अरु सुननेहूकरि नआदर कर्यो· नअंगिकार कर्यो· सो तो याहीतें जो यह तत्वज्ञान ऐसी चेष्टा भुलाइ डारतुहै जाके

रइच्छाअनुराग॥२॥ संस्कृत इदंतुविषयवैरस्यं तत्वबोधनार्थमित्याह॥३॥ श्लोक वाग्मिप्रज्ञा महोद्योगंजनंमूकंजडालसम्॥ करोतितत्वबोधोयमतस्त्यक्तोभुभुक्षुभिः॥३॥ टीका - वाग्मीति अयंप्रसिद्धः आत्मतत्वबोधः वाग्मिनं बहुचतुरवाक्य भाषिणंमूकंकरोति प्रज्ञंनानाविशेषवेदिनंजनंजडंकरोति महोद्योगंनानाक्रियानुष्ठानशालिनं अलसं करोतिनिःष्क्रियंमनसः प्रत्यक्प्रवणतया वागादयः कुंठिताभवंति तद्रहितोभवतीत्यर्थः॥३॥ भाषाटीका - अयंतत्वबोधः यहजो परम तत्वज्ञान सो वाग्मिप्राज्ञ जनं जडीकरोति अनेकजो वेदशास्त्रादिक शब्दब्रह्म ताविषे परम निपुणहैं अतीव प्रसिद्ध पूज्यहैं और अनेक उद्यम चातुर्य विद्या प्रतिष्ठा भोग सामग्री भोगशक्ति इत्यादिकनि करि संयुक्त ऐसोजो चतुर बडो पुरुष कोटिन मध्ये एककोऊ ताहूके हृदयमें जो यह तत्वज्ञान आई प्रवेश करै तौहू एसोहू पुरुषको जडकरि डारै बावरोकरिडारै आलसी करिडारै कि तब वैसो प्रवीण प्रतिष्ठतु हुतो परम पूज्य हुतो कि अब ऐसो भयोजोजहांकहू पर्योहैतो पर्योहू है नागो उघारोहैतोहै ए अशुचिहैतोहै नकोऊ क्रियानकर्मनकाहू चारि हू वर्णकी शिष्या मानन आश्रमकी मानै लोक वेदशास्त्रादिकनिको काहूको कह्योन मानै अरु कालमृत्यु मायामय कर्मादिक तेऊ सूझैनाही काहूको कछुभयनसमुझै जिनिके भयकरि ब्रह्मादिकऊ कंपायमान रहतहैतो ऐसो जडकरि डारै अरु ऐसो शास्त्रज्ञ हुतो सो यौहैजाहि जो कोऊ आई अशुद्धपढै कछू औरको औ

ज्ञानी

रई कहै प्रवृत्तिकी वा निवृत्त अरु अनेक भांतिके यंत्रादिक वाद्य बाजे· अनेक भांतिकरि रागह्वोहिं· अरु अनेक भाईबंधु स्त्री चेरी सेवग पुत्र राजाधिकारी निंदा करै· किंवा अनेक राजादिक पंडितादिक अनेक भांतिकी स्तुति करै· परि यह कछू न समुझै· ऐसो बावरो करि डारै· अरु किती द्रव्यके उपायवेकों भोगादिकनिके करिवेकों· वैसो प्रवीण हुतो कि अबजो अनेक तीर्थादिकनिहूं ले प्राप्त करिये· अनेक भांतिकरि स्नानादिक करिवेकों समुझाइवे· परि याके लेषे तैसो मगहद तैसी काशी· औरकी कहा जो आठऊ सिधि· नवऊ निधि· त्रिभुवनको राज्य आइ आगे ठादो होई· आधीन होई· किंवा हाथी सिंह सर्पादिक सामुहे आवतु है· किंवा अग्निजली है· तौ यह नऊनको अंगिकार करै· नइनतें टरिके· देहहूकी रक्षा करै अरु जो मोक्षकी कहीये तो कहूं संभाव नाई नेजानै एनाही· जो कोऊ मोक्षकी महिमा कहि सुनावै· अरु कहैकि तोकों मोक्षपदवी दीजे· तोहू यह कछु समुझै एनाहीं· तातें ऐसो आलसी करि डारै· अरु बहुरि कैसो· करै· महोद्योग· जहांलों· अनेक भांतिकरि संचित सामग्री अतीव परमप्रीय स्त्रीपुत्र औरकी कहा· देहऊ जो आपनी तिनहूंकी कछु शङ्कि न राषे· ऐसो यह तत्वज्ञान अतो मुमुक्षुभिः त्यक्ता· जे महापुरुष परम दुःखमय ससार जानि करि त्रिभुवनराज्य आठऊ सिद्धि और ऊजे अनेक सुख तिनहूंतें विरक्त व्हैकरि केवल मोक्ष कहीकि इच्छाकरि स्थिर चित्तव्है करि रहैहैं· तिनिजो यातत्वज्ञानको षोज न कस्यौ· अरु सुननेहू करि न आदर कस्यौ· न अंगिकार कस्यौ· सो तो याहीतें जो यह तत्वज्ञान ऐसी चेष्टा भुलाइ डारतु है जाके

घरमें प्रवेश भये ते औरकी कहा मोक्षकी शुद्धि कदाचित् नकरै. अरु स्तुनिहू करि कदाचित् इच्छा नउपजै तो ऐसो है यह तत्वज्ञान मोक्षके वांछक जे है. तिनिकों तो शत्रुरूप है. औरनिकी कहा. या श्लोक करि अष्टावक्र तर्क वचन कहे है. तत्वज्ञानकी तो निंदासी जनाई करि स्तुति करि है. त्यौंही कबीरजीके वचन तथा. अरु मोक्षके वांछक जे है तिनिकी स्तुतिसी जनाइ करि ज्ञानीसे जनाई करि परम अज्ञानीनतें अज्ञानी कह जनाए कि. देषरे पुत्र; ता प्रभु ईश्वरकों पाये विनु स्तुरवनाही. एक ब्रह्म और इंद्रिय मनोगोचर समस्त माया तातें जेकोइ संसारकों दुःखमय जानिकरि सबकी वांछा छोडि बैठे है. अरु मोक्षकी इच्छा मनमें राषे है. तो तिनुतें अज्ञानी त्रिगुण विस्तारविषै कोऊ नाही वे प्रभु ईश्वर इच्छा अनिच्छा बंध मोक्ष इत्यादि समस्त तें दूरि. तातें वे पुरुष संसार सरोवर कों छांडि संसार समुद्रविषै परत है. तातें देषरे पुत्र, तू समस्तकी शुद्धि भुलाई करि एक निर्भय स्थल ईश्वरताविषै लीन हो किंबहुना ॥३॥ दोहा. वाचक ज्ञानीउद्योगी. मूकजडालस होय ॥ यहीतत्वके बोधकों भोगीत्यागत सोय ॥३॥ संस्कृत. यतोऽयंतत्वबोधः वागादीन् कुंठितान् करोतीति हेतोर्भोगेच्छुभिः त्यक्तः अनादृत इत्यर्थः तत्व बोधसिद्ध्यर्थमुपदिशति ॥४॥ श्लोक ॥ नत्वंदेहोनतेदेहो भोक्ताकर्त्तानवाभवान् ॥ चिद्रूपोसिसदासाक्षीनिरपेक्षःसुखंचर ॥४॥ टीका. -न त्वमिति. त्वंदेहादिरूपोनभवसि यतश्चिद्रूपोसिनतेतव देहबंधः असंगोह्ययंपुरुष इतिश्रुतेः नवाभवान् कर्त्ता भोक्ता यतः कर्तृभोक्तृप्रभृतीनां सदासाक्षी योयत्साक्षी सतद्भि

न्नः यथाघटसाक्षीघटादित्यर्थः अतस्त्वंदेहसंबंध्यनपेक्षः सन् सुखंचरेत्यर्थः॥४॥ भाषाटीका - हेपुत्र, जोकदाचित् कहैकि जोसत्कर्मादिकनकरियेतोक्योंकरिसुखपाइये· अरु अनेक सुखादिकनिको अंगीकारनकरिये तो यहक्योंकरिहोई· अरु और रह्योदेहतें ममत्वतोरनोकह्यो सोयह क्योंकरि होइ तौसुन· नत्वंदेहः तूंजोदेहविषें· आत्मबुद्धि राषतुहैकि यहमेंसोतो देह तूंनाहीं·देष जबया देहतें आत्माप्रयाणकरतुहै तबजे कोऊ आपने कहावत· है तेतो अनेकविलाप करतसंते देहको वेगेही घरतें दूरिकरतहै तातें देह तूंनाहीं· अरुनतेदेहः जो कदाचित कहैकि· भलौ यहजानी· मैंन्यारो देह न्यारी परि यहतो परमप्रियहैं जाकरि अनेक सुख होहि देषिये·सुनिये कहिये· करिये औरअनेक· तातें ऐसी आपनीदेह तातें ममत्व क्यों दूरि करिये तौसुनु· यहदेह तेरीनाहीं·यहतो अनेक भांतिके कर्म करि कर्मबंधननिसों तोकों बांधि कालके हाथ देकरि आप एक पगभरिचलैनाही· तूं जाइकरि तिनि कर्मनिको नचायो नाचहि· तातैं तेरीदेह काहेकी·यहतो परमशत्रुहै· अरु कर्तात्वंन तेरी शक्तिपाईकरि यह जडदेह इंद्रियादिक अनेक कर्म· निविषैं नसरहोतीहै· तूंन्यारो अकर्त्ता निःकर्म· अरु भोक्ता न· तूंतोपरमसुखमयहै· अनीहहै ·जाके कौनहू वातकीवांछाहीकु· कौनई व्यापना होइतौ ताको कछु भोगादिक कहीयेजे कोऊभोग कहीयतहै·तेसमस्ततो जडहैं· तोहीतें चेतनसे होतहैं· तातें चेतनसों अरुजडसों कैसो संग·तूं देहसो आस क्त ह्वैकरि क्यों कर्त्ता भोक्ता ह्वैकरि भ्रमतुहै· भवान्चिद्रूपोसि तूंतो परम चैतन्य स्वरूपहै·जाहिविनु यह देहै आ·

दि देकरि समस्त इंद्रियादिक ने कछु करि न सकें· अरु रहि न सकें· तेरी ही आधार हैं· तूं स्वतः प्रकास सदा साक्षि जन्म- स्थिति संहार·जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति·सुख·दुःख·पुण्य पाप बंधमोक्षादिक तिनिको दृष्टारूप है· तूं सदा एकरस है·अरु जो कोऊ दूजो होइ तो बांधै·छोडै·जो एक तूं ही परमानंद स्वरूप विराजतु है तो ऐसी हीनता·दुर्बुद्धि मनविषे·क्यों आनहिं· बंध्यो छूट्यो कहा वारवार करतु है· निरापेक्षः जाके कोन हू वातकी अपेक्षा होइ·सो पाये अनपाये सुखदुःखादिक पावै·तूं सदा परम अक्षय सुखस्वरूप अद्वैत अनीह अरु जे कछू नाना प्रकारके भेद सो जानियतु हैं· ते समस्त आपने ही मन करि लीये हैं·जब ही छोडि दीजही·तब ही कछु है ए· नाहीं·एक कोएक· तातें यों जानि करि सुखंचरः देहादिक· समस्त व्यवहार झूठो जानिकरि एक आत्मस्वरूपकी भावनाराषि सुख दुःखमय ज्यौं भावै त्यौं रहु· नविधि· ननिषेध नस्वर्ग·ननर्क·सदा आनंदमय विराजु·किमन्यत् दोहा देहनतेरी तूंनदेह· भोक्ताकर्त्तानाहिं॥ सबसारवीनिरपेक्षतु हि सुखीविचरजगमांहि॥४॥ संस्कृत· निरपेक्षत्वमुपपादयितुमाह॥५॥ श्लोक· रागद्वेषौ मनोधर्मौ न मनस्ते कदाचन॥ निर्विकल्पोसि बोधात्मा निर्विकारः सुखंचर॥ ५॥ टीका· - रागेति रागद्वेषौ तु मनोधर्मौ मनसस्तु कदाचिदपि तव संबंधो न भवतो अहंत्वदध्यासात् रागाद्यध्यासमात्रं कुर्वित्यर्थः ननु रागद्वेषौ ममैव धर्मौ कथं नेत्याशंक्याह· निर्विकल्प इति· यतस्त्वं निर्विकल्पः बोधात्मा चासि अतो रागादिविचार रहितः सन् सुखं चरेत्यर्थः॥५॥ भाषाटीका- हे पुत्र·रागद्वेषौ मनो·

धर्मो॰ रागअरु द्वेष एसमस्त जब मनउपज्यो तब देहविषैअ हंकार बांध्यो तब देहनिमित्त सुख दुःखादिक राग द्वेषादिक नानात्व उपज्यो तातें नमनस्ते॰ जामनके आचरण एसकलहैं सोमनही तेरोनाहीं॰ नआदिहुतो॰ अरु अंतरहसी तोहूतें॰ उपज्यो हो तोही विषें लीन व्है सो मन उपज्योतो द्वैत भावप्रकाश्यो॰ मनलीनभयो तब द्वैतभाव लीनभयो॰ निर्विशेषोसी तू विशेषा विशेष जहांलों द्वैत भावहै॰ तिन सबनकर रहित है॰ एसकल मिथ्याहै॰ मनकृतहै॰ बहुरि कैसोहै॰ तू बोधात्माचैतन्य स्वरूप ज्ञानस्वरूप यहजो कछु अज्ञान सो मनकृतहै॰ तू निर्विकारः जहांलों॰ जन्ममरण अवस्था सुख दुःखादिक त॰ हांलों सकल मनकृत तू सबनितें न्यारो यों जानि करि॰ सुखं चर॰ सुखपूर्वक ज्यों भावें त्यों आचर किंबहुना ॥५॥ दोहा॰ रागद्वेषमनधर्म है विनमनकछुहननाहिं॥ निर्विशेष निजबोधतुहि सुखीविचरजगमांहि॥५॥ संस्कृत ॥ श्लोक॰ सर्वभूतेषुचात्मानंसर्वभूतानिचात्मनि ॥ विज्ञायनिरहंकारोनिर्ममस्त्वंसुखीभव॥६॥ टीका॰ - सर्वेति सर्वभूतेषु कारणत्वेनानुस्यूतमात्मानंविज्ञायविभाव्यसर्वभूतानिचात्मनि अध्यस्तानिइति विभाव्य अहंकारादेतत्सर्वस्यात्मनेक स्फुरणं अहं ममाभिमानरहितस्त्वंसुखीभव॥६॥ भाषाटीका॰ - हेपुत्र सर्वभूतेषुआत्मानंचविज्ञाय जहांलों ब्रह्मादिस्थावरपर्यंत स्थूलसूक्ष्मविस्तारहै तासमस्तविषें एक केवल आपुहीकों जानिक॰ रि ज्यों एकहीदेह विषें नाना प्रकारके उत्तम मध्यमादि अंग कहीयत है॰ परि केवल देहईहै॰ त्यों जानि करि अरु सर्वभूतानिचात्मनि समस्तविस्तारको आपुहीविषें जानिकरि ज्यों त

रंगेसमुद्रविषें·समुद्रतरंगनिविषें·योंजानिकरिनिरहंकार यो जो कहतुहैकियहमेंवहश्रोरऐसो आपुको खंडनकर तुहै सो यह अज्ञान दूरिकरि ऐसोकरु अरु निर्मम· यहजो· कहतुहैकि यहमेरो अरुयहमेरो नाहीं सोजो एएक तूही· है· दूजोहैए नाहीं· तौभेद कैसो· योंजानिकरि सुखीभव जो· कछु संसार कहीयतु है· सोयाहीका अहंकार ममताकों कही यतुहै· तातें इनकों छोडि· ज्यों तेरो परमानंदस्वरूप है त्योंही होकिमन्यत् ॥६॥ दोहा· सर्वभूतमें आतमा ब्रह्म विषैं जगजान॥ अहंकारममतासकल त्यागमहासुखमा न॥ ६॥ संस्कृत· सर्वभूतानिचात्मनीत्येतद्दृश- दयति॥ ७॥ श्लोक· विश्वंस्फुरतियत्रेदं तरंगा इवसागरे ॥ तत्त्वमेवनसंदेहश्चिन्मूर्तेविज्वरोभव ॥ ॥७॥ टीका· - विश्वमिति यदेदंविश्वंसागरे तरंगाइवा धिष्ठानाभिन्नंतच्चैतन्यमेवअंतःकरणात् हेचिन्मूर्ते त्वंवि ज्वरोभव चिन्मात्रोहमित्यनुभवान्निवृत्तसर्वसंतापोभवेत्य र्थः॥ ७॥ भाषाटीका· - यत्रइदंविश्वंस्फुरति·ज्यासत्- त्यानंत स्वरूपविषैहै· दूजो नाहि·परियह संसार दूजोसोआ भासतुहै· कौनभांति सागरेतरंगाइव· जाप्रकार एकसमुद्रवि षें नानाप्रकारकी तरंग केवल कहिवे मात्र है· त्यों हेचिन्मूर्तेचैत न्यस्वरूप· त्वमेव सो सत्यस्वरूप दूजो नाहीं एक तू ही है· न· संदेहः यविषेंजोसंदेह सोई संसार जातें याविषें निश्चय- आनिकरि विज्वरोभवः परम शांतहो इत्यर्थः ॥ ७॥ ॥ दोहा· विश्वस्फुरतमें ब्रह्ममें ज्यों तरंगदरियाव॥ सोतूं निःसंदेहहै चिन्मूर्तीसुखपाव॥ ७॥ संस्कृत· प रमकारुणिकतयापुनः पुनर्बोधयति॥ ८॥ श्लोक·

श्रद्धस्वतातश्रद्धस्वमात्रमोहं कुरुष्वभो ॥ ज्ञानस्व
रूपोभगवानात्मात्वंप्रकृतेःपरः॥८॥ टीका.-
श्रद्धस्वेति श्रद्धस्वतातश्रद्धस्व अत्रचिद्रूपतया असंभाव-
नाविपरीतभावनारूपंनकुरुष्व अत्रेत्युक्तंविशदयति
ज्ञानस्वरूपःप्रकृतेः परस्त्वंकीदृशस्त्वंभगवान् तत्पदार्थः
तथाआत्मात्वंपदार्थः ॥८॥ भाषाटीका.- भोता
त हेपुत्र श्रद्धस्वतात श्रद्धस्व बड़ा आनिकरि आपकूधन्य-
मानिकरि निश्चय आनिकरि एकनिकरिहृदयविषेंधरु. अ
त्रमोहंनकुरुष्व. इनिवचननिनें समस्तमोह दूरि होत हैं तातें
इहां असावधान कदाचित मतहोहि देष. ज्ञानस्वरूपोभ
गवान् ज्ञानमूर्तिजोईश्वर षड्गुणैश्वर्यसंपन्न सर्व साक्षी.
आत्मा सर्वव्यापक प्रकृतेःपरः जाकीशक्तिकरियह त्रिगु-
णात्मिकमाया उत्पत्तिप्रतिपालसंहारादिकनिविषें शक्ति
वंत होतिहै.ऐसोजो स्वरूप सत्वं सो और दूजो नाहीं. केऊक
बल तूहीहै. ज्यों गृह पृथ्वीतें न्यारोनाहीं. त्यौं यहनिश्चय
आनिकरि एकवस्वरूपह्वो किमन्यत् ॥ ८॥ दोहा.
हेसुतश्रद्धाआनिकर मोहनकरअतिकूर॥ ज्ञानरूपआ
तमतुही निजमायातेंदूर॥ ८॥ संस्कृत. श्लो
कः गुणैःसंवेष्टितोदेहस्तिष्ठत्यायातियातिच
॥ आत्मानगंतानागंताकिमेनमनुशोचसि ॥ ९॥
टीका. - गुणैरिंद्रियादिभिः संवेष्टितो देहो लोकेति-
ष्ठतितथा आयाति तथाकिंचित्कालंयातिच गच्छति देहा
दिभिन्न आत्मानगंतानाप्यागंतातोहं गंताहं गमीष्यामी
त्येव मेनंकिंशोचसि देहधर्मैरात्मानंमाशोचेत्यर्थः ॥ ९॥
भाषाटीका. - गुणैःसंवेष्टितोदेहः सत्वरजस्तमइति.

तीनिगुणनिकरि रचितजो देहसो आयाति तिष्ठति याति च ब्रह्माके लोकतें शेष देवलोक पर्यंत संसारचक्रविषेंउपजतिहै· वर्ततिहै· नष्टहोतिहै आत्मानगंता आगंता·आत्मान कौनहू वस्तुकरि रच्यो·नकहूं जाई नआवे·आत्मास्वतःसिद्ध· स्वतः प्रकाशसर्वव्यापक अखंडित एकअविनाशी· तातें एनंकिं अनुशोचसि· या आत्माकों·क्यों शोचकरतुहै·कि उपज्यो·किंवृद्ध भयो किंबढ्यो किंसुखकिंदुःख इत्यादिक सकल देहकोंहै· कौनभांति ज्यों·आकाशविषें नानाप्रकारके पात्रहैं· अरु एकओर उपजाइवै·एक·फूटिजाहि·एकवर्ते·एक केतिओ दूर लेजाइये·पारि आकाशनउपजै· नविनसै· नआवे· नजाइ· सदा अक्षय एकरस त्योंजानि करि सुखीहो इत्यर्थः॥९॥ दोहा वेष्टितदेहगुणनितें तिष्ठत आवतजात॥ आतमजातनआतकछु शोचनकरियेतात॥९॥ संस्कृत नापि देहस्थिसुक्रांतिभ्यांतव वृद्धिहानीत्याह॥२०॥ श्लोक देहस्तिष्ठतुकल्पांतंगच्छत्वद्यैववापुनः॥ क्ववृद्धिः क्वचवाहानिस्तवचिन्मात्ररूपिणः॥२०॥ टीका·- देहइति नित्यचिन्मात्ररूपिणः तवदेहस्थित्यानवृद्धिः नवादेहनिवृत्या हानिरित्यर्थः॥२०॥ भाषाटीका·- देह कल्पांत तिष्ठतु·जोयहदेह ब्रह्माकेआयुसमान रहौतो रहो· अद्यैववागच्छतु·जो आजहीजाऊतोजाऊ· चिन्मात्ररूपिणस्तव· केवल अक्षय चैतन्यमूर्तिजो एकतू ताकी क्ववृद्धिः क्वचवाहानिः काहेतें वृद्धिः काहेतें क्षति ज्यों समुद्रविषें तरंगें उपजे तो समुद्रकी कछु वृद्धिनाहीं· अरु निवर्त भयेकछु क्षांतिनाहीं·योंजानिकरि

सुखस्वरूपहो किमन्यत्॥१०॥ दोहा॰ देहरहो कल्पांतलों भावैंअबहीजाय॥हानिवृद्धितोकौंकहां तूं निजचेतनताय॥१०॥ संस्कृत॥ श्लोकः त्वय्य नंतमहांभोधौविश्ववीचिःस्वभावतः॥उदेतुवास्त मायातु नतेवृद्धिर्नवाक्षतिः॥११॥ टीका॰ - त्व यीति॰ विश्वाख्यंवीचिः त्वय्यनंतचित्समुद्रे उदेतु अथ वा॰ स्तमायातु नतेवृद्धिःनवाक्षतिः तवानंतत्वादित्यर्थः॥११॥

भाषाटीका॰ - त्वयिअनंत महांभोधौ॰ तूंहीजोहै अपा रबडो समुद्र ताविषैं विश्ववीचिस्वभावतः संसारईभयो जो नानाप्रकारकीलहरि स्वभावहीतें सहजही उदेस्कवा स्तमायातु तेरी समुद्ररूपकी नउपजे तें वृद्धि॰ नांविनसे तें क्षतिः तातें योंजानिकरि सुखीहो किमन्यत्॥११॥ ॥ दोहा॰ तूंअनंतसागरविषे जगततरंगसमान॥ लहर वधेजल नावधै घटेनजलकी हान॥११॥ संस्कृत ॥ श्लोकः नात चिन्मात्ररूपोसिनतेभिन्नमि दंजगत्॥ अतः कस्यकथंकुत्र हेयोपादेयकल्पना ॥१२॥ टीका॰ - नातेति सर्वस्यत्वदभिन्नत्वान्न हेयमुपादेयमित्यर्थः॥१२॥ भाषाटीका॰ - तात॰ हेपुत्र॰ चिन्मात्ररूपोसि केवल एक चैतन्यमूर्ति तूंहीहै दू जोकछू हैयेनाहीं इदंजगतेभिन्नंन॰ जोकहै यहसंसार जोहैसो कहांतें दूषु॰ यहसंसार जोकछु कहावतुहै सो॰ तोतें न्यारो नाहीं केवल तूंहीज्यों देहविषें अनेक अंग॰ अतः याहीतें कस्यकथंकुत्रहेयोपादेयकल्पना जोदू जोहैयेनाहीं तोकौनुकहा॰ त्यागे कौनकहांग्रहे॰ कहांउ त्तम॰ कहाअनुत्तम॰ तातें एसमस्तमनकी भेदकल्पना-

छोड़ तूं सुखस्वरूपहै ॥१२॥ दोहा. हैसुतूचेतन रूपतुहि नहीभिन्नसंसार॥ जानैकिसकौंकहाहै छोडणग्रहणविचार॥१२॥ संस्कृत. श्लोक. एकस्मिन्नव्ययेशांतेचिदाकाशेमलेत्वयि॥ कुतोजन्मकुतः कर्मकुतोहंकारएवच॥१३॥ टीका. - एकस्मिन् सजातीय विजातीय स्वगत भेदशून्ये अव्यये शांतेच कार्यशून्ये चिदाकाशेनिर्मलेच सर्वोपाधिशून्येच त्वयि कुतो जन्मकुतः कर्मकुतश्चाहंकारः द्वितीयस्यहेतोरभावात् अव्ययस्यचजन्मासंभवात् कार्यशून्यस्यच कर्म कुतः कर्तृत्वासंभवात् निर्मलस्याहंकारासंभवादित्यर्थः॥१३॥ भाषाटीका. - एकस्मिन्त्वयि. एकई अद्वैतस्वरूपजोहैतूं कैसोहै. तूं अव्यय. अविनाशी ऐसै तेरे एक स्वरूपविषैं कुतोजन्मकुतः कर्म. जो अजन्माती जन्म कैसो जे अविनाशीतौ विनाश कैसें. जो एकहीतो वर्जा कौन वस्तुको अरु अहंकार एव वाकुतः यहजो मनमें आवतुहैकि पहमेंयह और तोयहां कौन ज्ञानहै कैसोतूं शांते परमशीतलसुखस्वरूपहै. अरु चिदाकाशे. ज्यौं आकाश अजन्मा अविनाशी अखंडित अलेपक अनिच्छ अनावृत्त. अपार अनंत अकार ज्योंतूं अरु और लक्षणनि संयुक्त तौ आकाश समान परियहबडो भेदजो आकाशजड. तू चैतन्यमूर्ति अरु अमले. तूंजो कहतुहैकि मेंअशुद्ध. व्हैकरि ब्रह्मकों मिलौं तो ऐसो अज्ञान क्यौं मनमें आनतुहै. तूंवोपरमनिर्मल. - स्वरूपहै. ज्यौं लगि मनमें मलिनता धरि लईहै तोलौं अनेकजतनकरि तिहिंतो कछुनाहीं जबही आपनो निर्मलस्वरूप समुझही तबही निर्मलकोनिर्मलतातें ऐसोएकआ

त्मस्वरूप जानिकरि सुखीहो इत्यर्थः ॥१३॥ दोहा· एकहिअव्ययशांतचिद् निराकारनिर्मान॥ तामेंजन्मरुक मेंकहा अहंकारअभिमान॥१३॥ संस्कृत· एकत्वमुपपादयति॥१४॥ श्लोक यस्त्वंपश्यसितत्रैकस्त्वमेकः प्रतिभाससे॥ किंपृथक् भासतेस्वर्णात्कटकांगदनूपुरम्॥१४॥ टीका· -यस्त्वमिति यत्यत् कार्यंत्वंपश्यसितत्रकारणरूपस्त्वमेव एकःप्रतिभाससे इत्यर्थः॥१४॥ भाषाटीका· -हेपुत्र,यस्त्वंपश्यसि यहजोकछुविस्तार तूंदेषतुहे· तत्र तासमस्तविषें एकस्त्वमेवप्रतिभाससे· केवल एकतूंही शोभतुहै· दूजोनाहीं कौनभांति· दृष्टांत कटकांगदनूपुरम् स्वर्णात् किं पृथग्भासते· माला मुंदरि मुकुट कंकण नूपुर इनिको आदि देकरि अनेक भांतिके आभरणतेकहा· सोनेतें· न्यारोहै· किंतु सोनोईहै· वैनाम मात्रहीहै· ताहीप्रकार केवल एक आत्माबुद्धि इनकरि सुखीहोहु इति· ॥१४॥ ॥ दोहा· जोतूंदेखत एकमय तुहिसोभितइतरंग॥ कहाजुदोजुसुवर्णतें भाषतभूषणअंग॥१४॥ संस्कृत·॥ श्लोक अयंसोहमयंनाहं विभागमितिसंत्यज॥ सर्वमात्मेतिनिश्चित्य निर्विकल्पःसुखीभव॥१५॥ टीका· - अयसोहमिति· कारणरूपः आत्मैवसर्वमितिचित्ताद्भेदभ्रमंत्यज तथाचनिर्विकल्पो विगत नानाप्रतिभासः सन् सुखी भवद्वितीय प्रतिभावनादतिदुःखंभवतीत्यर्थः॥१५॥ भाषाटीका -अयसोहं यहजोहौंसोमेंहौं· अयंनाहं· यहमेंनाहीं· पह और· इतिविभागंसंत्यज्य· यहजो खंडित करणो भेद

कद कां
ग दूटो
स्वर्ण वंद
त्यर्थः

कोआनिवो सोसमस्त दूरि करु सर्व आत्मा· भाई जोक· छु इंद्रिय मनोगोचर है· अरु इंद्रिय मनो अतीत है·सोस मस्त एक आत्मा मे ही हों· इतिनिश्चित्य· ज्यों कहे सुनहि त्यों ही प्रतीत करि हृदय मे आनिकरि निःसंकल्पः जेकछु द्वैतभावके संकल्प है ते समस्त छोडि करि सुखी व ज्यों सुख स्वरूप है त्यों ही हो इत्यर्थः ॥१५॥ दोहा· य हि मैं हूं मै नाहि यहि मै नाहीं यह ओर॥ तजो द्वैत आतम विषै निश्चय सुखइकठोर॥ १५॥ संस्कृत· विभा गत्यागे युक्तिमाह·॥१६॥ श्लोक· तवैवज्ञानतो विश्वंत्वमेकः परमार्थतः॥ त्वत्तोन्योनास्तिसंसारी नासंसारीचकश्चन॥१६॥ टीका· - तवैवेति तवै वाज्ञानतोविश्वं विश्वाकारो विक्षेपः अतः परमार्थतस्त्वमेकः अतः संसार्यसंसारीत्त्वत्तोनान्यः कश्चिदित्यर्थः ॥१६॥ भाषाटीका· - हेपुत्र विश्वं तवैव अज्ञानतोभाति अहो कछु संसार करि जानतु है· सो समस्त केवल तेरेही अज्ञा· नतें जान्यो सो परतु है·परि परमार्थतः एकस्त्वमेव विचारि करि देषै ते केवल एक तूही है· संसारित्वत्तोन्यो नास्ति· यह· जो संसार कहि सो तोहितें दूजो नाही· तूंही है· अरु कश्चन· असंसारीन· कोऊ असंसारी नाहीं· जो एक तूंही है· तोकों नऊपजो· कौनविसे कौनबंधे· कौन छूटे· यों एक अद्वैत आ त्मास्वरूप जानिकरि सुखी होइनि ॥१६॥ दोहा· जगतेरे अज्ञानतें ब्रह्मज्ञानतेंजोय॥ तूंनजु दो संसारतैं वि श्वदूरनहिहोय॥ १६॥ संस्कृत· श्लोक· भ्रां तिमात्रमिदंविश्वंनाकिंचिदितिनिश्चयी॥ निर्वासनो स्फूर्तिमात्रो नकिंचिदिवशाम्यति॥१७॥ टीका·

इदंविश्वंभ्रांतिमात्रसिद्धं अतोकिंचित् पृथक्सत्तारहि
तमित्यर्थः इतिनिश्चयीअंतरेवसर्वस्यनिरस्तत्वान्निर्वास
नस्फूर्त्तिमात्रोवासनारहितस्फूर्तिमात्रः सन् नकिंचिद्दिव·
निरस्ताशेषेविशेषःसन्शाम्यति ॥१७॥ भाषाटीका·
भ्रांतिमात्रइदंविश्वं यहजोकछुसंसार कहीयतुहैसोतो·
सकल केवल आपनेहीमनको भ्रमहै· नाहीतो कछुहैयेना
हीं· एक आत्मस्वरूपईहै· ज्यौं कोऊबालकखेलतेसंते भ्रमै
तबसमस्तस्थिर वस्तु भ्रमतीसीदेषै· त्यौंहीतातें नकिंचित्
कछूहैयेनाहीं· इतिनिश्चयी· यहप्रतीतजाके हृदयविषें·
आइहैसो निर्वासनः ज्यौंद्वैत भावदूरिही कर्‍योहै तौवास·
नाकौंनवातकी करै· तातें स्फूर्तिमात्र प्रकाशरूप भयोहै·अ
ज्ञानजडता दूरिभईहै· तातें तत्क्षणात्· ताहीक्षणमात्र य
हज्ञान आवतमात्र· अवशाम्यति·परमशांत ताकौं प्राप्त·
होई· अक्षय सुखरूप होई· किमन्यत् ॥१७॥ दोहा·
भ्रांतिमात्रमनकृतजगत निश्चयओरनजान॥ व्हैप्रकास
निर्वासना परमशांतिसुखमान॥१७॥ संस्कृत· ॥
श्लोकः एकएवभवांभोधावासीदस्तिभविष्यति
॥ नतेबंधोस्तिमोक्षोवा कृतकृत्यःसुखंचर॥१८
टीका·- एकएवेति कालत्रयेपिभवांभोधौ एकस्त्वमेव
अतस्तवबंधमोक्षौ नस्तः अतस्त्वं कृतकृत्यःसन्सुखं
चर॥१८॥ भाषाटीका·- भवांभोधौएकएवआः
सीद· यहजोसंसार समुद्रताविषें केवल एकआत्माईहु·
तौ औरद्वैत कछुहुतो नाहीं· अर अस्ति अबहूं औरक
छूहैएनाहीं सोईहै· अभविष्यति आगेहू· औरकछु·
होसीनाहीं·जोहुतोसोईहै· अरुसोईरहसी· नतेबंधो

स्ति मोक्षोवा जो दूजो होए नाहीं एक तूंही है तौ कैसो बंध के
सो मोक्ष· नबंधन मोक्षः कृतकृत्यः तूं क्यों कहतु है किभाई
मैं केहूभांति कृतार्थ होऊ सोतो तूं तो कृतार्थ है· आपकोंस
मुक्ति सुखंचर· दुःखभ्रमदूरिकरि सुखरूपविराज इत्या
दि·॥१८॥ दोहा· एकहिभवसागरविषें वर्त्तनभूतभ
विष्य·॥ तातैंबंधनमोक्षनहिं कृतकृत्योहेशिष्य॥१८॥॥
संस्कृत· ॥ श्लोक· मासंकल्पविकल्पाभ्यां चित्तं
क्षोभयचिन्मय॥ उपशाम्य सुखंतिष्ठ स्वात्मन्यानंदवि
ग्रहे॥१९॥ टीका· - मासंकल्पेति हेचिन्मय त्वंसंक
ल्पविकल्पाभ्यां चित्तंमा क्षोभय· उपशाम्य उपरत संकल्पवि
कल्पोभव आनंदरूपे स्वात्मनि सुखंतिष्ठ ॥१९॥ भा·
षाटीका· - हेचिन्मय चैतन्यस्वरूप जाका शक्तिकरिज
ड एसमस्त देह इंद्रिय मन बुद्धि चित्त अहंकारादिक चेत·
नसे व्हैकरि अनेक अर्थनिविषें प्रवर्त्त तहै ऐसोजो तूं सो
मासंकल्प विकल्पाभ्यां चित्तंक्षोभय· अनेकजे संकल्पवि
कल्प भेदाभेद तिनिकरि चित्तकों क्यों वादिहि क्षोभउप
जावतु है· स्वात्मनि आनंदविग्रहो· एक सर्वव्यापी तूंही
जो परम आनंदस्वरूप ताविषें उपशाम्य मनस्थिर करिकें
सुखंतिष्ठ सुखस्वरूपह्वो इति ॥१९॥ दोहा· यहि
संकल्पविकल्पनें क्षोभनकरियेचित्त॥ मनस्थिर करहेचि
न्मय सुखआनंदनिचित्त॥१९॥ संस्कृत· ॥
ध्यानमपित्यजेत्याह॥२०॥ श्लोक· त्यजावधा
नंसर्वत्रमाकिंचिद्धृदिधारय॥ आत्मात्वंमुक्तएवा
सिकिंविमृश्यकरिष्यसि॥२०॥ ॥ इतितत्वो
पदेश विंशतिकंप्रकरणपंचदशंसमाप्तम्॥१५॥

टीका॰ – त्यजेति सर्वत्रध्यानंत्यज कुत्रापिध्यानंमाका॰
र्षीरित्यर्थः एतदेव विशदयति माकिंचित्हृदिधारय मन॰
नमपित्यजेत्याह आत्मेति आत्मात्वंसदामुक्तएवा॰
सि अतोविमृश्यविचार्यकिंफलंकरिष्यसि नित्यमुक्तत्वा
दित्यर्थः ॥२०॥ ॥ इतिश्रीमद्विश्वेश्वरविरचितायां
अष्टावक्रटीकायांतत्वोपदेशविंशतिकसमाप्तं॥ १५॥
॥ भाषाटीका॰ – हेपुत्र सर्वत्र बंधनंत्यज॰ सम
स्तविस्तारविषेंजो कछु बंधन करि जानतुहै॰ सोसमस्तदू
रिकरि॰ सोकौनभांति॰ माकिंचित्हृदिधारय॰ बंधनकछू
हैएनाहीं॰ एक तूंहीहै॰ परिमनविषें जोकछू बंधन मानि
लयोहै॰ तातें दुःख समुद्रविषें बूडतुहै संते त्वद्रूपतें द्वैत
भाव दूरिकरि निर्बंधईहै॰ आत्मात्वं॰ तूंएकही सर्वव्यापक
है॰ मुक्तएवासि॰ तूंजो कहतुहैकि में छूटोसो तेरोबंधनि
हारो कौन॰ तूंतो सदा आनंदमयीहै॰ विमृश्यकिं करिष्यसि
तूंजो अनेक विचार करतुहै॰ ज्ञान की वांछा करतुहै सो कहा
है॰ तूं आपकों समुझि करि सुखरूपहो॰ ॥२०॥ ॥
दोहा॰ बंधनतजियेसकलमे हिरदयधरोनआन॥ मु
क्तरूप आतमतुही कहाविचारबयान॥ २०॥ ॥ श्री॰
धरसकलविवादमें होवनमनविश्राम॥ ज्यौंसुपनेंसुख
अथिरहै॰ स्थिरसुषुप्तिसुखधाम॥ १॥ ॥ इतिश्री
अष्टावक्रभाषाटीकाताकोतत्वोपदेशनामताकोपंचदशो
पदेश संपूर्णभयो॥ १५॥ ॥ ॥

अथ षोडशोपदेश प्रारंभः

श्लोक॰ पृथक्सत्वेनसर्वस्यविस्मृतिर्मुक्तिसाधनं॥
तृष्णाघनर्थविच्छेदद्वारेणेत्यत्रवर्ण्यते॥ १॥ ॥

तत्वज्ञानेन सर्व प्रपंचस्यपृथक्सत्तयाविस्मरणकारणेव-तृष्णा यामायादि द्वारा मुक्तिर्नान्यथेतिविशेषमुपदिशति॥१॥ श्लोक आचक्ष्वशृणुभोतात नानाशास्त्राण्यनेकशः॥ तथापिनतवस्वास्थ्यंसर्वविस्मरणादृते॥१॥ टीका- आचक्ष्वेति हेतात त्वं नानाशास्त्राण्यनेकशः अनेकवारंशिष्येभ्य आचक्ष्व गुरुभ्यः श्रृणुवा तथापितवसर्वविस्मरणादृतेस्वास्थ्य श्रेयोनास्तीत्यर्थः सुषुप्तौतु यद्यपि विषयविस्मरणमस्ति तथाप्यज्ञानविस्मरणं नास्तीति भावः जीवन्मुक्तस्यतुसर्वस्याध्यस्तत्वानुसंधानरूपविस्मरणमस्तीतिभावः॥१॥

॥ भाषाटीका- हेतात अनेकशः नानाशास्त्राणि-शृणु वारवार अनेक पंडितनिके मुखतें अनेकजन्मभरि नाना प्रकारके शास्त्रनिकों सुनिवोई करु अरु वा आचक्ष्व अनेकनिसों सदैव कहिवोही करहि तथापि तोहू अरु अनेक जत्नकरेतें तेतवस्वास्थ्यंन तोकों तोऊ कदाचित सुखनाहीं काहेतें सर्वविस्मरणादृते जोंलगि समस्तसंसार व्यवहारझूठोजानिकारि हृदयतें दूरि नाहीकरयौ तातें शास्त्रदेषु किंवा गतिदेषु केवल एक समस्त संसार व्यवहार कों मिथ्याजानि हृदयतें दूरिकर जेतनोही विज्ञान तबही सुखस्वरूप॥१॥ दोहा कह्योसुन्यौ तोकौं बहुत॥ हैसुत शास्त्र अनेक॥ जहांलौं तोकों-सुखनहीं तहांलौं बहुतविवेक॥१॥ संस्कृत ॥ सर्वविस्मरणेसति सर्वस्वरूपं चित्तं निरस्तसर्वाशं भवतीति सूचयन्नाह॥२॥ श्लोक भोगकर्मसमाधिं-वा कुरुविज्ञतथापिते॥ चित्तंनिरस्तसर्वाश मत्य

र्थंरोचयिष्यसि ॥२॥ टीका - भोगमिति हे विज्ञ त्वं भोगं कर्मसमाधिभोगं कुरु कर्म वा कुरु समाधिं वा कुरु तथापि चित्तमत्यर्थं रोचयिष्यसि कीदृशं चित्तं निरस्तसर्वाशं सर्वविस्मरणेसति सर्वाशानुदयादित्यर्थः ॥२॥ भाषाटीका - हेविज्ञ भोगं कुरु भोग करे तो करु अरु कर्म समाधिं वा जो कर्म करे तो करु ज्यौं भावे त्यौं रहु तथापि तौहू निरस्त सर्वाशं चित्तं दूरि करी हैं समस्त स्थूल सूक्ष्म मन की आशा जिनि ताकौं अत्यर्थ रोचयिष्यति समस्त विस्तारविषें जे कछू शोभावंत हे तिनि सबनिके ऊपर शोभाको प्राप्त व्है है जो अकेली आशा दूरि करी तो समस्त संसार दूरि भयो जो एक आशा है मोक्षादिक हूकी स्थूल सूक्ष्म तो कछू छूट्यौ नाहीं इत्यर्थः ॥२॥ दोहा कर्मसमाधीभोग अरु करहे विज्ञ विचार॥ चित्तनिरस्त सभ आशनें तव आति अर्थ प्रकार॥ २॥ संस्कृत सर्वतृष्णाविलये सति तु कृते नापि कर्मणा दुःखहेतुरायासो न भवतीति सूचयन्नाह ॥३॥ श्लोकः आयासात्सकलो दुःखी नैनं जानाति कश्चन॥ अनेनैवोपदेशेन धन्यः प्राप्नोति निर्वृतिं ॥३॥ टीका - आयासादिति सकलो जनः आयासादेव दुःखी भवति परंतु कश्चन एनमायासं न जानाति दुःखहेतुरयमिति न वेत्ति अनेनेति आयासात्सकलो दुःखी त्यनेनैवोपदेशेन धन्यः स्कृती निर्वृतिं परमसुखं प्राप्नोति ॥३॥ भाषाटीका आयासात्सकलो दुःखी सुखादिकनिकी वांछा करि ज्यौं ही ज्यौं उद्यम करे त्यौं ही त्यौं दुःखनिकी प्राप्ति होती है परि नैवजानाति कश्चन बडोई आश्चर्य है जो कोऊ जानत नाही तीन

ऊलोक आप आपमें उद्यम ई करते देषतहै· सबही सुषकी वांछातें देषतुहै· अरुजे निवृत्तिभये सकल उद्यम त्यागे· ते वांछा अवांछा छोडे ते निवृत्तिभये योंही सुनतेहैं· अरु जानतेऊ है· परिकहूं हृदयमें लगतीनाहीं अने नैवोप देशेन धन्यः निवृत्तिं प्राप्नोति· जोकोऊ बडभागी पुरुष· संसारके दुःखनितें छूट्यो सो भलोयाही उपदेशतें छूट्यो अरु दूजो पैड्यो· छूटिवेको नाहीं तातें तूंयों जानि करि सकल मनोवचन कर्मकरि जे स्थूल सूक्ष्म उद्यम तिनितें रहित होयतो संसारतें रहिताहोहि ॥३॥ दोहा सुख की आशा दुःखलहै यहनहिं जानत कोय ॥ यहिजानत- सोईधन्यहै ताकोंअति सुखहोय॥ ॥३॥ संस्कृत· व्यापारानासक्तिःसुखहेतुरित्याह ॥४॥ श्लोकः व्यापारेखिद्यतेयस्तु निमेषोन्मेषयोरपि ॥ तस्यालस्यधुरीणस्य सुखंनान्यस्य कस्यचित् ॥४॥ ॥ टीका· – व्यापारइति· योनिमेषोन्मेषयोरपि कर्मणिव्यापारे खिद्यते अनासक्तो भवति तस्यालस्य धुरीणस्य क्रियाभिनिवेशरहितस्य सुखंनान्यस्य क्रियाभिनिवेशयुक्त- स्य॥४॥ भाषाटीका· यस्तुनिमेषोन्मेषयोरपि- व्यापारेखिद्यते· जोकोऊ मनहूके संकल्पविकल्पनिकरि सूक्ष्मऊ व्यापार करतुहै· तस्यालस्यधुरीणस्य सुखं न· जैसो जो संसारभारको वाहक ताकों सुख कैसो· रूठोही सुख अन्यस्य कस्यचित्कथं ओरजोकोऊ स्थूल इंद्रियादिकनि कर्मनिविषें नसरहै ताको काहेको सुख·तातें समस्तस्थूल सूक्ष्म उद्यम छोड· अकर्त्ताव्हैस्थिर व्हैरहु· किमन्यत्॥५॥ दोहा· अनाशक्तव्यापारतें लव-

निमेषमनहोय॥ कर्मालसीधुरीएकौं स्नखनश्रानिकौ-
जोय॥ ४॥ संस्कृत· सर्वतृष्णालयेसति द्वंद्वा-
निरपिभवतीतिसूचयन्नाह॥ ५॥ श्लोक· इदंकृ
तमिदंनेति द्वंद्वैर्मुक्तंयदामनः॥ धर्मार्थकाममो·
क्षेषुनिरपेक्षंतदाभवेत्॥ ५॥ टीका·- इदंकृत
मिदनेत्यादिद्वंद्वैर्मुक्तंयदामनोभवेत् तदापुरुषार्थचतुष्ट
येपिनिरपेक्षं भवेत् द्वंद्वातीतस्यजीवन्मुक्तत्वादित्यर्थः॥
५॥ भाषाटीका·- इदंकृतइदंन भाई यह साच·
यह झूठो·यह भलौ·यह अनभलौ· इतिद्वंद्वनिकरि यदाम
नः मुक्तं जबही मन निवृत्तिभयो तदातबही धर्मार्थका
ममोक्षेषु· अर्थ धर्म काम मोक्ष अरुच्यारप्रकारकी जे·
मुक्ति तिनिते निरपेक्षतदाभवेत्· तबनिरपेक्ष होई कौनहू
वस्तुको अंगिकार नकरै·जब संसारकेजेकछू साच अरुझू
ठेसमस्त इंद्रिय मनोगोचर वस्तु केवल झूठेई करि जाने·तब·
क्यौं अंगिकार करै· तातें इंद्रिय मनोगोचर जोकछुहै सो स·
मस्तझूठीजानिकरि हृदयतें दूरिकरु इति॥ ५॥ दोहा
॥ भलीबुरीअकरणकरण दुविध्यातेंमनदूर॥ च्यारवर
गमैंआशातज होतस्नखीभरपूर॥ ५॥ संस्कृत·
पुरुषार्थकामनानिरपेक्षस्त विरक्तकामुकाभ्यांविलक्षण·
इत्याह॥ ६॥ श्लोक· विरक्तोविषयद्वेष्टारागी
विषयलोलुपः॥ ग्रहमोक्षविहीनस्तुनविरक्तोनरा
गवान्॥ ६॥ टीका·- विरक्तइति मुमुक्षुः सन्योवि
षयद्वेष्टा सविरक्तः कथ्यते कामसापेक्षः सन्·योविषय लो
लुपः सरागीतिकथ्यते यस्तुग्रहमोक्षविहीनः ग्रहमोक्षे
च्छाभ्यां विहीनः सविरक्तस्तुरक्ताभ्यांविलक्षणः सर्वतोनिरपे

क्षतया हानोपादानेच्छारहितत्वादित्यर्थः॥ ६॥ ॥
भाषाटीका· - देषरेपुत्र· यहनिवृत्तिको मार्ग परम सूक्ष्महै· रागद्वेष विरक्ति आशक्ति इत्यादिकनितें दूरिहै· तोदेष· केवल ज्ञाननतें निवृत्तिमार्ग पाइये· अन्यथादूरिहै· सोई कहीयतुहै· विरक्तोविषय द्वेष्टा· जो संसारदुःखमय जानि छूटिवेको जतन करणे लग्यो· परमविरक्त भयो इंद्रियनके अर्थ शब्द स्पर्श रूप रस गंध इत्यादिक शत्रु करिजाने· परिज्ञान उत्पत्ति नाहीं· तो सोपुरुष शत्रु समान· जानि इंद्रियार्थनिके द्वेषविषें प्राप्त होई· अरु भयजुक्तरहै ऐसेमित्र हृदयविषे नरहै· जैसेशत्रु सदारहै तातें त्यागैनाहीं· किंतु दृढकरिगहै· अरु रागी विषयलोलुपः अरु जासों इंद्रियार्थ त्यागेनाहीं जातें सो सदाविषयनिविषें प्रीतिजुक्त रहतुहै· वाकेमनतें कदाचित न्यारो होतनाहीं· गृह्णमोक्षविहीनस्तः· जो ज्ञानवंतहै सो नकछुग्रहै· न कछु त्यागै· दुहुतें न्यारे· नविरक्तोनरागवान् नतौकौनहू वस्ततें विरक्त होई· नकौनहू वस्तविषे· अनरक्त होई· किंतुदेहादिक समस्त विस्तारको नाहीं किभावना राषि एक अद्वैत सत्यस्वरूपकी भावना राषि सहज स्वभाव वर्तै· तातें यहज्ञान गहि करि निवृत्ति हो किमन्यत्॥ ६॥ दोहा· विषयनको वैरीविरक्त रागीविषयनुराग॥ त्यागग्रहणनहि ताहिकौं· नहिविरक्तनहिराग॥ ६॥ संस्कृत· ननु ज्ञानिनोपि हेयोपादेयादिव्यवहारोदृश्यत इतितत्राह॥ ७

॥ श्लोकः हेयोपादेयतातावत्संसारविटपांकुरः॥ स्पृहाजीवतियावद्वैनिर्विचारदशास्पदम्॥ ॥ ७॥ टीका· - हेयोपादेयतेति निर्विचार दशास्य

द्यमविवेकदशामयी भूतास्पृहा तृष्णाजीवनि तावत्पर्यं तमेव हेयोपादेय ताहानोपादानादिव्यवहारः संसारवृक्षस्य शाखांकुरोभवतिज्ञानिनांतुस्पृहाभावात्ययपिऽपिहेयोपादानादिव्यवहारे संसारशाखांकुरोभवतीत्यर्थः॥ ॥७॥ भाषाटीका - हेयोपादेय ताता वत्संसारविटपांकुरः तावत् भाईयहवस्तु भलीनाहीं त्यागकरौ यहवस्तु भलीहै याको लेऊ इत्यादिक जेविचार ते तो लगि है अरु संसार वृक्षको अंकुर तो लगि है कबलगि स्पृहा धावति यावहै जौंलगि कौनहू वस्तु की वांछा मनमें उपजति है तोस्पृहाको वास कहां निर्विचारदशास्पृहं अज्ञान दशाविषें स्पृहाको वासो जहां अज्ञान तहां स्पृहाकीउसत्ति जहांज्ञान तहां कौनऊवस्तु साची करिदेषैएनाहीं एक अद्वैत सत्य स्वरूप सो सर्वत्रपूर्णहै कहूं दूरिनाहीं कबहू तासों वियोग नाहीं ज्ञानकरिज्यौंहुतो त्यौंदेषिपरयौ तातें स्पृहा कौन वस्तुकी करै इति तातें देषु ज्ञानको फल यह समस्त सामग्री सो मिथ्याजानि कौनहू वस्तुकी स्पृहा मतिकरही इत्यर्थः॥७॥ दोहा जगतविटपअंकुरयही त्यागनगृहणप्रकार॥ इच्छाधावतबहुतही जहांअज्ञान विचार॥७॥ संस्कृत ॥ श्लोक प्रवृत्तोजायतेरागो निवृत्तौद्वेषएवहि॥ निर्द्वंद्वोबालवद्धीमान्नेवमेवव्यवस्थितः॥८॥ टीका - प्रवृत्ताविति प्रवृत्तौ सराग प्रवृत्तो सत्यामुत्तरोत्तरं विषयेषु रागो जायते विषये द्वेषपूर्वकनिवृत्तौ सत्यामुत्तरोत्तरं विषय द्वेषएवहिजायते अतोधीमान्ज्ञानी बालवत् शुभाशुभानुसंधानरहितः निर्द्वंद्वः रागद्वेषविहीनः सन्नेवमेव रागज प्रवृत्ति द्वेषज निवृ-

त्तिरहित एवास्थितः केवलप्रारब्धवशादेव कदाचित्प्रवर्त्तते कदाचिन्निवर्त्ततेचनतु रागद्वेषवशादित्यर्थः॥८॥ भाषाटीका· – द्वेषरेपुत्र विना सद्गुरुकी कृपा संसार तिरयो न जाई· काहेतें· प्रवृत्तौजायतेरागः जो तौ प्रवृत्तिविषे प्रीतिवंतहे ताकेतौ देहादि स्त्रीपुत्र वित्त भोगनिविषें परम रागहें· वाकौ तौ छूटिवोही नाहीं· अरुजोकोई संसार कों परम दुःखमय जानिकरि समस्त व्यवहार सामग्रीनें विरक्तभयो तौ निवृत्तिद्वेषएवहि· सर्वत्रतें द्वेष लाग्यो करनें· समस्त सामग्री शत्रुरूप जानी तातें द्वेषबुद्धिकरी·परित्यागीनहीं· किंतु दृढकरीगृही· द्वेषबुद्धितें त्रिकाल सदैव हृदयहीमें राषी· तातें याद्वेषीनें वहरागी· बालक भलो धीमान् एवमेव व्यवस्थितः जो बुद्धिमंत विवेकीहे सो समुझिकरि ज्यों ह्वे त्यौं ही बैठिरहे· न कछुत्यागे· नकछु ग्रहे· विधिनिषेध सुख दुःखादिक समस्तव्यवहार देहके जानि· सो देह मिथ्याजानि अरु आत्मा अखंडित एक अविनाशी जानि· निर्द्वंद्वः राग द्वेषादिक जे समस्त भाव तिनितें रहित होई· जौकछु है एनाहीं· समस्त देहादिव्यवहार मिथ्याइहे तौ कौन सोंराग कौनसों द्वेष· कौन भांति· बालवत् ज्यौं बालक कछु विधिनिषेध नसमुझे अरु यों जानेकि याउद्यमतें मोकौं सुख· यातें दुःख परि· बालक अज्ञान· यह परम ज्ञान मय केवल ओर सकल बालक कीसी चेष्टाजाने· इति· तातें समस्त व्यवहार मिथ्याजानि मनकोंएकसत्यस्वरूप विषें प्राप्तकरु· इत्यर्थः॥८॥ दोहा·

रागबधे प्रवृत्तिमें द्वेषनिवृत्तिहिमांहिं॥ बालकज्यौं ह्वे-
स्थितिरहो द्विविध्यासबमिटिजांहिं॥ ८॥

संस्कृत॥ श्लोक· हातुमिच्छति संसारं रागीदुःख-

जिहासया॥ वीतरागोहि निर्दुःखस्तस्मिन्नपि न खिद्यति॥ ९॥ टीका - हातुमिच्छतीति यस्करागी दुःखजिहासया संसारं हातुमिच्छति वीतरागस्तु निर्दुःखः आ रागोहि दुःखरहितत्त्वात् तस्मिन् संसारे सत्यपि न खिद्यति खेदंन प्राप्नोति॥ ९॥ भाषाटीका - रागी दुःख जिहासया संसारकों जिहांतु इच्छसि जो इंद्रियार्थविषैं प्रीतिजुक्त है अरु संसारके जन्म मरणादि दुःखनितें छूटिवेकों वांछति है तो कथं स्यात् यहक्यों होई वीतरागः निर्दुःखः जिनि समस्त व्यवहार मिथ्या जानिकरि मनकी आसक्ति दूरिकरी केवल वह छूट्यौ है जातें तस्मिन्नपि न खिद्यते दुःखहूविषें दुःख न पावे यौं जानि करि समस्त सुख दुःखादिक देहकेहै सो देहई झूठी तातें रागदूर कर्यो है तातें सुखस्वरूप है इति तातें रागदूरि करि सुखरूप हो॥ ९॥ दोहा जोरागी दुःख पायकें छोडत है संसार॥ वीतराग व्है निर्दुखी फेर न दुःख लगार॥ ९॥ संस्कृत॥ श्लोक यस्याभिमानो मोक्षेपि देहेपि मम नानतया॥ न चाज्ञानी न वा योगी केवलं दुःखभागसौ॥ १०॥ टीका - सत्यप्यहं ज्ञानी त्रिकालज्ञानदर्शी मुक्त इत्येवं यस्य मोक्षेप्यभिमानो नासौ ज्ञानी तथा अहं योगाभ्यासी देहस्यैव गुण धर्माधर्मरतः मम देहो बद्धाहार उपवासादिसमर्थ इत्येवं देहेप्यभिमानो नासौ योगी न च ज्ञानी केवलमसौ दुःखभाक् दुःखदहत्वहं ममाभिमाना निवृत्त इत्यर्थः॥ १०॥ भाषाटीका॥ यस्य अभिमानो मोक्षेपि जिनि त्रैलोक्य राज्यादिक समस्तविस्तार दुःखमयजानि छोड्यो वांछा अवांछा सबनि

नें रहित भयो. परि एक मोक्षहूविषैं मन है. कि भाई मैं मुक्तिकौं प्राप्त होऊं तो एक यह अरु येस्य देहेपि ममता. जिनि सर्वस्त्रीपुत्र वित्त विषय भोगादि सकल झूठे जानि आपुकों एई बंधन शत्रु जानि प्रीति दूरि करि. ममत्व छोड्यौ. परि एक देह विषैं ममत्व है तौ इनि दुहू मध्य नवाज्ञानी नवायोगी. न कौन ऊ ज्ञानी कहीयै. न योगी कहीयै. योग अष्टांग तौ नज्ञानी नयोगी है. कहा केवलं दुःखभाक् सो. एक दुःख को भजनी हारो है अबहू आगेहूं. एक दुःखई है. भावकहा. दुःख कहा कि ईश्वर विना भुक्ति मुक्ति आदि दे करि जो कछू सो सब दुःख तातें वे ईश्वर कों क्यौं करि प्राप्त होहि. क्यौं करि सुखी होंहि. झूठे ई सुख इति भावः तातें देहादिक समस्त मिथ्या जानि एक अद्वैत सत्यस्वरूप कों जानु तब मोक्ष कहिये सो कहा. तन्मय है। इत्यर्थः ॥१०॥ दोहा. जाके ममता देह मैं मोक्ष मांहि अभिमान ॥ नहि ज्ञानी योगी नहीं केवल दुःख समान ॥१०॥ संस्कृत. ॥ श्लोक. हरो यद्युपदेष्टा ते हरिः कमलजोपि वा ॥ तथापि न तव स्वास्थ्यं सर्वविस्मरणादृते ॥ ११ ॥ ॥ इति श्रीअष्टावक्रे विशेषोपदेशप्रकरणम् समाप्तम् ॥ १६ ॥ टीका. - सर्वविस्मरणोपदेशमुपसंहारः ॥ १६ ॥ नि ॥ इति श्रीमार्हेश्वर विरचितायामष्टावक्रटीकायां विशेषोपदेशप्रकरणं षोडशकं समाप्तम् ॥ १६ ॥ भाषाटीका. - हरो यदि तेउपदेष्टा स्यात्. जो महादेवऊ आइ करि वारंवार तोकौं उपदेश देहि अरु हरि जो वैकुंठाधिपति. आप ही विष्णुजी आइ करि उपदेश देहि अरु कमलजोपि वा. जौ ब्रह्माजी आइ करि च्यारि हू मुखसों उपदेश देही. तथापि तोहु सर्वविस्मरणात् ऋते.

जौंलगि देहादिक मोक्षादिक द्वैतभाव मिथ्याजानि हृ-
दयतें दूरि नाही कस्यो है॰ तौ लगि तवस्वास्थ्यं न तोकों क
हू स्थिरता शांतता दुःखनिवृत्ति नाहीं॰ तातें एक अद्वैत
आत्मस्वरूपकी भावनाराषि॰ और आपुकों आदिदे॰
जोईकछु सोई समस्तमिथ्याजानि हृदयतें दूरिकरुकिम
न्यत् ॥११॥ दोहा ब्रह्माविष्णुमहेशमिलि निज
मुखबोधकराहिं॥ द्वैतभावछांडेविना तोकौंस्थिरता-
नाहिं॥११॥ ॥ श्रीधरबुद्धीबोधनें बधकेविबुध-
कहाय॥ ज्यौंबंधनमें अगनिहे जलधिससीतलजाय
॥१॥ ॥ इतिश्रीअष्टावक्रभाषाटीका ताको षट्
दशोपदेशसंपूर्णभयो॥ १६॥ ॥ ॥

अथ सप्तदशोपदेश प्रारंभः

श्लोकः अथानःश्लोकविंशत्या तत्त्वज्ञस्यदशोच्यते
॥ विद्यातज्ज्ञप्रकर्षस्यव्यक्तयेगुरुणास्फुटम्॥ १॥
अथान्येषामपि विद्यायां प्रवृत्त्यर्थं तत्वज्ञान फलमाख्या
तुमिच्छया तत्वज्ञदशां गुरुर्निरूपयति ॥ १॥ श्लोक
॥ तेनज्ञानफलंप्राप्तं योगाभ्यासफलंतथा॥
तृप्तः स्वच्छेंद्रियोनित्यमेकाकीरमतेतुयः॥ १॥
टीका॰ - तेनैवज्ञानफलं प्राप्तं यत्रात्मन्येवतृप्तोनभो
गादिना अतएव स्वच्छेंद्रियो विषयानासक्तेंद्रियः सन्
एकाकीविषयसंयोगंविनैवनित्यमात्मन्येवरमते॥ १॥
॥ भाषाटीका॰ - हेपुत्र॰ तेनज्ञानफलंप्राप्तं॰ तापुरुष
ज्ञानकोजोफल सो पायो अरु तथायोगाभ्यासफलंप्रा
प्तं॰ ताहि प्रकार योग अष्टांग ताको फल पायो निश्चै॰ जो॰
यः स्वच्छेंद्रियः जिनि आपनी इंद्रिय वस करीहै समस्त

भोगरूठेजानि वासनासहित छोड़ैहै· याहीतें नित्यंतृप्तः सदैवसुखीहै· दुःखजेहै ते इंद्रियार्थनितें है बहुरि कैसोहै एकाकीरमते· एकब्रह्ममय सकल विस्तारजान्यो· तातेंजहं रहै तहां एकात्मास्वरूपहीविषें रहतहै दूजो कछुहैएनाहीं तातें यौं होहि इति ॥१॥ दोहा· प्राप्तज्ञानफलताहि को औरयोग फलजान॥ तृप्तकरीसबइंद्रियां सुखमयब्रह्मसमान॥१॥ संस्कृत· ॥ श्लोक· नकदाचिज्जगत्यस्मिंस्तत्वज्ञोहंतखिद्यति॥ यतएकेनतेनेदंपूर्णंब्रह्मांडमंडलम् ॥२॥ टीका·- नकदाचिदिति हंतेति हर्षसंबोधने हेशिष्य अस्मिन्जगति कदाचिद· पि तत्वज्ञोनखिद्यति·यत एकेनैव तेनेदं ब्रह्मांडमंडलं पूर्णं· व्याप्तं अतोद्वितीयस्याभावात् नखिद्यतीत्यर्थः ॥२॥

भाषाटीका·- भाईयह बडोआनंदहै·तत्वज्ञः अस्मिन् जगति कदाचित् नखिद्यते· तत्वको वेत्ताजो महापुरुष·सो जो कोटिकल्पानयासंसारविषेंरहै तोहू निमेषमात्रविकारकों अरु खेदकों नप्राप्तहोई काहेतें यतः जाते·एकेन· तेनैव· इदं ब्रह्मांडमंडलं पूर्णं· ता ब्रह्मज्ञानी द्वैतभाव हृदयतें दूरि कस्यो· एक आपुहीको सर्वत्र पूर्ण देष्यो·तातें जो दूजो होइ तोकछुविकार किंवा· कछुसुख दुःखादिक उपजिवेऊ करै· अद्वैतविषें कहाकेउहांसदा आनंदहै·॥ २॥ दोहा· कबहुनज्ञानीजगतमें खेदितहेसुत· नाहिं॥ पूर्णभयेब्रह्मांडनिज ताहीकरतनमाहिं॥२॥ ॥ संस्कृत·॥ नजातुविषयाःकेपिस्वारामंहर्षयंत्यमी ॥ सल्लकीपल्लवप्रीतमिवेभंनिंबपल्लवाः ॥३॥ ॥ टीका· नजात्विति तस्मिन्नात्मन्येवरमते तंस्वारामंजानु

कदाचित अमीविषयाः नहर्षयंति तुच्छत्वात् यथासल्लकी
पल्लवप्रीतमिभंगजंनिंबपल्लवानहर्षयंति कटुत्वादित्यर्थः॥
३॥ भाषाटीका - केऽपिन अमीविषयाः कोऊजेहैं
एविषयनेस्वारामंजातुनहर्षयंति· आत्मानंदकरीपूर्ण
जोपुरुष ताहि कदाचित कोनहू स्थलविषें नआनंदित
करि सके कौनभांति· शल्लकीपल्लवप्रीतं इभं शालके व-
नविषें विलास करतुहै जोहस्ति नाहि निंबपल्लवा इव·
ज्यौं निंबके पानि कदाचित आनंदन उपजाइ सकेंत्यौंइ
त्यादि॥३॥ दोहा· विषयादिकहर्षनकरें स्वारा
मीकोंजोय॥ शालपर्णगज खायकें कहानिंबरुचिहोय॥
३॥ संस्कृत· ॥ श्लोक· यस्य भोगेषु भुक्तेषु
नभवत्यधिवासितः॥ अभुक्तेषुनिराकांक्षी तादृशो
भवदुर्लभः॥४॥ टीका - यस्यिति· यस्यतु भुक्ते·
षुभोगेषु आसक्तिर्नभवत्य भुक्तेष्वाकांक्षी नभवत्यात्मतृ
प्तत्वात् तादृशोभवदुर्लभः संसारसागरे कोटिष्वेकइ·
त्यर्थः॥४॥ भाषाटीका - यः योपुरुष भुंक्तेषुभो
गेषु· जेतेकभोग एहै तिनिविषें अधिवासितः नभवेत्
कबहू मनहूकों नप्राप्ति होइदेई· अरु अभुक्तेषु निराकां
क्षी· जेनाही भोगे तिनिविषें कदाचित मनहूकों नाही·
प्राप्त करो· तादृशो भवदुर्लभः तैसौ पुरुष संसार विषें·
दुर्लभहै· ईश्वरकी कृपातें मिलें· किमन्यत॥४॥ ॥
दोहा· भुक्तभोगमें आस नहि जैसेबहुधाजोय॥ इ
च्छारहित अभुक्तमें ऐसेदुर्लभहोय॥४॥ संस्कृत
॥ श्लोक· बुभुक्षुरिहसंसारे मुमुक्षुरपिदृश्य·
ते॥ भोगमोक्षनिराकांक्षी विरलोहिमहाशयः॥५

टीका· - बुभुक्षुरिति बुभुक्षुर्मुमुक्षुश्च अनेकधादृश्यते भोगमोक्षनिराकांक्षी महति पूर्णे ब्रह्मणि आशयोंतःकरणं यस्यस महाशयोविरलः यततामपिसिद्धानां कश्चिन्मांवेत्ति तत्वतः इतिभगवद्वचनात् ॥५॥ भाषाटीका· - इहसंसारे बुभुक्षुः दृश्यते· यासंसारविषें· ऐसोकोउजोभोगनकी वांछाकरते नाहींदेषियतु· किंतु· नांनि औलोक देषीयतहें· अरु मुमुक्षुरपिदृश्यते· संसारकों परमदुःखमय जानिकरि विरक्त भयोहे· मोक्षकी वांछाविषें तत्पर है· ऐसोऊ यासंसारविषें देषियतुहे· परिभोगमोक्षनिराकांक्षी· जाको भोग अरु मोक्ष इत्यादिकनिकी· वांछानाहीं· एक आत्माई पूर्णजान्यो· दूजो कछु हैएनाहीं तौ वांछा अवांछा सों कहा· तोहि निश्चय करी· ईदृशो महाशयः विरलो ऐसोजो ज्ञानमूर्ति महापुरुष सो कोऊ कबहूं है बहु न कनाहीं ताकरों मिलनो ईश्वर की कृपातें होई· इत्यर्थः॥५॥ दोहा· भोगनवांछअपारहे· मोक्षकवांछअनेक॥ भोग मोक्षनिर्लेपता· ऐसोलाखनएक॥५॥ संस्कृत· श्लोक· धर्मार्थकाममोक्षेषु जीविते मरणे तथा॥ कस्याप्युदारचित्तस्य हेयोपादेयतानहि॥६॥ टीका· - धर्मार्थेति पुरुषार्थचतुष्टयेतथा जीवित मरणयोयथायोग्यं हेयोपादेयतारहितोविरलइत्यर्थः॥६॥ भाषाटीका· - धर्मार्थकाममोक्षेषु जहांलोंधर्महे· अरुजहांलों धर्मनिके फल अर्थ लोकहे· अरुजहांलों अर्थनितें लोकनितें भोगहे· अरु इन तीनिहूतें न्यारो बडोसुख मोक्षहे· इत्यादिकसमस्तनिविषें· अरुतथा जीविते मरणे· ताहीप्रकार अमर-

हूविषें किंवा वारंवार मरिवेविषें कस्यापि उदार चित्तस्य कौऊक जोउदार चित्तमहापुरुष परम अखंडित सुख दायकजे अति उदार ईश्वर तिनिविषेंहैं चित्तजाको ऐसे महापुरुषकों हेयोपादेय नानहीं, नत्याग करिवेकी बुद्धि न अंगिकार करिवेकी बुद्धि जो कछू दूजो करि जानें तौ छोडिवेकी वा गृहिवेकी बुद्धि आनें जो एक आपही अद्वैत स्वरूप तौ कहा त्यागें कहा ग्रहै ऐसो कोउक महापुरुष है तातें एक आत्मास्वरूप जानिकरि वांछा अवांछा त्याग संग्रह सबनितें निवर्त्त हो इत्यर्थः॥६॥ दोहा ॥ च्यारबरगजीवन मरण इनमैं चित्त सरेण॥ ऐसो कोउ उदारहै जाकौं लेण न देण॥६॥ संस्कृत श्लोकः वांछानविश्वविलये नद्वेषस्तस्य चास्थितौ॥ यथा-जीविकयातस्माद्धन्य आस्तेयथासुखम्॥७॥ टीका - वांछेति यस्माज्ज्ञानिनो विश्वविलये प्रपंचोपरमे वांछा नास्ति तस्य प्रपंचस्य स्थितौच द्वेषो नास्ति अधिष्ठानत्वेनैवस्फुरणान् कारणात् धन्योयो विद्वान्प्रारब्धवशात्प्रा प्तया यथा प्राप्तयाजीविकया सुखमनतिक्रम्यैवास्तइत्यर्थः॥७॥ भाषाटीका - विश्वविलयें वांछान संसारकेनिवर्त्त ह्वैवेकी इच्छानाहीं कि भाइ यह संसार अरु काम क्रोधादिक मेरे शत्रुहैं इनकों जो नाश होइ तो भली सोयौंनाहीं वांछतु अरु तस्यास्थितौच द्वेषोनः ना संसारकीजो प्रवृत्ति स्थिरताः ताविषें कछु द्वेष नाहीं यथा जीविकयायथा सुखं आस्ते ज्यौंही ज्यौं आइपरे त्यौंहीत्यौं वर्त्ततसंते परम अक्षय सुखमय वर्त्ततहैं तस्माद्धन्यः तातें सर्वशिरोमणि धन्यः पुरुषसो कहिये इति॥७

॥ दोहा॰ जगविनसेवांछानाही द्वेषनजगप्रगटा-
हि॥ ज्योंत्यों वृत्तीवर्तकरी धन्ययथासुखमांहिं॥ ७॥ ॥
संस्कृत॥ श्लोक॰ कृतार्थो तेनज्ञानेनेत्येवं
गलितधीः कृती॥ पश्यन्शृण्वन्स्पृशन्जिघ्र-
न्नश्नन्नास्तेयथासुखम्॥ ८॥ टीका॰ - कृता-
र्थ इति अहमनेनाद्वैतात्मज्ञानेनकृतार्थः इत्येवंगलित
धीः कृतीक्षणादिकंकुर्वन्नपि सुखमनतिक्रम्यास्ते कृ-
तार्थधियः सत्वात् बहिरिंद्रिय व्यापारे सत्यप्यज्ञानीवि-
रक्तवत्तस्यखेदो नभवतीत्यर्थः॥ ८॥ भाषाटीका
॥ क्षीणसंसार सागरे ईदृशानि लक्षणानिभवंति॰ जो॰
संसार समुद्रके पारही प्राप्त भयोहै॰ परि कछुक पूर्वजन्म
के संस्कारनें देहविषें देषीयतुहै॰ तापुरुषविषें ऐसेलक्ष-
ण होतहैं॰ कैसे॰ शून्यादृष्टिः अनेक नानाप्रकारके व्यव-
हार देषे परि कछु जानेनाहीकि मेंयह देष्यो॰ जातें याकीदृ
ष्टि शून्यजो ब्रह्म ताविषे प्राप्तहै॰ अरु वृथाचेष्टाजोकछू-
और आचरतुहै सोकछुजानत नाहींकियह कछूमेंकर्यो
अरु॰ विकलानींद्रियाणिच॰ नतौयह इंद्रियनिकेवशे॰ अरु
नयाही इंद्रियनकी शुद्धि॰ तातें इंद्रिय कृत व्यवहार कछू-
जानत नाहीं॰ अरु नस्पृहा नविरक्तिर्वा॰ नकौनहू वस्तुकी॰
इच्छा अरु नकौनहू वस्तु॰ परि विरक्ति कछू दूजी वस्तु जान
तुहै नाहीं तातें इच्छा अनिच्छा काहेकी॰ एक सत्य स्वरूप-
विषें लीनहै इति॰ ॥ ८॥ दोहा॰ जोभवसागरतिर
गये नहिंआशामनमांहिं॥ सुनीदृष्टचेष्टावृथा इंद्रीय-
नकी सुधिनाहिं॥ ८॥ संस्कृत॰ क्षीणः संसारसा-
गरोयस्य तस्मिन्क्षीणसंसार सागरे पुरुषे विषयेच्छापिन

विरक्तिश्चनतस्यमनः कार्येंद्रियव्यापारो नभवतिकस्यक इव बालोन्मत्तजडपिशाचादिवदित्याह ॥ ९॥ श्लोक शून्यादृष्टिर्वृथाचेष्टाविकलानींद्रियाणिच ॥ नस्पृहानविरक्तिर्वाक्षीणसंसारसागरे॥ ९॥ टीका- शून्येति तस्यदृष्टिर्मनोव्यापारः शून्यः संकल्पविकल्परहितः चेष्टाकायव्यापारः वृथाफलमनुद्दिश्यैव तस्येंद्रियाणि विकलानिपुरःस्थितानामपिविषयाणामनिर्णायकत्वात्तदुक्तं॥ ९॥ भाषाटीका- तेनज्ञानेनकृतार्थः केवलता ब्रह्मज्ञानहीकेयावत्मात्र कृतार्थ भयोहै. और कछु करणीयनाहीरह्यो. जोकछु साधन करीयतुहै सो ज्ञाननिमित्त जबज्ञानआयो तब कृतार्थः इतिगलितधीः याहीतें शांत भईहै मनबुद्धिइंद्रियजाकी ताहीतें कृती. जोंलगि मनबुद्धि इंद्रिय शांत नाही भई तोलौं जन्म मरणादिकनि विषें प्राप्त रहै. जब इंद्रिय मन बुद्धि स्थिर तबही ब्रह्मस्थिरः तातें जन्मादिकनितें निवर्त भयाहै देहविषें पूर्वसंस्कार तेस्थित देषियतुहै. ते कौनभांति वर्ततुहै. पश्यन् शृण्वन् स्पृशन् जिघ्रन् नश्नंन्नेवयथासुखमास्ते. योनाहीकिभाई कौनहू वस्तुतेंविरक्तहैकि कौनहू वस्तुको त्याग कर्योहै. ज्यौं औरदेषतहै त्यौंही यहउ देषतें देषिये त्यौंही सुननें देषिये. त्यौंही उत्तम वस्त्र स्रगघादि आनि जोकोऊ पहिरावै लगावै तो कछू भावाभावनाही. जो स्रुगंधादिक आनि प्राप्त करीयै तो प्राणलेई. अरु स्वासत्यौंही लेई. अरु त्यौंही भोजनकरै. याप्रकार ज्यौंहीज्यौं आइपरे त्यौंहीत्यौं वर्ततेसंते यथासुखमास्ते. अक्षय वांछित सुखविषें प्राप्तहै. नसुखनिकेपायेतें. याकेसुख नगयेतें दुःखइति ॥ ९॥ दोहा.

हैकृतार्थतेहिज्ञानकर शांतिभईमनबुद्धि॥ पंचविषयवर्त्ते नसते विराशक्तिस्वशुद्धि॥९॥ संस्कृत॥ श्लोकः नजागर्त्तिननिद्राति नोन्मीलतिनमीलति॥ अहोपरदशाकापि वर्त्ततेमुक्तचेतसः॥१०॥ टीका· - नजागर्तीति ज्ञानीनजागर्त्ति जाग्रदवस्था वान्नभवति· अत्रबहिर्विषयाननुसंधानादितिहेतुमाह· नोन्मीलति बाह्यविषयान्नानुसंधत्त इत्यर्थः तथाज्ञानीननिद्रातियतः नमीलतिजडोन्मत्तवत् अन्यथा सर्वान् उत्कृष्टावस्था तुरीयातीतेत्यर्थः॥१०॥ भाषाटीका· - अहो यह बडोआश्चर्य· मुक्तचेतसः कापि परदशावर्त्तते· दूरिभयोहै· समस्तचिंतवनजाके· ऐसो स्थिरचित्तजोमहापुरुष ताकी कछु अपूर्व अद्भुत दशादेषीयतहैकैसी· नजागर्त्ति नतौ जाग्रतकह्योजाई· काहेतें जोकोउ अनेकभांतिकरि निंदा करै किंवा स्तुति करै· किंवा कछुवस्तु आनिधरजाई· किंवा· कोऊकछु लेजाई· इत्यादि और नाना प्रकारके व्यवहार होहिंपरि कछुजानेएनाहीं· तातें अरुननिद्राति· नतौसोवतु· आहि काहेतें जातें जागतेसो प्रत्यक्ष देषिवोई करियतुहै· अरुन उन्मीलति· नतौ आंषि उघारे काहेतें जानें अनेक· व्यवहार देषे परिमानहूंकछु देषतु हृदयमें कहूं कछु भेदे नहीं· अरुनमीलति नदेषे तो कहा आषि मूंदिरहैन· आंषिमूंदिरहै देषेतें देषीयै· तातें वाकी दशा यहई महापुरुषजानैं· इति॥१०॥ दोहा· नहिंजागतसोवतनहीं नयनपिलेनउघूर्व॥ मुक्तचेतमहापुरुषकी देखो दशाअपूर्व॥१०॥ संस्कृत इदमेवविशदयति॥११॥ श्लोकः सर्वत्रदृश्यतेस्वस्थः सर्वत्रविमलाशयः॥

समस्तवासनामुक्तो मुक्तः सर्वत्र राजते ॥ २१ ॥ ॥
टीका - सर्वत्रेति सर्वत्रसुखे दुःखे च स्वस्थचित्तः तथा सर्वत्रैवविमलाशयः समस्तविषयवासनाभ्यो मुक्तः अत एवमुक्तः सर्वत्र सर्वासुदशासु राजते दीप्यते पूर्णात्मदर्शित्वात् ॥ २१ ॥ भाषाटीका - समस्तवासनामुक्तः मुक्त कौन कहीये जिनके मनकी स्थूल सूक्ष्म वासना दूरिकरि वासनानितें छूट्यौ सो छूट्यौ तो ऐसो पुरुष सर्वत्र राजते सकल ब्रह्मादिकनिहूके ऊपर बिराजतु है सर्वत्र दृश्य तें स्वस्थः त्यौंही सुखमें त्यौंही दुःखमें जहांतहां परम सुखी सर्वत्र विमलाशयः पुण्यपापादिकनिविषें शुद्धाशुद्धविषें एकरस परम शुद्ध है अंतःकरण जाको ऐसो पुरुष ब्रह्मरूपजानो इति ॥ २१ ॥ दोहा सुखदुःखमेंसुस्थिरसदा विषयनतिनिर्मलचित्त ॥ मुक्तभई सबवासना राजतमुक्तसुमित्त ॥ २१ ॥ संस्कृत श्लोक पश्यञ्शृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन्गृण्हन्वदन्व्रजन् ॥ ईहितानीहितैर्मुक्तो मुक्त एव महाशयः ॥ २२ ॥ ॥
टीका - पश्यन्निति प्रारब्धवशाद्दर्शनादिकं बहिरिंद्रियव्यापारं कुर्वन्नपि ईहितानीहितैरिच्छाद्वेषैर्मुक्तो महाशयो महत्यात्मन्याश्रयो यस्य स महाशयो मुक्त एव मनोविकारातीतत्वात् ॥ २२ ॥ भाषाटीका - महाशयः महान कहीये ईश्वर तें है आशय अंतःकरण जाको ऐसो सो महापुरुष पश्यन् शृण्वन् देखे सुने स्पृशन् जिघ्रन् वस्त्रादिक पहिरै सुगंधादिक कोऊ आनि प्राप्ति करै तौ आघ्रालेई अश्नन् भोजन करै गृण्हन् गहै छोडै हस्तव्यवहार वदन् व्रजन् घरिआवै बाहेरजाई चरणव्यवहारतो इत्यादि

क समस्त व्यवहार ज्यौं और आचरतहे त्योंही आचर. तेद्वेषियें परिभेदकहा. ईहिताजीहितै मुक्तः और जेको ऊ आचरतहे आशक्तभये यौंजानैंकि भाईयहमें करयो. यहमें करतुहौं. यहमोहि कर्तव्यहे. यहमहापुरुष ज्यौंज्यौं आइपरे त्यौंत्यौं इंद्रियनिकौं प्रवर्तावतेहसंते नजानैंकि यहकछुमेंकरयो. यहकछूमेंकरतुहौं. कियह कछूमोहि कर्तव्यहेकि यहनिषिद्धहे. यातें मोकौं बंधन- हे. नकारोंकि यहउत्तमहे. करोंकी याकेकरतें मोंको दुःख हे. नकरों यातें सुखहे. करों इत्यादिक जेकछु मनके व्यव हार तिनि सबनिकरि रहित मैं मनकौं बिश्राम एकसत्यस्व रूपविषेंहे. ऐसोमहापुरुष मुक्तएव ब्रह्महुविषें जानहु इति ॥१२॥ दोहा. पंचविषयपुनिकर्मनें चालण ग्रहणप्रवेश॥ इनके अकरणकरणमुक्त मुक्तमहाशयदे श॥१२॥ संस्कृत. इदमेवविशदयति.॥१३॥॥

श्लोक नर्निदतिनचस्तौति नहृष्यतिनकुप्यति॥ नददाति नगृह्णाति मुक्तः सर्वत्रनीरसः॥१३॥॥

टीका. - नर्निदतीतिस्पष्टम्॥१३॥ भाषाटीका.

नददाति नकाहूको मनवचन कर्मकरि कछूदेई. नतोगृ हे. नर्निदति अनेकदुःखनिको देनहारो. अनेकपापादि- कनिको करनिहारोहे. परि यह प्रवृत्ति निवृत्तिविषें काहू कीनिंदानकरे. नचस्तौति अनेक सेवा सुखदायकहे अ नेक पुण्यादिकनिको कर्ताहे. परियह काहूकी स्तुतिनक रे. नहृष्यति अनेकप्रकार देवादिक आइस्तुति करें. किं वा लेकरि राज्यासन बैठारि राजादिक समस्त सेवा करहि तौ कदाचित आनंदित नहोई. नकुप्यति. सदैवकोऊदुःख

देतरहैं· किंवा अनेक प्रकारकी निंदा करैं तोहू कदाचित् म
नविषें कोपनऊपजे· नददाति· नकाहू सेवाहूके कर्त्ताकोक
छू कदाचित् मन वचन कर्मकरि देई· नगृण्हाति नकदाचि
त मेनहू करि अनेक विनतीहूतें कछू अंगिकार करैं तो इत्या
दिक भलेऊ भले आचरण क्यों नकरै· सर्वत्रनिरसः ज्यों·
लगि आत्मानंदसों परिचय नाहीं तोंलगि एसुख कछू भले
सेजानैं· जब ब्रह्मानंद स्वरूपविषें प्राप्त भयो तब मोक्ष त्रिभु
वनराज्यादिक सुखतें तृणप्राय ऊ करि न लेषे सुख दुःखा
दिकनिविषें समानतादेषे· तातें यह परमानंद छोडिकरि
इहां क्यों आवे· ऐसोजोपुरुष सोमुक्तः संसारतें छूट्यो ब्र
ह्मसें मिल्यो जाउकिमन्यत् ॥२३॥ दोहा· नहिंनिंदा
स्तुतिताहिके नहींहर्षनहिंकोप॥ देतलेत नहिंकाहुकों
मुक्तसदामनमोष॥ १३॥ संस्कृत· ॥किंच॥ ॥
श्लोक· सानुरागांस्त्रियंदृष्ट्वा मृत्युंवासमुपस्थितं
॥ अविव्हलमनाःस्वस्थो मुक्तएवमहाशयः॥ १४॥
टीका· - सानुरागमिति सानुरागांस्त्रियंदृष्ट्वा मृत्युंवास
मुपस्थितंदृष्ट्वा अविव्हलमनाः कामभयाभ्यांविमुक्तम
नाः महाशयो मुक्तएव॥ १४॥ भाषाटीका· - सानु
रागांस्त्रियंदृष्ट्वा· एकांतिविषें रंभादिकनिहूतें परम सुंदरी
अरु अनेक कामचेष्टा आचरति हैं· अरु प्रिय वचन कहति
हैं· ऐसीजोस्त्री ताहू देषिकरि मृत्युंवासमुपस्थितः किंच
परम भयानक रूपधारें ब्रह्मादिकनिहू दुःसहैं ऐसी मृत्यु
आई प्रत्यक्ष प्राप्तभईहै ताहूको देषिकरि अविव्हलं
मना· कादाचित जाको मनक्षोभही प्राप्तनहोई· विश्राम
तें उठैनाहीं है· कैसोशांतः॥ त्रिगुणमयविस्तारतें छूटिक

रि ब्रह्मसमुद्रविषें मग्नभयो· तातें कदाचित कौनहू प्रकार
निकसि सकै नाहीं· ऐसो महाशय महापुरुष सो· मुक्त एव·
संसारतें छूट्यो ईश्वरविषें प्राप्त भयो इत्ति·॥१४॥ ॥
दोहा· अतिस्वरूपनिय देखिकें मानतमृत्कसमान·
॥निर्भयनिर्मलअचलमन स्वस्थशांतसुखध्यान॥१४
॥ संस्कृत· ॥ श्लोक· सुखेदुःखेनरेनार्यां
संपत्सुचविपत्सुच॥ विशेषोनैवधीरस्यसर्वत्रस
मदर्शिनः॥१५॥ टीका· – किंचसुखइतिस्पष्टम्॥
१५॥ भाषाटीका· – सुखे सुखविषें· दुःखे दुखवि·
षें· नरेपुरुषविषें· नार्यांस्त्रीविषें· संपत्सुच· नानाप्रकार
कीजे संपत्ति तिनिविषें· विपत्सुच· अनेक नानाप्रकारकी
जेविपत्ति तिनिविषें· औरजेनानाप्रकारकी सामग्री ति
निविषें धीरस्यविशेषोनैव· महापुरुषजो आत्मज्ञानी ता
केकछू भेदाभेद नाहीं काहेतें· सर्वत्रसमदर्शिनः॥जहां
तहां समजो आत्मको देषतुहै त्रिगुणमय· घटादिकनिकी
दृष्टि झूठीजानि दूरिकरि· आत्माकी दृष्टि साचीजानि स्थि
रकीर तातें आत्मविषें भेदहै एनाहीं· देषैवे कहांते इति·॥
१५॥ दोहा· सुखदुःखनरनारीविषें संपतिविप·
तिविभाग॥ इनमें भेदनधीरकौं समदर्शीसबजाग॥१५
॥ संस्कृत· श्लोक· नहिंसानैवकारुण्यंनो
द्धत्यंनचदीनता॥ आश्चर्यंनैवचक्षोभोक्षीणसंस
रणेऽनरे॥१६॥ टीका· – नहिंसेति क्षीणसंसर
णेअनरे नराभिमानरहिते· विदुषिहिंसानाम परद्रोह·
इत्यादयोमनोविकारानभवंतीत्यर्थः॥१६॥ भाषा
टीका· – क्षीणसंसरणेनरे जाकोसंसारिवोनिवर्तभयो·

हैं· आगे देहपाइवेतें रह्यौ हैं· पूर्वसंस्कारतें देहविषैं-स्थितहै· ताबिषै·ऐसे लक्षण होहिकैसे· नहिंसा दुःखनिहूंके देनहारविषें और समस्त ब्रह्मादि स्थावरपर्यंतजीवनिविषें नतौद्रोहबुद्धि अरु नैवकारुण्यं·नकाहूविषेंदयाभाव नौन्द्धत्यं·नतौ प्रभुता आधिकार· अरु नदीनतान गरीविनाश्चर्यं·संसार समस्त ईश्वर सुखमयकों घरहीमें छोडिकरि महादुःख कर्मबंधननिसें आपही आप जाइ बंधतुहै· ताकौं देषिकरि कछू आश्चर्य नाहीं मानतु अरुनैवचक्षोभः अनेक निंदा स्तुति सुखदुःखादिकविकारनितें कदाचित क्षोभइ प्राप्त होई नाहीं तौ जौकदाचित कहैंकि औरनौ समस्त संसारयनके लक्षण यामेंनाहीं यह· जुक्त इहैपरिदया दीनता संसारके आचरण देषि आश्चर्य इत्यादिक लक्षण जाविषें होहि·सोई महापुरुष कहियेतातें यह कह्यौ·तहांसुनदेषु· इत्यादिक लक्षण जेहैं ते समस्त ज्ञानको साधनहै· सत्वगुणकी संपत्तिहै· तातें यहविज्ञानदशाकौं प्राप्त भयो एक आत्मा अपनोईविस्तार देष्यौ·तातें आपविषें कहा·दयाकहौ· औरजे कछुकहिये·तातें एक· आत्मस्वरूप विषें सदामग्नहै· इत्यादि·॥१६॥ दोहा

हिंसाकरुणाप्रबलता क्षोभदीनतानाहिं॥ जिनकीजग फांसीमिटी तिनकौं इचरजुकाहिं॥१६॥ संस्कृत·

॥ श्लोकः नमुक्तोविषयद्वेष्टानवाविषयलोलुपः॥ असंसक्तमनानित्यं प्राप्तंप्राप्तमुपाश्नुते॥ १७॥ टीका· - नमुक्तइति जीवन्मुक्तः विषयद्वेष्टापिनवानविषय लोलुपः किंतर्ह्यसंसक्तमनाःसन् प्रारब्धवशात् प्राप्तंप्राप्तमुपाश्नुतेभुंक्त इत्यर्थः॥१७॥ भा

षाटीका - जोजीवन्मुक्तहै ताके लक्षण नविषय द्वेष्टा इंद्रियनिके अर्थ तिनिकों आपने शत्रु जानिकरि कदाचित द्वेषबुद्धि नआने अरु नवाविषयलोलुपः नतो इंद्रियार्थनिसों प्रीतिवंत आहि नित्यं असंसक्तमनाः निरंतरसुखदुःख रागद्वेष पुण्यपापादिकनितें रहितहै अरु प्राप्ताप्राप्तउपाप्नुते ज्योंहीज्यों आई प्राप्तहोई त्योंही त्यों वर्ततसंते नकहूं अनुरक्ति नकहूं द्विरुक्ति द्वैतभाव दूरिकरि एक आत्माविषें स्थिरहै ऐसोजो पुरुष सो मुक्त देहविषें देषीयतु है परि ब्रह्मकोंमिलि रह्योहै इति ॥ १७॥ दोहा मुक्तनद्वेषीविषयको पुनिलोलुपहैनाहिं ।। मनअशक्तनिजभोगमें यथाप्राप्तसुखमांहि॥१७॥ संस्कृत श्लोक समाधानासमाधानहिताहितविकल्पना ॥ शून्यचित्तोनजानाति कैवल्यमिवसंस्थितः॥१८ ॥ टीका - समाधानेति बहिःशून्यचित्तो ज्ञानी समाधानादिविविधाः कल्पनाः नजानात्युत्प्रेक्षते विदेहकैवल्यंप्राप्तइत्यर्थः ॥ १८॥ भाषाटीका - शून्यदृष्टिः जिनि यह समस्तविस्तार मिथ्याजानि मनषेंचिकरि एक सत्यब्रह्मविषें राष्यौहै सोपुरुष समाधानासमाधानहिताहितविकल्पना जावस्तुतें मनको समाधानकरि मानियतुहै अरुजातें असमाधानमानियतुहै जावस्तुतें हितकहीयतुहै जातें अहितकहीयतुहै इत्यादिकजे भेदाभेद संकल्पविकल्प तिनहै नजानाति एकोऊ कछु समुझैनाहीं कैवल्यंइवसंस्थितः मानों देहविषें हैएनाही ता प्रकार अनेक व्यवहार होहि परि कुछू नजाने तौऐसो पुरुष मुक्तहीजानहू इति॥१८॥ दोहा समाधानअसमा

धान हितअनहितसुखसार॥ ज्ञानीइनिकोंछांडिकें इक् कैवल्यविचार॥१८॥ संस्कृत· ॥ श्लोक· निर्म मोनिरहंकारोनकिंचिदितिनिश्चितः॥ अंतर्गलित· सर्वाशः कुर्वन्नपिकरोतिन॥१९॥ टीका· - निर्म· मइति अहंममाभिमानशून्यस्तथाधिष्ठान व्यतिरिक्तं· किंचिन्नसदितिनिश्चयवान् अतएव अंतर्गलित सर्वाशः अतएवकुर्वन्नपि नकरोति कर्तृत्वाभिमान रहितत्वादित्य र्थः॥ १९॥ भाषाटीका· - निर्ममः जाकेकौनहूवा तपर यहबुद्धिनाहीं कियहकछूमेरोहै· अरुनिरहंकारः यहबुद्धिनाहींकि यहमें यहओर काहेतें नकिंचित् इति· निश्चयी· भाईयहजोकछु विस्तार इंद्रिय मनोगोचर मो हि आदिदै करिहै सोजानियतुहै· सोसमस्तकछू हैयेना हीं·यहनिश्चै जाके हृदयविषैं स्थिरभयोहै· तातें याहीतें अंतर्गलित सर्वाशः जो कौनऊ वस्तुहैए नाहीं तौ आशा· कौन बातकीकरै तातें समस्त आशातें रहित भयोहै· ऐ सोपुरुष कुर्वन्नपिनलिप्यते· जोकदाचित अनेककर्म अ कर्मादिकऊकरै तौहूलिप्तनहोईइति ॥१९॥ दोहा ॥ निरहंकारीनिर्ममी· ऐसोनिश्चयजोय॥ आशातृ- ष्णामेटिकें करैनलेपनहोय॥१९॥ संस्कृत· ॥ श्लोकः मनःप्रकाशसंमोहस्वप्नजाड्यविवर्जितः ॥ दशांकामपिसंप्राप्तोभवेद्गलितमानसः॥ २०॥ ॥ ॥ ॥ इतितत्वज्ञस्वरूपविंशतिकम्॥२०॥ ॥ टीका· - मनइति· गलितसविशेषवृत्तिहीनं मानसं य स्यसज्ञानी कामपि अनिर्वाच्यां दशां संप्राप्तो भवेत्तद्देव द र्शयति· मनइतिमनः प्रकाशविवर्जितोतः सविशेष प्रका·

शाभावात्. तथासंमोहविवर्जितः प्रसन्नवर्णचित्तत्वात्. अतएवस्वप्नविवर्जितः जडीनसुषुप्त्यादिविवर्जित इत्यर्थः ॥२०॥ ॥ इतिश्रीमद्विश्वेश्वरविरचितायामष्टावक्रटीकायां तत्वस्वरूपविंशतिकं प्रकरणंसप्तदशंसमाप्तम्॥ ॥१७॥ भाषाटीका - कांअपिदशासंप्राप्तः भवेत्. कौनऊएक परम अपूर्वदशाको पाइकरि सदासुखमय महापुरुष वर्ततुहै. कैसोहै. मनः प्रकाश संमोहजाड्यस्वप्न विवर्जितः मनके प्रकारजे नानाविधिके संकल्पविकल्पादिक. वांछा अवांछातिनि विषें जो आसक्ति अरु उत्साह पराक्रम करि हीनता दीनता. जागिवो सोइवो. सुषुप्ति इत्यादिक समस्त व्यवहारनिकरि रहितहै. बहुरि कैसोहै. गलितमानसः जोमनसहित होईतो कछु व्यवहार जाने. याकोमन जहांतें उपज्यो हुतो. तहांई आपनोस्वरूप पाइकरि लीनभयो. तातें एसो भयो इत्यादि ॥२०॥ दोहा. मनप्रकाशसंमोहतैं जाड्यस्वप्नतेंदूर॥ दशाअपूरबपाइकै होतगलितमनपूर॥ २०॥ ॥ श्रीधरसुंदरतारस जाकेहियेसुज्ञान॥ जैसीअग्निधूमविन सोभितनतेजनिधान॥ १॥ ॥ ॥ इतिश्रीअष्टावक्रभाषाटीकातांकोसप्तदशोपदेश संपूर्णभयो॥ १७॥ ॥ ॥ ॥

अथ अष्टादशोपदेश प्रारंभः

श्लोक. - तत्वाभिज्ञेफलीभूतसामस्त्येवप्रधानता॥ व्याख्यातुवर्ण्यतेशांतिः शतश्लोकैः पुनः स्फुटम्॥ १॥ संस्कृत. तत्रतावच्छांतेः प्रधानतेति ख्यापयितुं फलीभूतांशांतिं वर्णयितुकामशांतिशालिनं नमस्करोति॥ १॥ श्लोक. यस्यबोधोदयेतावत्स्वप्नव-

द्भवतिभ्रमः ॥ तस्मैस्रुखैकरूपायनमःशांतायतेज
से॥१॥ टीका - यस्येति बोधोदये सति तावत्त
त्क्षणमेव प्रपंचभ्रमः स्वप्नवत्तुच्छोयस्यज्ञातोभवतित
स्मै शाताय निवृत्तिसंकल्पविकल्पाय अतएवस्रुखैकरू
पाय दुःखातीताय स्रुखस्वभावाय अतएव तेजसेस्वप्रका
शायविदुषेनमः॥१॥ भाषाटीका नस्मैनमःता
प्रभुकों निरंतर नमस्कार कैसोप्रभु तेजसे परम प्रकाशस्व
रूपहै कैसोप्रकाशः शांताय शीतल तप्त जडतादिकनि
करि रहित परमशीतल स्रुखस्वरूपहै बहुरि कैसोहै स्रु
खैकरूपाय केवल स्रुख स्वरूप एकही है और कछूनाहीं
अरु अक्षय दिन दिन अतिउत्तम बहुरिकैसोहै यस्य बो
धोदये जाप्रभुको ज्ञान हृदयविषें आवत संते भ्रमः ताव
त्स्वप्नवद्भवति यहजो समस्तविस्तार सो योंजान्यो परतुहै
ज्यों स्वप्नविषें नाना प्रकारके स्रुखदुःख व्यवहार करते जा
गिपरिये अरु समस्तमिथ्याजानिये ममता अहंकार सम
स्तनिवर्त होहिंत्यों तातें ऐसे प्रभुकों नमस्कार इत्यादि ॥१॥
दोहा बोधउदयके होनही भ्रमसब स्वप्नसमान ॥न
मस्कारताप्रभुप्रती स्रुखइकतेजप्रधान ॥१॥ सं
स्कृत ननुधनिनोपिस्रुखिनो दृश्यंते कथंशांतसंकल्प
एव स्रुखैकरूप इत्याशंक्याह ॥२॥ श्लोक अर्जयि
त्वाखिलानर्थान्भोगानाप्नोति पुष्कलान् ॥ नहि
सर्वपरित्यागमंतरेणस्रुखीभवेत् ॥२॥ टीका
अर्जयित्वेति अखिलानर्थान् धनधान्यकांतादीनर्ज
यित्वा पुष्कलान् बहुविधान्भोगानेवाप्नोति नतुस्रुखैक
रूपस्तत्क्षणे दुःखभागित्वात् सर्वपरित्यागमंतरेण सर्वसं

कल्पविकल्पत्यागविना सुखी सुखैकरूपोनहि भवेन्नैव· स्यात्· संकल्पविकल्पयोस्तत्यागस्तुच्छ तज्ज्ञानमेव त्यागमात्रस्ययथावंध्यापुत्रेतुतुच्छत्वज्ञानमेवत्याग असतः त्यागासंभवात् ॥२॥ भाषाटीका· – अखिलान्धर्मान् अर्जयित्वा· जो कदाचित् जहांलों धर्महै तहांलों समस्तकरैतो अखिलान् अर्थान् प्राप्नोति· तिनिकोफलसंपत्ति· पावैतौ· पुष्कलान्भोगानाप्नोति· तिनि बहुत भोगनिकों· प्राप्त होइ· तदनंतर भोगऊक्षीण होंही· तब त्यौंको त्यौंही ब्रह्माकेलोकतें शेषदेवलोकपर्यंत पुण्यपापादिकनिकरि· भ्रमते रहैं· एकपग मार्ग कटैनाहीं· तातें सर्व परित्यागं· अंतरेण धर्म अर्थ· काम मोक्ष इत्यादिक समस्त वस्तुकोजोपरित्याग ताहीकीयेबिनुहि निश्चयकरि सुखीनभवेत्· कोऊकदाचित् सुखकों नपावै तातें समस्तकोत्यागकरि सुखरूपहो· इति ॥२॥ दोहा· सबअर्थनकूंअर्जिकै प्रापति भोगअनेक॥ मनदुविध्यामेटेंबिना नहिसुख रूपविवेक ॥२॥ संस्कृत इदमेवरूपकालंकारेण विशदयति ॥३॥ श्लोक· कर्तव्यदुःखमार्तंडज्वालादग्धांतरात्मनः॥ कुतः प्रशमपीयूषधारासारमृते सुखम् ॥३॥ टीका· – कर्तव्येति कर्तव्यानि यानिकर्माणि तज्जनितानि दुःखान्येव मार्तंडज्वाला सूर्यतापः तेनदग्धांतरात्मा मनोयस्यतस्य संकल्पप्रशमामृतधारालक्षणसारंविना सुखं कुतः स्यात् ॥३॥ भाषाटीका·– कर्तव्यदुःखमार्तंडज्वालादग्धांतरात्मनः॥ नानाप्रकारके· जे कर्म तिनितें उपजते हैंजे नाना प्रकारकेदुःसह दुःख तेई भयोजो ग्रीष्मऋतुके सूर्यकी ज्वाला तिनिकरि दग्धकर्यो

हे हृदय जाको नाप्राणीकैं प्रशमपीयूषधारा सारं त्वते रू खंकुतः समस्त कर्तव्यतें मनवचन कर्मकरि निवृत्तहोनोसो ईभयो जोअमृतधाराकी अखंडवर्षा नाहिविनु कदाचित एक निमिषमात्र रूख कहूं ताही। तातें मनवचन कर्म करि कदाचित कौनहू कर्मविषें मति प्राप्त होहि इति ॥३॥ ॥
दोहा सबअर्थनकूं अर्जिके प्रापनि भोगअनेक॥ मनदुबिध्यामेटेविना नहिरूखरूपविवेक॥३॥ संस्कृत संकल्पप्रशमस्यामृतत्वं संसाररूपविषनिवर्तकत्वादित्याशयेनाह ॥४॥ श्लोक भवोयंभावनामात्रोनकिंचित्परमार्थतः॥ नास्त्यभावस्वभावानांभावाभावविभाविनाम्॥४॥ टीका - भवोयमिति अयंभवः भावनामात्रः संकल्पमात्रप्रभवः परमार्थतः आत्मव्यतिरिक्तं किंचिन्नास्ति परमार्थतस्त्वात्मैव नन्वभावरूपोपि प्रपंचः कालादिवशाद्भावस्वभावइत्याशंक्याह नास्तीति भावाभावेषु विभाविनां स्थितानां स्वभावानामभावोनास्ति नत्युष्णस्वभावोवन्हिः कदाचिदपिशीतलभावोदृष्टः तथाच मनोराज्यवद्भावनामात्रसिद्धः सन्स्वभावः प्रपंचोभावनानिवृत्तो निवर्तते इति संकल्पप्रशमनं संसारविषतापापगमादात्मामृतप्राप्तिहेत्वमृतमितिभावः ॥४॥ भाषाटीका - अयंभवः यहजो संसार सोभावनामात्रः मनकेजे संकल्पविकल्प भेदाभेद नानाप्रकारके चिंतवन तिनहीतें है। परमार्थतः नकिंचित् विवेकतें साचो कछुहैएनाहीं। मिथ्याहै। परि स्वभावानां अभावनास्ति। मनके संकल्पविकल्पनिको कछु पारनाहीं। कदाचित तृप्तिमानि निवर्ति होहिनाहीं। अरुहैकैसे भावाभाव

विभावानां जन्ममरण सुख दुःखादि कनि के कारणहारे हैं इनके संगपरि कबहू छूटेनाहीं इत्यर्थः॥४॥ दोहा वहिभव भावनमात्रहै आत्मज्ञाननैंनाहि॥ जन्ममरणसु खदुःखसुभाव तिन्हैंअभावहिकाहि॥४॥ संस्कृत: ननुसंकल्पोपरममात्रेण कथमात्मामृत प्राप्तिरित्याशंक्यतस्यनित्यप्राप्तत्वमाह॥५॥ श्लोकः नदूरं नचसंकोचाल्लब्धमेवात्मनः पदम्॥ निर्विकल्पंनिरायासं निर्विकारंनिरंजनम्॥५॥ टीका - नदूरमिति आत्मनःपदस्वरूपंदूरं नास्ति नापिसंकोचाद्वर्तते परिच्छिन्नंनास्तिपरिपूर्णत्वात् अतएवात्मनःपदंनित्यं लब्धं प्राप्तमेवास्तिसंकल्पवशात्पुनरप्राप्तमिवाविद्वांसो मन्यंते कंठगतचामीकरवत् कीदृशंपदं निर्विकल्पं विकल्पातीतं विकल्पाभावगम्यंवा तथानिरायासं आयासातीतं तदभावगम्यंवा निर्विकारं विकारातीतं निरंजनं उपाधिमलशून्यं॥५॥ भाषाटीका - आत्मनःपदंलब्धमें आत्मास्वरूपकों स्थलपायोपरिदूरंन यौंनाहीजोकहू दूरिपायो होइ अरु नचसंकोचनात् नतौनिकटहीपायोंतौं पायो क्यों करि अरु कैसो स्वरूप निर्विकल्प भेदाभेद समस्त द्वंद्वनिकरि रहितहै तातें जब भेदाभेद समस्त द्वंद्वनितें निवर्तभये तब पायो बहुरि कैसोहै सोस्वरूप निर्विकार पुण्यपाप सुख दुःख काम क्रोध लोभ मोह मद मत्सर इत्यादिकजे समस्त विकारि तिनिकरि रहितहै तातें जब इनिकरि रहितभयो तबपायो बहुरिकैसोहै निरंजन जहांलों कछु मनबुद्धि इंद्रिय गोचर सामग्रीहै ताकरि रहितहै तातें जब समस्त इंद्रिय मनोगोचर सामग्रीमि

थ्याजानि करी हृदयतें दूरिकरि त्रिगुणतें रहित भये तबपा
यो॰ तातें यौंहीं होंहि इत्यर्थः॥५॥ दोहा॰ नहिंदूरनसं
कोचतें पदआतमकोलाभ॥ निरायासनिर्विकल्पना वो
हिनिरंजननाभ॥५॥ संस्कृत॰ कथंतर्हितत्वज्ञा
नेनतत्प्राप्तिव्यवहारः शास्त्रकारणमित्याशंक्य भ्रांतिनाश
मात्रादेवेत्याह॥६॥ श्लोक॰ व्यामोहमात्रविरतौ
स्वरूपादानमात्रतः॥ वीतशोकाविराजंते निरावरण
दृष्टयः॥६॥ टीका- व्यामोहेति ज्ञानेननिरावर
णदृष्टयः अविद्यानावृतदृष्टयः व्यामोहमात्रस्यप्रपंच-
भ्रांतिमात्रस्य विरतौ सत्यांस्वरूपादानमात्रतः आत्मवि
श्रांति मात्र तोचीतशोकाविराजंते सर्वदास्वभावेनैव पूर्णा
द्वितीयतयाप्रकाशंत इत्यर्थः॥६॥ भाषाटीका॰-
व्यामोहमात्रविरतौ॰ केवल जब आपनेही स्वरूपकों स-
मुझत संते औरनकछू ग्रह्यो नकछू छोड्यो॰ नकछू क-
र्यो नकरायो॰ नकहूं पायो॰ नकहूं आयो नगयो एतेनहीं
मात्र वीतशोकाविराजंते॰ समस्तशोक संतापादिकनितें॰
निवर्त्त व्हैकरि महापुरुष शोभतहैं॰ अक्षय सुख स्वरू
प भयोहै॰ बहुरि कैसेहैं निरावरणदृष्टयः जिनकी दृष्टि
आवरण नाही॰ तीनहू लोकनिकों देषतहैंज्यों आपने आं
खनिकों आगेकी वस्तु देषीये त्योंतो आंखितोउनके हू
य अरु इतनेई बडे परितीन्यो लोक क्योंकरि देषे॰ तोयो
नाहीदेष॰ अब जेकोउ सिद्ध्यादिकनिके बलतें देषतहैं ते
सिद्धि और झूठी॰ अरुजोकछू देषे सोऊ सकल झूठो॰ अ
रु देषनवाले जे सिद्ध तेऊ झूठे॰ तातें एसाधुयों देषै॰ ज्यों आ
पने निकट एक अद्वैत ब्रह्मविषे और कछू नदेषै॰ त्यौंही

तीनिहू लोकविषैं एककेवल ब्रह्म देषै. नेत्रनिकी मायाकी दृष्टि दूरिकरि ज्ञानदृष्टि देषै इति ॥६॥ दोहा. समुऊतसंतैस्वरूपकों नहिंकछुलेएनदेए॥ वीतशोकशोभितसदा निरावरणदृष्टेए ॥६॥ संस्कृत. आत्मज्ञानरहस्यमाह. समस्तमितिस्पष्टार्थमिदम्॥ ७॥ ॥
श्लोक. समस्तं कल्पनामात्रमात्मामुक्तः सनातनः॥ इतिविज्ञायधीरोहि किमभ्यसति बालवत्॥ ७॥ टीका. - समस्तं कल्पनामात्रमिति॥ ७॥ ॥
भाषाटीका. - समस्तंकल्पनामात्रं. यहजो कछु नानाप्रकारको संसार कहीयतुहै सोसकल आपनेही मनकों भेदतें है. परिहैंकछुनाहीं. एक केवल दृष्टिहीको फेरहै. आत्मामुक्तः पुण्यपाप सुखदुःख बंधमोक्ष इत्यादिक समस्त मनकरि मानिलीयेहैं कछु हैयेनाहीं. आत्मा एकई अद्वैतहैं बांधनिहारो औरदूजोकौन अरु सनातनः समस्तको कारणहै. ज्यौं घटगृहादिकनिको कारण भूमि त्यौं तोधीरः परमविवेकीजो पुरुषसो. इतिविज्ञाय यों. जानिकरि हिनिश्चयकरि किं अभ्यस्यति. कौनवस्तुको. त्यागनकरै. सो कोनवस्तु. जाकी स्पृहाकरैतौ. जो सबको. त्यागकरैतौ. यहतो ज्ञान इंद्रिय. कर्मेंद्रियनिकरि बहुत कर्मकरितें देषीये. तौ यहसुन. बालवत्. ज्यौं बालक सुवर्णमोती आदिक अरु मृत्तिका अग्नि पाषाणादिक. पुण्यपापादिक मानापमानादिक. मित्रामित्र कृत्याकृत्य सत्यासत्य. संकल्प विकल्पादिक कछू समुकैनाहीं. ज्यौं आइपरैजानै. नाहींकि यहमैं करयौकि यह करणीयहै. त्यौंही यहइति ॥ ७॥ दोहा. मुक्तरूपआतमसदा अ

हसबकल्पनमात्र ॥ यौंसमुझतसोइधीरहै दानत्यागन-हियात्र ॥ ७॥ संस्कृतः ज्ञानस्यनिदानभूतंतत्त्वं पदार्थैक्यज्ञानमाह ॥ ८॥ श्लोकः आत्माब्रह्मे तिनिश्चित्यभावाभावौचकल्पितौ ॥ निष्कामःकिं विजानाति किंब्रूतेचकरोतिकिम् ॥ ८॥ टीका- आत्मेति आत्मात्वंत्वंपदार्थः ब्रह्मतत्पदार्थाभिन्नइति निश्चित्य धिष्ठानसाक्षात्काराच्चभावाभावौ घटादि तदभावौ कल्पिताविति निश्चित्य तथाच सर्वस्य तुच्छत्वानुसंधाना त्कामहेत्वविद्याविलयाच्च निःकामःसन्विशिष्टतया जानाति किंब्रूते किंच कार्यंकरोति कर्तृत्वाभिमान रहितत्वात् ज्ञातापिनवक्तापि नक्रियाकर्तानेत्यर्थः ॥ ८॥ भाषाटीका- आत्माब्रह्म भाईयहजो प्रकृति विषें स्थित पुरुष सोतो ब्रह्मस्वरूपईहै दूजोनाहीं यहएक अद्वैत अजन्मा अविनाशी अखंडित अनिच्छ इत्यादि भावाभावौ चकल्पितौ जन्ममरण सुख दुःखादिक केवल आपनेही मनके भ्रमकरि स्थापि लीयेहैं परिहैकछु नाहीं इति संकल्प मनवचन कर्मकरि जाकै यहज्ञानस्थिर भयो याहीतें निःकामः वांछाअंगिकार कौन वस्तुकौ करै ऐसोपुरुषकिं विजानाति जो नानाप्रकारके संसार व्यवहारनिहूमें रहैतो हूं कहा कछुजानै अरु किंब्रूते जो आपहूते अनेक भांतिके वचनव्हैहैं तोहू कहायो जानैंकिमें काहूसौं कह्यौं कि कहतुहौं अरु करोतिकिं जो अनेक कर्महुकरै तोहू कहा जानै किमें कछु कर्यौकि करतुहौं वाकैतो हैतभावई दूरि भयो कर्मानिकिं करनिहार इंद्रिय देहादिकतेई समस्त नाहींकरिजानै तौ और नानात्व कर्तृत्व कहा जानै तातें यह

अकर्त्ता ब्रह्मरूपहें इति ॥ ८॥   दोहा·   एकहिआ
तमब्रह्महै कल्पितभावअभाव॥ क्हैनिकामकहाजानिहै
बोलणकरणउपाव॥ ८॥   संस्कृत·   सर्वमात्मेति
ज्ञानंसर्वकल्पनानिवर्तकमित्याह॥ ९॥   श्लोक·   अ
यंसोहमयंनाहमितिक्षीणाविकल्पना॥ सर्वमात्मे
तिनिश्चित्यतूष्णींभूतस्ययोगिनः॥ ९॥   टीका·
अयमिति सर्वमात्मेतिनिश्चित्य अनुभूयतूष्णींभूतस्य-
निवृत्तव्यापारस्यपुंसइतिविविधाः कल्पनाः क्षीणाभवंति
इतीतिकिं अहंसोहमिति· यएवाहं पूर्वदिने व्रतमकरवंसोहं
यजामिश्च यं देवदत्तो गच्छतिनाहं गच्छामीत्यादयः कल्पनाः
क्षीणाभवंतीत्यर्थः ॥ ९॥   भाषाटीका· - सर्वआत्मा
इतिनिश्चित्यतूष्णींभूतस्ययोगिनः॥· भाईयहजो कछुदिखा
रहे सोतो एकई अद्वैत आत्माहै· सो सोईयह और कछु-
दूजो नाहीं· यहनिश्चय जानिकरि स्थिरचित्त भयोहै· ऐसेपु
रुषके अयंसोहं अयंनाहं इतिविकल्पनाक्षीण· यहसो
में यह मैं नाहीं· यह और इत्यादिकजे अज्ञानकृत झूठेभे
द तेकहांतें रहै· समस्त कर्मउ करै· ताऊ कछु लियै नाहीं· ता-
तें एकआत्मा जानि भेदभ्रम दूरिकरु इति ॥ ९॥   दोहा
॥ यहिमेंहूं मैंनाहियहि   यौंविकल्पनाक्षीण॥ सबआ-
तममयजानिके   गुपचुपह्नैातप्रवीण॥ ९॥   संस्कृत·
निवृत्तसंकल्पस्यस्वरूपमाह॥ द्वाभ्यां॥ १०॥   श्लोक·
नविक्षेपोनचैकाग्र्यंनातिबोधोनमूढता॥ नसुखं
नचवादुःखमुपशांतस्ययोगिनः॥ १०॥ टीका·-
नविक्षेपइति उपशांतविकल्पस्ययोगिनः विक्षेपोव्यग्रतान
एकाग्र्यादिकमपिनेत्यर्थः ॥ १०॥   भाषाटीका·- उप-

शांतस्य योगिनः समीपहीविषे अनायासही आपनोस्व रूप पाइकरिअ द्वैत द्वैतकरिजो देहैविषें शांतस्वरूपभयो है ता महापुरुषके नविक्षेपः नतोचंचलचित्तता अरु नचए काग्र्यं नस्थिरश्चित्तता नास्तिबोधः नतो याके ज्ञान अरु अमूढता न अज्ञान नसुख नवाकेसुखं नचवा दुःखं नवाकेदुःखतो जो कदाचित कहेकि आत्मस्वरूपकों पायतें चंचलता मूर्खता दुःख इत्यादिकतो जान्यो दूरि भये यह युक्त है स्थिरचित्तता ज्ञानसुख इत्यादिकतो सर्वथा चहिये जाब्रह्मके वल श्रवण कीर्तन स्मरणादिकनितें इत्यादिक होतहै ताके पाएतें क्यों न होहि तो सुन देष इत्यादिक समस्त ब्रह्मके मार्गके हैं साधनविषें हूंते जब यह ज्ञानध्यानादिकनिक रिब्रह्मकों प्राप्तभयो तब एक सुख स्वरूप ज्ञानरूपध्यान स्वरूप अक्षय स्थिरस्वरूपई भयो द्वैतभावगयो इत्यादि ॥१०॥ दोहा जाकोमनउपशांतभयो स्थिर चंचलदोउनाहिं॥ नहींबोधनहिमूढता नहिसुखनहिंदुःखमांहि॥१०॥ संस्कृत श्लोक स्वाराज्ये भैक्ष्य वृत्तौच लाभालाभेजनेवने॥ निर्विकल्पस्वभावस्यनविशेषोस्तियोगिनः॥११॥ टीका — स्वाराज्यइति स्वाराज्येस्वर्गराज्ये भैक्ष्यवृत्तौच प्रारब्ध वस्तुलाभे तदभावे जनेजनसमूहे विजने वनेच विशेषो योगिनो नास्ति कीदृशस्यनिर्विकल्पस्य विकल्परहितस्वभावस्येत्यर्थः ॥११॥ भाषाटीका — स्वाराज्ये त्रि भुवनकोजो चक्रवर्तीत्व भैक्ष्यवृत्तौवा भिक्षाविषें लोभ कर्म वसतें देहकों सुख धनादिकनिकी प्राप्तविषें अलाभे बहुरि सुख धनादिक नष्टभये एतीन्यो लोक हाथजो

रे आगे ठाढेहैं· अरु येजो कदाचित यहउ कछू आपनेच लिजाइ तउ कोऊ याकों जो तृणप्रायऊकरि नलेषै· दूजो वाजने· नानाप्रकारकेराजसी तामसी सात्विकी नारीनरादिक तिनिविषें चनें· निर्जन वनविषें· एकांतविषें निर्विकल्प स्वभावस्य भेदाभेद करि रहितजो आत्मा ताकी भावना करि युक्त जोयोगीश्वर ताके नविशेषोस्ति कछू लेशमात्रऊ भेदाभेद नाहीं· इत्यादि ॥ ११॥ दोहा स्वर्गराज्यमैं भीखमें लाभअलाभजुमांहि॥ जाकेमन कल्पनामिटी भेदाभेदनताहि॥ ११॥ संस्कृत· श्लोक· क्वधर्मः क्वचवाकामः क्वचार्थः क्वविवेकता॥ इदंकृतमिदंनेति द्वंद्वैर्मुक्तस्य योगिनः॥ १२॥ टीका· — क्वधर्मइति· इदंकृतमिदं नकृतामित्यादिद्वंद्वैर्मुक्तस्य योगिनः धर्मार्थकामाः विवेकतामोक्षोपाय भूतो विवेको नभवति तन्मूलभूतविद्या कामसंकल्पादीनां विनाशादित्यर्थः॥ १२॥ ॥ भाषाटीका· — इदंकृतंइदंच· भाइ यह वस्तु साची· यहवस्तुझूठि· यहभली यह अनभली· इति द्वंद्वैः इत्यादिकजे नानाप्रकारके अनंत द्वंद्व तिनि करि मुक्तस्य योगिनः मुक्तभयोहैजो योगीश्वर समस्त मिथ्याजानि एक सत्य ब्रह्मसों संयोग कर्योंहै· ऐसेपुरुषके क्वधर्म, धर्मसो कहा क्वचवाकामः विषयभोगादिकते कहा· क्वचअर्थः धनादिसंपत्तितें कहा· क्वविवेकिता· मोक्षकिं वा ज्ञान इत्यादिकते कहा· ज्यों लगि द्वैत भावहै· तौंलगि इत्यादिक हैं· जब अद्वैत स्वरूप भयो तब एक सोईहै इत्यादि॥ १२॥ दोहा· द्वंद्वमुक्त महापुरुषकों करण अकृत दोउ व्यर्थ॥ कहांधर्म कहां कामहै· कहांविवेक करु अर्थ॥ १२॥

संस्कृत· कथंतर्हिजीवन्मुक्तस्य लोकेक्रियेत्याशं-
क्य जीवनादृष्टवशादेवेत्याह ॥१३॥ श्लोक कृत्यंकि
मपिनैवास्ति नकापिहृदिरंजना ॥ यथाजीवनमेवेह-
जीवन्मुक्तस्ययोगिनः॥ १३॥ टीका· - कृत्यमिति
जीवन्मुक्तस्ययोगिनः संकल्पावशात्किमपि कृत्यंनास्तितथा
हृदिमनसि कापिरंजनाकोपिअनुरागोनास्तितद्धेतुभूताविद्याया
अभावात् तथापिअस्यकृत्यंयथाजीवनंजीवनादृ
ष्टमनतिक्रम्य भवतीत्यर्थः ॥१३॥ भाषाटीका· - जी
वन्मुक्तस्ययोगिनः देहविषैवर्ततसंते जोईश्वरकोमिलिरह्यो
है· आगेदेहैपाइवेतेंरह्योदै ताके कृत्यंकिमपिनैवास्ति यों
नाहींकि भाई यहकछू मोहींकरवेंहै अरु नकापि हृदिवास
ना नकोनऊ हृदयविषै वांछा अवांछानों देहकों निर्वाह-
क्यौं करिहोई· यथाजीवनमेव· यादेहकों ज्योंही ज्यों पूर्व
संस्कारनें आइवनें त्यौंहीत्यौं वर्तावते संते आप करवम-
भयो· कछुदेह कृत जानेएनाहीं इति ॥ १३॥ दोहा·
जीवन्मुक्तमहापुरुषकों नहिंवांछानहि कृत्य ॥ यथालाभ
निजदेहतें वर्ततजीवनमृत्य॥ १३॥ संस्कृत· ॥
श्लोक कमोहः कचवाविश्वं कचध्यानंकमुक्तता
॥ सर्वसंकल्पसीमायांविश्रांतस्य महात्मनः॥ १४॥
टीका· - कमोहइति संकल्पसीमायां आत्मबुद्धौ वि-
श्रांतस्य मोहादिकं कभवति किंकारणमाश्रित्यभवति-
नकिमपिकारणमाश्रित्यभवति आत्मबुध्या कारणोप
मर्दादित्यर्थः ॥१४॥ भाषाटीका· महात्मनः म
हांतश्रेष्ठजे ईश्वर तिनिविषै है आत्मा मनजाको ऐसेपुरुष-
ताकेतो कमोहः आपनीदेह आदिदे धर्मअर्थ काम मो

क्ष इत्यादि ऐसी कोनवस्तु हीजापर थोरी योंमनकी आ·
सक्ति होइ किंतु एकनिमेषऊ मन कहूं नप्राप्त होई अरु
विश्वंवा क्वच· वाके संसारई काहेको अद्वैत भावविषें·
प्राप्तभयो· क्वचध्यानं कहांनाकेध्यान·जो मनमें कछू
जो होइ तोतातें मन षैंचिकरि ध्यानकरि ईश्वरसों लगा·
वै· जोएक ईश्वरई देष्यो द्वैतभाव दूरिही कर्‍यो तो ध्या·
नकहा· अरु क्वमुक्तता· मुक्तहैवेकी वात चर्चा वाकें कैसी
जोद्वैतभावई मिस्यो तोबंधनिहारो कौनतोहे कैसो· सोपु
रुष सर्वसंकल्पसीमायां· विश्रांतस्य धर्म अर्थ काम मो·
क्षादिक अनेकजे वांछा तिन समस्तकीसीमा मर्यादा नि·
वास ऐसे ईश्वर विषें विश्रामही प्राप्तभयोहै·समस्तसा
मग्री उद्यांदेषि न्यारीकछू नदेषी तातें कहांवांछै इति॥
१४॥ दोहा· आतमज्ञानीपुरुषकों सबसंकल्प
अमान॥ कहांमोहकहांविश्वहै कहांमुक्तकहांध्यान
॥२४॥ संस्कृत· श्लोक· येनविश्वमिदंदृ
ष्टंसनास्तीतिकरोतुवै॥ निर्वासनः किंकुरुते पश्य·
न्नपिनपश्यति॥ १५॥ टीका·- येनेति· येनइदं·
विश्वं घटपटादि दृष्टं सतदाहिनत्संस्कारः कदाचित् घटा
दिकं नास्तीति करोतुवै नास्तीतिजानातु पश्यन्नपि नप·
श्यति सनिर्वासनः सन् किंकुरुतेयद्विषयकः संस्कारो·
पिनास्ति तस्यकर्त्तु मशक्यत्वादित्यर्थः ॥१५॥ भा
षाटीका· - जाआत्मज्ञानि पुरुषकरि इदंदृष्टं विश्वं य
हजो कछु प्रत्यक्ष देषि वोऊ करीयतुहै संसार सोऊ सम
स्त नास्तिइतिज्ञानं नाहीकरि जान्योंकि कछु हैयेनाही
ऐसोपुरुष वैसर्वथाकरि करोतु· अनेक कर्म करौं है कैसो

निर्वासनः नतोयौं जानेकिमें कछु कस्यो किमोह कछुक र्तव्य हैकियह कछु मोकों प्राप्तहोंहि कियहकछू दुःखदा रिद्रादि दूरिहोइतो ऐसोपुरुष किंकुरुते कहा वह कर्त्ता कहीयेहै कैसो पश्यन्नपिनपश्यति आपनी देहादिकऊ देषत संते जाके हूं यह बुद्धि नाहीं कियह कछुहै केवलए क अद्वैत अखंडीत अविनाशी आत्मादेषतुहै इति ॥ १५॥ दोहा नेहिकरिदेषीविश्वसबसोनहिन हिंसबकाज॥ देखतसंते नदेखहै निर्वासनासमाज॥ १५॥ संस्कृत श्लोक येनदृष्टपरंब्रह्म- सोहंब्रह्मेतिचिंतयेत्॥ किंचिंतयतिनिश्चिंतोद्वि तीयंयोनपश्यति॥१६॥ टीका - येनेति येन परंव्यतिरिक्तं ब्रह्म दृष्टं सअहंब्रह्मेतिचिंतयेत् यस्त्वद्वि तीयंनपश्यति सनिश्चिंतः सर्वचिंतारहितः सन् किंचिंत- यति नकिमपिचिंतयति अद्वितीयात्मानुभवशालिनिब्र- ह्मचिंतनमपिनास्तीत्यर्थः ॥१६॥ भाषाटीका - येन जापुरुषकरि दृष्टंपरंब्रह्मज्ञानं इंद्रियमनोगोचरं समस्तविस्तार ब्रह्म स्वरूप करि जान्यो है सो पुरुष अहंब्र- ह्म इतिचिंतयति ऐसो ब्रह्म सोमें कोऊ दूजो नाहीं या भांति जो विचारतु है सो निश्चिंतः समस्तचिंतवन करि रहित भयो कोनवस्तु चिंतवे द्वितीयंयोनपश्यति जोके वल आपुहीकों देषै दूजो देषैए नाहीं सोपुरुष किंचित् येन चिंतवे कोनवस्तु इति॥ १६॥ दोहा नहिक रदेष्योपारब्रह्म चिंतनसोहंब्रह्म॥ कहाचिंतवननिश्चिंत व्है द्वितीयनदीखतहम्म ॥१६॥ संस्कृत ॥ ज्ञानिनश्चित्तरोधोपिनास्तीत्याह ॥१७॥ श्लोक दृ

दृष्टोयेनात्मविक्षेपोनिरोधंकुरुतेत्वसौ ॥ उदारस्तुन विक्षिप्तः साध्याभावात्करोतिकिम् ॥ १७॥ टीका.- दृष्टइति येनात्मविक्षेपश्चित्तादिभ्रमोदृष्टः असौ पुरुषश्चित्तनिरोधं कुरुते विक्षेपपरिहारार्थं उदारः सर्वत्राद्वितीयात्मदर्शीतुविक्षिप्त एव नास्ति- सविक्षेप परिहार लक्षणस्य साध्यस्याभावात् किंकुरुते कथं निरोधं कुरुत इत्यर्थः ॥१७॥ भाषाटीका. जोकदाचित कहैकि, यहतो भक्तको उत्तमधर्म है- जोईश्वरकोचिंतवन करै- तुम यह कही तो भली- भरिवो बूझिवैतो सुनुयेन आत्मविक्षेपोदृष्टः जापुरुषकीर ब्रह्मको वियोग जान्यौहैकि यहमें संसार विस्तार वासना सकलतें परे- अतिदूरि परम दुर्लभ ब्रह्मजो ताकों पाइये तौं निर्भयताहोई- नाहींतो कहूं सुख निर्भय एकनिमेषऊ नाहीं- तातें सो कछूजतन करिये- जो संसारतें मन षेंचिकरि ईश्वरके विषे- लगाइयेंतो ऐसो निरोधं कुरुते- ऐसोपुरुष मनकों षेंचिषेंचि ईश्वर की भक्ति विषें तत्परहोई- उदारस्तु विक्षिप्तः जाकें द्वैतभाव हैयेनाहीं- अजन्मा अविनाशी अनंत अपार अनिच्छ- अखंडित एक आत्माई जान्यौ सोपुरुष कदाचित ब्रह्मतें दूजो होइएनाहीं सो साध्याभावात्किंकरोति- साध्य साधकके अभेदतें करैकहा ज्यो कोऊ विदेश होई अरु मार्गचलिकरि जाई- घरपहुंचे सुखी होई- जो घरही होइतौ कदाचित घरकी इच्छा करि मार्गको मनहू विषें न आनैतैसें संसारविदेशविषें ज्यौं लगि मार्गरूप भक्ति ताविषें प्रवर्तेतसंते ग्रहविश्रामस्वरूप ब्रह्म तिनिविषें प्राप्त होई- जब प्राप्त भयो तब कहाचिंतवे इति ॥ १७॥ दोहा- ॥

चित्तादिकभ्रमदूरिकैं चित्तकोकरतनिरोध॥ जोउदारचि त्तब्रह्ममय ताकौंनाहिंप्रबोध॥१७॥ संस्कृत॥ इदमेवविवृणोति॥१८॥ श्लोक धीरोलोकवि पर्यस्तो वर्तमानोपिलोकवत्॥ नसमाधिंनविक्षेपं नलेपंस्वस्यपश्यति॥१८॥ टीका – धीरइति धी रोहूयात्मविश्रांतः लोकविपर्यस्तः लोकेषुविक्षेपरहितः प्रारब्धवशाल्लोके वर्तमानोपि बाधितानुवृत्त्या व्यवहारप- रोपिसन् अयंसमाधिरयंविक्षेपस्तथा अयंविक्षेप कृतो लेपआत्मन इत्यादिकंनपश्यतिचिन्मात्रदर्शित्वात्॥१८॥ ॥ भाषाटीका धीरः आत्मज्ञानीजो महापुरुषसो लोकविपर्यस्तः समस्तइंद्रिय मनोगोचर विस्तारकौं मि थ्याजानिकरि सर्वतें न्यारोह्वैकरि लोकवत् वर्तमानोपि॥ ज्यौं औरलोग आचरत देषिये त्यौंही यद्यपि कदाचित् य- हऊदेषीये तोऊ नसमाधिः नयाकै कौनऊसमाधि करणी यकी भाई ध्यानकरौ जो ईश्वर सों संयोग होई नविक्षे- पः नकौनहू यहकी ब्रह्मसों मोसों वियोगहै क्यों करिप्रा सहोऊ अरु नलयं स्वस्यपश्यति न यौंजानेकिमें कछु कस्यौ किं कछुकर्तव्यहै इति॥१८॥ दोहा लोक चालतैंरहितहै वर्त्तत लोकाचार॥ नहिंविक्षेपअलेपकौं देखत ज्ञानविचार॥१८॥ संस्कृत॥ श्लोक भावाभावविहीनोयस्तृप्तोनिर्वासनोबुधः॥ नैवकिं चित्कृतंतेन लोकदृष्ट्यापिकुर्वता॥१९॥ टीका भावाभावेति योबुधस्तृप्तः स्वात्मानुभव तृप्तः अतए वभावा भावविकारस्फूर्तिहीनः अतएवनिर्वासनः तेनलो कदृष्ट्यापि कुर्वतापिकिंचिदपिनैवकृतंस्यात् अकर्त्तात्म

ज्ञानेन कर्तृत्वाध्यास बाधारहितत्वादित्यर्थः ॥१९॥ ॥
भाषाटीका· - यहः जो आत्मज्ञानीपुरुष भावाभावविहीनः विधिनिषेध सुखदुःखादिक समस्त संकल्पविकल्पनिकरि रहितहै· काहेतें जातें तृप्तजो कछु भूषहोइ तौ· कछू इच्छा करै· यहतौ परम संतुष्टहै काहेतें निर्वासना· जातें समस्त जड सामग्रीतें रहित भयो सोई काहेतें· बुधः मोहरात्रितें जागिपर्यौ· ज्ञान सूर्यको प्रकाशभयो· तातें यह देहादिक सामग्रीनाही करिजानी आपको परमसुखस्वरूप पाइकरि स्थिरभयो ऐसोजो पुरुष तेन ताकरि· लोकदृष्यापिकुर्वता· भाई· ज्यौंमें आचरतुहौं त्यौंही मोहि देषिये समस्तलोक आचरैचाहतहै· तातें इनकेज्ञानोत्पत्तिनाहीं एकर्मधर्महूतें भ्रष्टहोतहैं· यहदेह मुक्तिको द्वार जोइनसों छूटतुहै·तौ· बहुरि अपार संसार विषैंजाईपरतहै यौं दयायुक्त ह्वैकरि उनकेउपकारकेनिमित्त यद्यपि अनेक कर्म करियतऊहै तौहू· नैवकिंचित् कृतं यौं मविजानैकियाकेनिकट कहूकर्म आवै· यहतौ ब्रह्मविषैं स्थितहै· जा· देहसों कर्म करावतुहै· तादेहसों नाहीलिप्त· तातें तू महापुरुषके आचरणमति देषैवाको आशयदेष इति ॥१९॥
॥ दोहा· भावाभावविहीनहै तृप्तवासनाहीन ॥ ताकौंकृत्य कछूनहीं लोकलाज कोपीन ॥१९॥ संस्कृत· इदमेवविशदयति· ॥२०॥ श्लोक· प्रवृत्तौवानिवृत्तौवा नैवधीरस्यदुर्ग्रहः ॥ यदायत्कर्त्तुमायाति तत्कृत्वातिष्ठतः सुखम् ॥ २०॥ टीका-प्रवृत्तावित्ति धीरस्यात्मविश्रांतस्य प्रवृत्तौवानिवृत्तौवा दुर्ग्रहः दुराग्रहः कर्तृत्वाभिमानो नास्ति· कीदृशस्य धी·

रस्यप्रारब्धवशाद्यदायत्प्रवृत्तंवानिवृत्तंवा कर्त्तुमायाति तत्सुखमनायासं यथास्यात्तथाकृत्वातिष्ठतः अतएव कर्तृत्वाभिमानाभावात् ज्ञानिनाकृतमकृतमेवेत्यर्थः ॥ २०॥ भाषाटीका - प्रवृत्तौवा किंवाप्रवृत्तिविषें निवृत्तौवा किंवानिवृत्तिविषें धीरस्य आत्मज्ञानीके दुर्ग्रहोनैव अनादरकिंवा आदर कदाचितनाहीं कहूंभेदाभेदहैएनाहीं तातें यदायत्कर्त्तु आयाति जबही आई करि जोकछु अचिंत्योकरिवेकौं प्राप्त होई तत्कृत्वा सोई करिकें सुखंतिष्ठति सदैववांछा अवांछा करि रहित - आत्मानंद संतुष्ट सुखस्वरूप विराजै इति ॥२०॥ ॥
दोहा प्रवृत्तीनिवृत्तीदोहुमैं नहिकछुदुर्लभताय ॥ जबकरबेकौंहोतहै तबहीकरतसुखाय॥ २०॥ ॥
संस्कृत ननुज्ञानीचेन्निर्वासनस्तर्हिकेनप्रयुक्तः कर्मकरोतीत्याह॥२१॥ श्लोक निर्वासनोनिरालंबः स्वच्छंदोमुक्तबंधनः॥ क्षिप्तः संस्कारवातेन तिष्ठतेशुष्कपर्णवत् ॥२१॥ टीका - निर्वासनइति निर्वासनः अतएवनिरालंबः कर्त्तव्याकर्त्तव्यानुसंधानरहितः अतएवस्वच्छंदः रागद्वेषानधीनः यतोमुक्तबंधनः बंधहेत्वज्ञानशून्यः ज्ञानीसंस्कारवातेनक्षिप्तः प्रारब्धपवनेनप्रेरितःसन्शुष्कपर्णवद्विचेष्टते॥ २१॥ ॥
भाषाटीका - निर्वासनः जोपुरुष स्थूलसामग्रीदूरि करि समस्त मनकीवासना दूरिकरिहै अरुनिरालंबः॥ कौनहूवस्तुको आश्रय नाही अरुस्वच्छंदः आपनीइच्छाजों आचरतुहै अरु मुक्तबंधन जाकी कहू मनकीआसक्तिनाहीं एक ब्रह्मानंदविषें मग्नहै ऐसोपुरुषहैजोक

र्मोकर्म करतें देषहि तो कर्मनिकी ओर मति देषहि कि-
यह कर्म करतु है·देष· संस्कारवातेन क्षिप्तः ॥ शुष्कपर्णव
त्चेष्टते· ज्यों सूको पान वृक्षतें टूट्यो तो वह जड·वाकी क-
छू आवे जे वेकी न इच्छा· अरु न शक्ति परि पवनके वशहै·-
तातें ज्यौंज्यौं पवन चलावे त्यौंत्यौं चलते देषियो· त्योंहीं वह
महापुरुष तो ब्रह्मविषें रत भयो है· यहजड·नयाके करिवे
की इच्छा· अरु न शक्ति·परि पूर्वजन्मको कर्यो जो कछु कर्म·
संग्रह सोई भयो जो पवन ताकी प्रेरि यह देह कर्मनिविषें प्र
वर्त्तहोई इति ॥२१॥ दोहा· निरालंबनिर्वासना
मुक्तबंधनहिकर्ण॥ चलतअसंस्कृत वायुतें जैसो सूखोप-
र्ण॥२१॥ संस्कृत· संसारसंकल्पादिशून्यस्त
सर्वदा संतुष्टइत्याह॥२२॥ श्लोक· असंसार-
स्यतस्यापिनहर्षोनविषादता॥ सशीतलमनानि
त्यंविदेहइवराजते॥२२॥ टीका· - असंसार
स्येति नविद्यते संसारहेतुः संकल्पोयस्यतस्य असंसार
स्य हर्षादिका ऊर्मयो नजायंते· अतऊर्मि रहितत्वात् नित्यं
शीतलमनाविदेहमुक्त इवराजते षडूर्मिरहितः शिव इति·
श्रुतेः ॥२२॥ भाषाटीका· - असंसारस्यतस्यापि
जो देह अरु समस्त संसार ई झूठो तौ सुख कैसे· तातें सं
सारविषें जहांलौं सुखहे ते सकल जो प्राप्त होहि तौ कछु
संतुष्टता नाहीं अरु आशांत्या विषादता· न जहांलौं सम
स्त दुःखहे ते सकल जो प्राप्त होहि तौ कछू दुःख नाहीं है·
कैसो· अमनाः सुखदुःखादिक जे कछु है ते समस्त मनके
हैं· तातें याको मन जहांते उपज्यो हुतौ तहांई आत्मा स्वरू
प को पाइकरि लीन भयो· तातें नित्यं राजते· निरंतर परमा

नंदविषें प्राप्तहें कौनभांति विदेहइव ज्यौं देहकरिरहि-
त आकाश रविचंद्रादिकनिके प्रकाश सुख दुःख पुण्य-
पापादिकनि नलिप्तहोंहिज्यौं इति ॥२२॥ दोहा
असंसारिकौंतुष्टिकर नाहीहर्षविषाद॥ शीतलमनधुन
व्हैविदेह राजतरहितविवाद ॥२२॥ संस्कृत
श्लोक कुत्रापिनजिहासास्ति नाशोवापिनकुत्र-
चित्॥ आत्मारामस्यधीरस्यशीतलाच्छतरात्म
नः॥२३॥ टीका - कुत्रापीति ज्ञानिनः आत्मारा
मस्य अतएवधीरस्य निश्चलचित्तस्य अतएवशीतलः अ
च्छतरः निर्मलतरः आत्मामनोयस्यतस्यशीतलाच्छत-
रात्मनः ज्ञानिनः कुत्रापिजिहासा त्यागेच्छा नास्ति उपादि
त्सापिनास्ति रागद्वेषाभावात् नाशोपि अनर्थोपि कुत्रचिन्ना
स्ति अनर्थहेतोरज्ञानस्याभावादित्यर्थः ॥२३॥ भा
षाटीका धीरस्य आत्मज्ञानी महापुरुषके कुत्रापिजि
हासा नास्ति कौनहू वस्तुविषें कछू त्यागिवेकी बुद्धिनाहीं
अरु आशावापि कुत्रचित्रच कौनहू वस्तुविषें प्रियबुद्धि
मनकी आशक्ति नाहींहै कैसोपुरुष आत्मारामस्य आप
नोईजो परमसुखस्वरूप ताहीके सुखकरि मग्नहै अरु
ताहीतें शीतलाच्छांतरात्मनः परमविश्रामहि प्राप्त भई
है इंद्रियमन बुद्धि चित्त अहंकार जाके मनबुद्धि चित्त
अहंकार एसमस्तलीनभये इंद्रियजडस्थिरव्है रही तातें
सदासुखमयहै इति ॥२३॥ दोहा अंतर्मनशी
तलसदा आत्मारामीधीर॥ त्यागबुद्धिताकौंकहां नाश
बुद्धिकहानीर॥२३॥ संस्कृत श्लोक प्र-
कृत्याशून्यचित्तस्यकुर्वतोस्ययदृच्छया ॥ प्राकृत

स्येवधीरस्यनमानोनापमानता ॥२४॥ टीका-
प्रकृत्येति, प्रकृत्यास्वभावेनशून्यं विकाररहितंचित्तंयस्य
धीरस्यात्मविश्रांतस्य प्राकृतस्येव अज्ञानिन इव यदृच्छ
या प्रारब्धवशात्कुर्वतो अस्यविदुषः मानापमानानुसं
धानंनास्तीत्यर्थः ॥२४॥ भाषाटीका·- प्रकृत्या
शून्यचित्तस्य स्वाभावहितें देषतें सुनते कहते करते और
ऊकर्मकरते किंवा स्थिर ह्वैकरि बैठे·जागते सोवतेजाकोचि
त्त सदानिरंतर शून्यब्रह्मविषें निश्चल भयोहै· अरु यदृ
च्छया कुर्वतोपि ब्रह्मदृष्टिकरि अनेक ख्यालपूर्वक य
द्यपि कर्मउकरतुहै तोऊ धीरस्य नामहापुरुषके मनसः
अभिमानतान· मनकों कदाचित यहबुद्धिनहोईकियह·
कछु मेंकर्‍यो देषिवे कैसो· प्राकृतस्येव·जोऔर संसा
रदेषीये त्योंही यहऊदेषिये तानैं साधुजान्यो जाइना·
हीं·तातें लोग दुःख पावे·तातेंनूं महापुरुषको आशय
देषकर्म मतिदेषैं· साधुकों जानिकरि संगलगिरहू· इति
॥२४॥ दोहा· निर्मलचित्तस्वभावतें करतयदृच्छा
मान॥ प्राकृतनरज्योंधीरकों नहींमानअपमान॥२४
॥ संस्कृत· ॥श्लोक· कृतंदेहेनकर्मेदंनमया
शुद्धरूपिणा॥ इतिचिंतानुरोधीयः कुर्वन्नपिकरो
तिन ॥२५॥ टीका·- कृतंदेहेनेति इतिचिंताअ·
नुरुध्यतेनिरंतरंप्रयाति सकुर्वन्नपिनकरोति कर्तृत्वाभि
मानाभावादित्यर्थः॥ २५॥ भाषाटीका· इदंकर्म
देहनकृतं·यहजोकछुकर्मकर्‍यो सोतो देहसें कर्‍यो· म-
यान· मेंकछू नाहीं कर्‍यो काहेतें· शुद्धरूपिणा· मैंतो शु-
द्धचैतन्य परमसुख स्वरूप· जाकेकछु इच्छा अनिच्छाहो

ई शुद्ध अशुद्ध सुख दुःखादिक जन्ममरणादिक होहि सो कछु करे मै कहा करो इतिचिंतातुरोधीयः यों आत्मस्वरूप जानिकरि जिनि समस्तचिंतवन दूरिकरीहैसो महापुरुष कुर्वन्नपि जाके कर्म करिवोऊ करै तोहूनलिप्यते वाको कहूनकौनहू वातको स्पर्श ह्वैसके यहतो परम शुद्धस्वरूपनिर्लेपइति ॥२५॥ दोहा कर्मकरत हैदेहसब मैकछुनाहिकराय॥ यौंमनचिंतामेटिकै करतसतेनलिपाय ॥२५॥ संस्कृत श्लोक अतद्वादीवकुरुते नभवेदपिबालिशः ॥जीवन्मुक्तःसुखीश्रीमान्संसरन्नपिशोभते॥ २६॥ टीका अतद्वादीति जीवन्मुक्तः अतद्वादीव अहमिदंनकरिष्यामीत्यवदन्नेव कार्यं कुरुते प्रारब्धवशात् अवदन्नपिबालिशो मूर्खो नभवेत् अंतर्ज्ञानित्वात् अतएवसंसरन्नपि संसार व्यवहारं कुर्वन्नपि अंतःसुखी अतएवश्रीमान् प्रसन्नतयाशोभावान् अतएव शोभतेदीप्यते स्वप्रकाशइत्यर्थः ॥२६॥ भाषाटीका - अतद्वादी कर्मनिकोकछुपरित्यागतुनाहीं कर्मनितें बंधनिकरि कहतुहै निःकर्म तातें सुखस्वरूप ईश्वरको प्राप्त होई यौंकरि कहतुहै अरु कुरुते कर्मकरितें देषियतुहै तोक्यों करतुहै ज्यों कहतुहै त्यौंही निश्चय नाहीं अरुयो मूर्षहै यौंनाहीं बालिशोपि नभवेत् ज्यों कहतुहै त्यौंही ज्ञान दृष्टिकरि देषतुहै मूर्षनाहीं तातें जीवन्मुक्तः देहेविषें वर्ततसंते निर्बंधह्वै ईश्वर कौं मिल्यौहै तातें स्वतंत्रहै परतंत्रनाहीं कर्मनिको जडनिको कहाबल ज्यों कर्मनिको कछू भलोकरि जानै सोअपने थोरेहू कर्मविषें बंधै जोकर्मनिकोपरमदृढ

बंधन करि देषै· सो जो अनेक कर्म करै तोहू क्यों बंधै· वहतो देहको कर्त्ता देषै· आपको कर्ता ई करि देषै नाहीं· तातें सुखी कर्मनिर्मित सुखदुःखादिकनितें मन षेंचि करि अक्षयपरम सुखविषै· विराजत है· अरु श्रीमान् जहांलौं कोऊ शोभाकरियुक्त ब्रह्मादिक चंद्रसूर्य इंद्रादिक है· तिनिकी शिरोमणिरूप परम बंदनीय है· ऐसो पुरुष संसरन्नपि शोभने जन्ममरणादिकजे सुखदुःख तिनहूविषें कदाचित मनमें क्षोभहि नप्राप्त होइ· परम सुखमय ईश्वरनिके परमपूज्य विराजतु है· इति ॥ २६॥ दोहा· नहिंतद्वादीज्यौं करै जाणअजाणनहोय॥ जन्मतमरतजुमुक्तजन अतिशयशोभितजोय ॥२६॥ संस्कृत· श्लोकः

नानाविचारसुश्रांतोधीरोविश्रांतिमागतः॥ नकल्पतेनजानातिनशृणोतिनपश्यति॥२७॥ टीका-नानेति· नानाविचारात् द्वैतविचारात् सुश्रांतइवनिवृत्तो यतोधीरोज्ञानी अत एवात्मन्येव विश्रांतिमागतः अतएव नकल्पते संकल्पादिकं मनोव्यापारं नकरोति नजानाति बुद्धिव्यापारं नकरोति शब्दं नशृणोति स्वरूपं नपश्यति इंद्रियमात्र व्यापारं नकरोति कर्तृत्वाभिमानाभावादित्यर्थः॥ २७॥ भाषाटीका· - धीरः आत्मज्ञानी जो पुरुष सो· नानाविचारसुश्रांतः॥ यहजो नानाप्रकारके भेदनिकरि सहित संसार ताके विचारतें कि भाई ब्रह्मादिस्थावरपर्यंत समस्त विस्तारतो पंचभूत निर्मित है· और कछू नाहीं· अरु सबनिविषें एकई आत्माजोमें सोई समस्त· भेदाभेद कैसो· भेदाभेदतो अज्ञानकृत है· अरु यहदेहविषैं जो आत्मबुद्धिकी यहमें· सो देहतें मैं नाहीं· जब·

आत्माजानतुहै· तबया देहकों तो अनेक विलाप करते सं
ते दूरि करतु है· आत्माजब आवै तब वहऊ नजानें·जाकै ग
र्भविषें आवै अरु जबजाई तब अनेक दोंहिंपरि कोऊनजा
नै·तातें आत्मातो इंद्रिय मनोगोचर नाहीं·निराकारहै· अ
क्षयहै· जन्म मरणादिक सुख दुःख समस्त देहकेहैं· देह
केवल आत्माकरि चेतनसी देषियतु है· परिजडहै· अरु·
अत्यंत बलरूपहै· आत्माके वियोग तें याके निकट कोऊ आ
वैनाहीं·तातें आत्मा परमशुद्ध चैतन्य· सदानंदमय· अक्ष
य अजन्मा अविनाशी वहजो कछु देहादिकजड अशुद्ध·
सामग्री तासों आसक्ति करैतें परमदुःख होतहै· तातें में
ऐसो ह्वैकरि यासों क्यों आसक्ति होतहों· इत्यादिक जे ना·
नाप्रकारके विचार तिनिकरि परम शांत भयोहै याहीतें वि
श्रांति आगतः॥ परमशांत सुखस्वरूप ईश्वरकों जानि
करि निश्चल भयोहै· ऐसोपुरुष नकल्पते· नकछुमन विषै
संकल्पविकल्प आनै· अरु नजानाति नकछू भेदाभेद जा
नैं· नशृणोति समस्त सुनै परि जानैं कछु· नमानहु कछू·
सुन्यो नाहीं· नपश्यति·समस्त आंषि नदेषै·परि कछू न·
जानें·मानो कछू देष्यो ईनाहीं इति॥२७॥ दोहा·
निवृत्तिभयो नानाविचार आवतपदविश्राम॥ सुनत नदे
खनजानिहै वहीकल्पनाकाम॥२७॥ संस्कृत·
श्लोक· असमाधेरविक्षेपान्न मुमुक्षुर्नचेतरः
॥निश्चित्यकल्पितंपश्यन् ब्रह्मैवास्तेमहाशयः
॥२८॥ टीका· - असमाधेरिति ज्ञानीमुमुक्षु
र्नभवति असमाधेरसमाधिकरणात् तथाइतरोबंधो·
नअविक्षेपात् द्वैतभ्रमाभावादित्यर्थः कीदृशस्तर्हिज्ञा

नीत्याशंक्याह निश्चित्येति इदं सर्वं कल्पितमिति पूर्वं निश्चित्य पश्चात्बाधितानुवृत्त्या पश्यन्नपि महाशयो निर्विकारचित्तः अतएव ब्रह्मैवास्ते ॥२८॥ भाषाटीका महाशयः महातजे ईश्वर तिनिविषैं है आशय विश्राम जाको ऐसो पुरुष निश्चित्य कल्पितं विश्वं पश्यन् निश्चयकरि केवल अज्ञान कृत मिथ्या संसार देषत संते केवल ब्रह्मरूपई भयो तब वर्ततहै काहेतें असमाधेः जो और कछू जान्यौई नाहीं एक ब्रह्मई जानतुहै तौ समाधिविषैं स्थित होनो सो कहा समाधि कहीये कि यह जो संसार तातें मन षैंचिकरि ईश्वरविषैं स्थिर करीयें तातें यह दूजो देषेई नाहीं अरु अविक्षेपात् यौं नाहीं जो कदाचित ब्रह्मतें वियोग होई अरु नमुमुक्षुः नतौ मोक्षको समुझै अरु नच इतरः न भोगादिकनि कों समुझै तातें ब्रह्मरूप जानिये इति ॥२८॥ दोहा नहींसमाधीकरणतें बंधमोक्षन हितास ॥ सबजगकल्पितजानिकै ब्रह्मरूपसुखवास ॥ २८॥ संस्कृत ननुसंसारं पश्यंश्चेत्कथं ब्रह्मेत्याशंक्याहंकारभावादित्याह ॥२९॥ श्लोक यस्यांतःस्यादहंकारो नकरोतिकरोतिसः ॥ निरहंकारधीरेण नकिंचिन्न कृतं कृतम् ॥ २९॥ टीका यस्येति यस्यांतःकरणे अहंकाराध्यासः स्यात्स लोकदृष्ट्यानकुर्वन्नपिसंकल्पादिकं करोति कर्तृत्वाध्यासात् निरहंकारेण अतएव धीरेण कर्तृत्वाध्यास रहितेन यद्यपि लोकदृष्ट्या कृतं तथापि स्वदृष्ट्या नकिंचिदपि कृतं कर्तृत्वाध्यासाभावादित्यर्थः ॥ २९॥ भाषाटीका -यस्यांतः अहंकारः स्यात् जाकै अंतःकरणविषैं अहंकार

बुद्धि है कि यह मैं पुण्य कर्यो यह पाप कर्यो यह मैं त्याग कर्यो यह संग्रह्यो तो ऐसो प्राणी न करोति यद्यपि समस्तकर्मत्यागी बैठो है तोहू करोति सः समस्त कर्म करते ईजानहु निरहंकारण धीरः अहंकार करि रहित जो आत्मज्ञानी पुरुष ताहि न किंचित् अकृत न कृत न कर्म करत लिप्त होई न छोडे लिप्त होई असंख्य कर्म करे तोहू यह कछू कर्यो नाही तातें एकई आत्माज्ञानि करि अहंकार दूरि करु साधु कों पहिचान कर्मनिकी ओर मति देषे साधुको मतो देषि इति ॥ २९ ॥ दोहा जाके मन अहंकार कछु न कियो किये समान ॥ अहंकार विन धीर कौं नहीं कृताकृत जान ॥ २९ ॥ संस्कृत मुक्तचित्तं वर्णयति द्वाभ्याम् ॥ ३० ॥ श्लोक नोद्विग्नं नच संतुष्टमकर्तृस्पंदवर्जितम् ॥ निराशंगतसंदेहं चित्तं मुक्तस्य राजते ॥ ३० ॥ टीका - नोद्विग्नमिति मुक्तस्य चित्तं राजते केवल प्रकाशरूपमेव यतो नोद्विग्नं उद्वेगहेतोर्द्वेषस्याभावात् नच संतुष्टं संतोषहेत्वनुरागाभावात् तथा अकर्तृस्पंदवर्जितं संकल्पविकल्पशून्यं अतएव निराशंगतः संदेहो यस्मात्तत् गतसंदेहं संदेहहेतोरज्ञानस्य नष्टत्वादित्यर्थः ॥ ३० ॥ भाषाटीका अष्टावक्र मुनि कहत हैं कि हे षरे पुत्र संसार जो है सो केवल चित्त है और कछु नाहीं साधु आत्माके संगतें चित्त सो संसारी ऐसो भयो तातें साधु संग करणीय तो कल्याण तो कैसो भयो है चित्त सोई कहीयतु है मुक्तस्य चित्तं राज्यते जीवन्मुक्त जो आत्मज्ञानी महापुरुष ताकौं जो चित्त सो सर्वरूप रि विराजतु है कैसो है नोद्विग्नं न तो कबहू अनेक

दुःख निंदा अपमानादिकनिकरि उद्विग्न होइ. अरु नवसं तुष्ट नतो कदाचित अनेक सुख स्तुति मानादिकनिकरि संतोष पावे अरु अकर्तृ कर्म करिवेतें कदाचित तृप्ति नभा नतुहुतो. जिनि दुःखकरि कर्मनितें नरकादिक पावैते दुःकर्मऊ अनेक कियेबिनु नछोडतुहुतो. सो अब सुख दाई पुण्यकर्म ताहूविषें कौनऊ भांति नप्रासहोई तो औरकीक हा अरु स्पंद वर्जित जन्म मरण सुख दुःख भेदाभेद सम स्तचिंतवन करि रहितहै. अरु निरास. आगे कौनहु भोग. मोक्षादिक सामग्रीकी वांछा नाहीं. अरु गत संदेह समस्त संदेह संशयादिकनिकरि रहितहै. एक अक्षय सुखवि षें मग्न है इत्यादि ॥ ३० ॥ दोहा. संतुष्टरु उद्विग्न नहीं सबसंकल्परहित्त ॥ आशाहीनसंदेहगत मुक्तपुरुषकोचित्त ॥ ३० ॥ संस्कृत. श्लोक. निर्ध्यातुंचेष्टितुंवापियच्चित्तंनप्रवर्तते ॥ निर्निमित्तमिदं किंतु निर्ध्यायति विचेष्टते ॥ ३१ ॥ टीका. - निर्ध्यातुमिति यस्यज्ञानिनश्चित्तं निर्ध्यातुं निःक्रियत्वेनस्थातुं चेष्टांकर्तुं वापिन प्रवर्ततेनसंकल्पयति किंतु इदं ज्ञानिनश्चित्तं निर्निमित्तं संकल्परहितमेवसत् निर्ध्यायतिनिश्चलंस्वरूपेतिष्ठतितथाविचेष्टतेविविधांचेष्टांकरोतीत्यर्थः ॥ ३१ ॥ ॥ भाषाटीका. - निर्ध्यातुं कौनवस्तुके चिंतवनकरिके चेष्टितुंवापि. किंवा कौनहू वस्तुके आचरण करिवेकौं. यच्चित्तंनप्रवर्तते. जाकोचित्त क्योंहू उद्युत होइ एनाहीं. इदंनिर्निमित्तं. यह समस्त विस्तार मिथ्याजानि करि जाकेकौनउ निमित्त ई नाहीं. सो पुरुष किंनिर्ध्यायति कौनवस्तुहै जाको चिंतवनकरै. अरु किंविचेष्टते. वाकौन वस्तुको आ

चरणकरे इत्यादि ॥३१॥ दोहा· जगप्रपंचचेष्टा विषे नाकोमननहिजाय ॥ सबसंकल्पविशारकै क्रीडाविध कराय ॥३२॥ संस्कृत ज्ञान्यज्ञानिनोर्विशेषंव दन्नेवज्ञानिनोविरलत्वमाह ॥३२॥ श्लोक तत्त्वं यथार्थमाकर्ण्य मंदः प्राप्नोतिमूढताम् ॥ अथवा· यातिसंकोचममूढः कोपिमूढवत् ॥ ३२॥ टीका· – तत्वमिति मंदोऽज्ञानीयथार्थं तत्त्वपदार्थाभेदं श्रुतेराकर्ण्य असंभावना विपरीतभावनाभ्यां मूढतां विवेकं प्राप्नोति अथवा शास्त्रार्थसाक्षात्काराय संकोचं चित्तसमाधिं आयाति कोपि सहस्त्रेष्वेक अंतर संमूढोपि बाह्यगत्यामूढवद्बहिर्व्यवहारकर्त्ता भवति ॥३२॥ ॥ भाषाटीका· – हेपुत्र देष· प्रथमतोयहतत्वज्ञानईपरम दुर्लभहै· अरुजो कदाचित पावैतो याहीतें नरकादि दुःखनिकी प्राप्त होई· याहीतें नारायण परायण होई· यह महाकठिन खांडे धार मार्गहै देषु· यथार्थतत्व· आकर्ण्य यह साचो अद्वैत ज्ञान सुनिकरि मंदः राजसी तामसी कर्मिष्ठजोहै मूर्ख सो मूढतां प्राप्नोति जोकछु पुण्यकर्मईकरतहुतो तिनहूतें भ्रष्ट होइजाई अरु आगैवस्तु पावैनाहीं· तातें दुःखसमुद्रविषे प्राप्तहोईतो यह तौयौं अरु अथवा अमूढकोपि सात्विकी शब्द ब्रह्मविषे निपुण पंडित संसारतें विरक्त ऐसो कोऊएक कोटिनमध्ये संकोचयाति· पुण्यपापादिक सुखदुःखादिकनिको त्यागकरि समस्त संसार व्यवहार चेष्टातें रहित होइ ईश्वरसों सन्मुख होइ कौनभांति· मूढवत् परम पंडित चातुरजो प्रतिष्ठाचेष्टादिकरिरहित यों होइजाई· ज्यों मूर्ख दे

षीये परि है कैसो अमूढ पंडित तेजस्वी ईश्वरादिकनि
नहूं समस्तनिकरि वंदनीयहै· सर्वोपरिहै· तातेंयहज्ञा
न जोही ताहीको सुनाइवे जोग्य नाही इत्यादि॥ ३२॥
॥ दोहा· तत्वबोधकौंसुननही मदमूढमतिहोय
॥पंडितसुनिकेकर्मतें रहितज्ञानयुतजोय ॥३२॥ ॥
संस्कृत· अथवायातिसंकोचामित्यनेनोक्तमेकाग्र-
तानिरोधौ दूषयति ॥३३॥ श्लोक· एकाग्रतानि
रोधोवामूढैरभ्यस्यते भृशम्॥ धीराः कृत्यंनपश्यन्ति
सुप्तवत्स्वपदेस्थिताः॥३३॥ टीका· – एकाग्रतेति
एकाग्रता एकलक्ष्यनिष्ठचित्तता अथवानिरोधः चित्तवि
लयो मूढैरनुत्पन्नात्मसाक्षात्कारैर्विपरीतभावनानिवृत्त्य
र्थं भृशमत्यर्थमभ्यस्यते सुषुप्तवद्देहात्मधीराहित्येन स्व
पदे स्वरूपे स्थिताधीराविज्ञानिनस्तु प्रागुक्तं किमपि कृत्यं
नपश्यन्ति अद्वैतानंदात्मसाक्षात्कारेणैवानंदादिभ्रमस्य
दुरापास्तत्वादित्यर्थः ॥३३॥ भाषाटीका· – एका
ग्रतानिरोधोवा· भाई यहमनुष्यजो संसार सामग्रीविषें
जातुहै ताकों षेंचिकरि ईश्वरविषें लगाइतें याभांति भृ·
शं अतिशयकरि मूढैः अभ्यस्यंते· जे मूर्खहै· भेदाभेद·
विषें तत्परहै· कियहमें यह नानाप्रकारको संसार मेरे अ·
नेक शत्रुकामक्रोधादिक ईश्वर परम दुर्लभ अतिदूरि इ·
त्यादिक भेदनिकरि जेयुक्तहै तिनिकरि अभ्यास करि यतु
है· धीराः॥ जेपरमविवेकी महापुरुषहैते कृत्यंनपश्यन्ति
आपविषै संसारविषें ईश्वरविषें भेदाभेददेषतेंई नाहीं·
साध्यसाधक कृत्यकर्ता कछु द्वैतभावजानतेंई नाहीं है
कैसे· स्वपदेस्थिताः अपनोपद स्थान ईश्वर तिनविषें स्थिर

भयोहै· जो देहविषें आसक्त होहि तो नानात्व देखैहि तातें· कौन भांति स्तब्धवत् ज्यों सोयो पुरुष कछू कृत्याकृत्य शुभाशुभ देहादिक समस्त व्यवहार नजाने नदेखे त्यों तातें यों मति जानहि कि भाई यह तो कबहू ध्यान स्मरणादिक करते नाही देखियतु· अरु कछू संसार सामग्रीतें विरक्त नाही देखीयतु· यह कैसो साधु· अरु तूं समस्त भेदाभेद दूरिकरु· अद्वैत ब्रह्मकी भावना आन इत्यादि ॥३३॥ ॥ दोहा· चित्तएकाग्रनिरोधता मूढनकरअभ्यास ॥ धीरकृत्य देखत नहीं ज्यों निद्रित तन तास ॥ ३३॥ संस्कृत· निरोधस्याकिंचित्करतामाह ॥ ३४॥ श्लोकः अप्रयत्नात्प्रयत्नाद्वा मूढोनाप्नोति निर्वृतिम् ॥ तत्त्वनिश्चयमात्रेण प्राज्ञो भवति निर्वृतः॥३४ ॥ टीका· - अप्रयत्नादिति· मूढपुरुषः अप्रयत्नाच्चित्तनिरोधात्प्रयत्नात्कर्मानुष्ठानाद्वा निर्वृतिं परमं सुखं न प्राप्नोति आनंदहेतोरात्मानंदानुभवाभावादित्यर्थः प्राज्ञस्तु समाधिंवा कर्मवाप्य कुर्वन् तत्त्वनिश्चयमात्रेण सुखीच भवति दुःखहेतोरज्ञानस्य ज्ञानदग्धत्वादित्यर्थः ॥३४॥ भाषाटीका· - मूढः अज्ञानी कर्मनि विषें सुखादिक व्यवहारनि विषें जाकी आदरबुद्धि है सो अप्रयत्नाद्वा· बिनजत्न कीये कि वा अनेक जुग जत्न कीये निर्वृत्तिन आप्नोति· जन्ममरणादिकनितें कहाचिंतवन निवर्तें होई· जत्नबिनतो निवृत्त होइएनाही· अरु ज्ञानबिन ज्योंहीत्यों नानाप्रकारके जत्न करै त्यों हीत्यों अधिक अधिक संसारसमुद्रके भवरमें परे· प्राज्ञः तत्वनिश्चयमात्रेण निवृत्तः भवति· जो शब्द ब्रह्मविषें निपुन है· त्रिगुणम

यकर्मनिको बंधनिकरि जानतुहै· सुखादिकनिविषें दुःख अधिक करिजानतुहै ऐसोपुरुष तत्वज्ञानको निमित्तमा त्रकरिकेंगुरुसों श्रवणमात्रही समस्ततें छूटिकरि ईश्वर कों प्राप्तहोई· इत्यादि॥३४॥ दोहा· बहुतकज लअजतनैं मूरखकौं सुखनाहिं॥तत्वसुनिश्चयमात्र· तैं प्राज्ञमहासुखमांहि॥३४॥ संस्कृत· ननुयो गाभ्यासादात्मानुभवोभविष्यतिइत्याशंक्यनेत्याह॥३५॥ श्लोक· शुद्धंबुद्धंप्रियंपूर्णंनिःप्रपंचंनिरामयम्॥ आत्मानंतंनजानंतितत्राभ्यासपराजडाः॥३५॥ टीका·– शुद्धमिति तत्रजगतिअभ्यासपराजडाअज्ञानिनः आत्मानंनजानंति कीदृशशुद्धं मायामलातीत अतएवबुद्धं स्वप्रकाशंप्रियं सुखरूपंपूर्णंयतोनिःप्रपंचंअतएवनिरामयंदुःखसंबंधरहितं॥३५॥ भाषाटीका·– जडाःतत्राभ्यासपराः जे मूर्खहैंते ब्रह्मकेपाइवेकों संसारतें छूटिवेकों ध्यानस्मरणादिक आसक्तकरतहै· यों नाहींजानतेकि रेमैजोबंध्यो कहतुहौं अशुद्ध कर्मनिकरियुक्त ब्रह्मतें न्यारोकरि आपकों कहतुहौं· मैंअरुब्रह्मतो अज्ञानतें दूजे कहियतहै परिएकहीहै· तौकैसोहै·मै· शुद्ध जाकीशक्तिकरि परम-अशुद्धजे देहादिक तेऊ शुद्ध संगकरि आचरतुहै· अरु· बुध जाग्रत स्वप्न· सुषुप्ति जन्म मरणादि भूतभविष्य वर्तमान सुखदुःखविधिनिषेध माया काल कर्मादिकनि·को साक्षीरूप दृष्टा परमज्ञानस्वरूप अरुप्रियं आपनेही सुखकरि आनंदित अरुपूर्ण· पूर्व· आग्नेय· दक्षिण· नैऋत्य ·पश्चिम· वायव्य· उत्तर ईशान्य अध· ऊर्ध्व इत्यादिक

दशोदिशि ब्रह्मांड मध्यबाहिर सर्वत्र पूर्ण अरु निःप्रपंच जाकी शक्तिकरि वह जड मिथ्या समस्त प्रपंच सो चेतनसो साचोसो ह्वैकरि वर्तनुहै अरु निरामयं जन्ममरणादिक समस्त रोगादिक दुःखनितें न्यारो ऐसोजो मेंसो ब्रह्माकोंहू जो क्यों करि मानतु हों मैंतो सोईहौं यह विवेक जिनकेनाहीं जे अज्ञानीहै ते ईश्वरे आपकों खंडित करि मिलिवेको जत्न करतहै तातें साधुके कछू ध्यानस्मरणादिक मति विचारै वह ब्रह्म रूप जानिकरि सेउ अरु आपकों संसारको ईश्वरकों एकरूप जानु इत्यादि॥ ३५॥ दोहा· शब्दबोधप्रियपूर्णनिज आतमरूप अजाण॥ करतयोगअभ्यासकों जोजडमूढसमान॥ ३५॥ संस्कृत· इदमेवविवृणोति ॥ ३६॥ श्लोक· नाप्नोतिकर्मणा मोक्षंविमूढोभ्यासरूपिणा॥ धन्योविज्ञानमात्रेण मुक्तस्तिष्ठत्यविक्रियः॥ ३६॥ टीका· - नाप्नोतीति विमूढोअनात्मज्ञः अभ्यासरूपिणायोगाभ्यासात्मकेन कर्मणा मोक्षंनाप्नोति नकर्मणा नप्रजयाधनेनेतिश्रुतेः धन्योभाग्यवान् विरलोविज्ञानमात्रेणाविक्रियोनिरस्ताविद्याकामकर्मा अतएव मुक्तस्तिष्ठति॥ ३६॥ भाषाटीका· - विमूढः जो आत्मज्ञान करिरहित मूर्षहै अरु संसारतें निवृत्तह्वैवेकी इच्छाकरै सो पुरुष अभ्यासरूपिणा कर्मणामोक्षं नआप्नोति· अनेक अभ्यासनिकरि रहितजे कर्म कर्त्तुहैकि भाई यह कर्मउत्तमहै याकों करौ तौ संसार तें छूटि निवृत्तहोऊं या प्रकार नानाभांतिके कर्मनि करि कदाचित संसारतें छूटे नाहीं· धन्यविज्ञान मात्रेण मुक्तस्तिष्ठति· विचारी· जोमहापुरुष सोकेवल ज्ञानकों स्मनतही मात्र समस्त-

भेदाभेद बंधननितें छूटि मुक्तव्है स्थिर होइहै कैसे· अ-
क्रियः मनवचन कर्म समस्तकर्मनि करि रहित भयो
तातें देषु· यह अपूर्व पूर्व अद्भुत मार्ग है· जो याके चलवेकों
अनेकजतन करै त्यों त्यों सो दूरिपरते जाई· तो इंद्रिय मन
बुद्ध्यादिकनिकारि करिवे· कराइवे समस्ततें निवृत्त होई·
ताही क्षण मार्गजानही· ईश्वरही मिलैदेषै· तातें समस्त·
स्थूल सूक्ष्म कर्मादिकनितें रहित होई इत्यादि ॥३६॥ ॥
दोहा· मोक्षन कर्मनतें मिलै योगभ्यासतें नाहिं ज्ञा
नमात्र कर मुक्त है सोइ धन्य सुख माहिं ॥ ३६ ॥ ॥
संस्कृत· मुमुक्षुरपिमूढो ब्रह्म नाप्नोतीत्याह ॥ ३७ ॥
॥ श्लोक· मूढोनाप्नोति तद्ब्रह्म यतोभवितु-
मिच्छति ॥ अनिच्छन्न पिधीरोहि परब्रह्म स्वरूप
भाक् ॥ टीका· – मूढइति मूढः अज्ञानीयतः चि
त्तनिरोधादेर्ब्रह्म भवितुमिच्छति इति ततो ब्रह्म नाप्नोतिहि
निश्चितं धीरोज्ञानी अनिच्छ न्नपिमोक्ष मनिच्छन्नपिप
रब्रह्मस्वरूपभाक् व्यवधायकाज्ञानस्यनिवृत्तत्वादित्यर्थः
॥ ३७ ॥ भाषाटीका· – मूढः तद्ब्रह्म न आप्नोति
अज्ञानीपुरुष तातें ब्रह्मकों नप्राप्त होई· काहेतें· यतः भ-
वितुं इच्छति· जातें आपुको मायाकाल कर्मादिकनिकरि
युक्त ईश्वरतें दूरि करि न्यारो जानै· अरु ब्रह्मके पाइवेकों
वांछै कि मैं ऐसो जतन करों जातें ब्रह्म होऊं तातें न पावै·
धीरः आत्मज्ञानीजो महापुरुष सोहि निश्चयकरि अनि
च्छन्नपि परब्रह्म स्वरूपभाक् आपकों ब्रह्मकों एकई जा
निकरि द्वैतकी भावना दूरिकरिस्थित भयो· तातें जो ईश्वर-
कोऊ दूजो करि जाने तो प्राप्त व्है वेकी इच्छा करै· जो आपही

तोवांछे कहा· तातें विनवांछा विनजत्नही यहजन्मादिकनि तें छूटिकरि ईश्वर स्वरूपकों प्राप्त होई इति ॥३७॥ दोहा· भुवनप्रापतीब्रह्मजों इच्छाकरतअनेक ॥ज्ञानीइच्छअनिच्छव्है ब्रह्मस्वरूपअनेक ॥३७॥ संस्कृत· एतदेवस्पष्टयति ॥३८॥ श्लोक· निराधारा ग्रहव्यग्रामूढाः संसारपोषकाः ॥ एतस्यानर्थमूलस्य मूलच्छेदकृतोबुधैः ॥३८॥ टीका· - निराधाराइति· मूढाअज्ञानिनस्त निराधाराग्रहव्यग्राः केवलेनचित्तविरोधेनैववयंमोक्ष्याम इतिनिःकारण दुराग्रहव्यग्राः प्रत्युतसंसारपोषकाः संसारनिवर्तकज्ञान पराङ्मुखत्वात् बुधैःज्ञानिभिः अनर्थमूलस्यैतस्य संसारस्य मूलच्छेदः कृतः संसारमूलभूतस्याज्ञानस्य ज्ञानेन निवृत्तत्वादित्यर्थः ॥३८॥ भाषाटीका· - निराधाराःकोपीनमात्रऊदूरि निर्जन देशविषें जाइरहे परिग्रहव्यग्राः मनके संकल्पविकल्प देहगृहादिक व्यवहार निवर्तनाही भये तो मूढाः वैपरम अज्ञानीमूरख· संसारपोषकाः संसार वृक्षकों सदैव सिंचि सिंचि बंधावनहारेहैं· एतस्यमूलच्छेदः बुधैःकृतः यासंसार वृक्षके मूलनिकों नाश आत्मज्ञानीजि महापुरुष केवल तिनहीकरि जान्योहै· कैसो है· संसारवृक्षः· अनर्थमूलस्य· जाको मूलई अनर्थ· तातें अर्थकहांतें उपजें· जेकछु ऊपजें तेसमस्त महा अनर्थ उपजें· विस्तार सहित· तातें केवल मनको अवलंबन दूरिकरु इत्यादि॥ ३८॥ दोहा· वस्त्रत्यागवनमेंवसे मनमेंसब अभिमान॥ ऐसेअनर्थमूलकों छेदतसंतसुजान॥ ३८॥ ॥ संस्कृत· श्लोक· नशांतिं लभतेमूढोयतःश

मितुमिच्छति॥ धीरस्तत्त्वंविनिश्चित्यसर्वदाशांत मानसः॥३९॥ टीका· - नशांतिमिति· मूढः अ ज्ञानीयतश्चित्तनिरोधादेः शांतिं इच्छतितनः शांतिंनल- भतेधीरोविवेकीतत्त्वंविनिश्चित्यशमितुमिच्छन्नपिस्वभावा देवसर्वदाशांतमानसोभवतियतोविकारहेतोरज्ञानस्यनिवृ- त्तत्वादित्यर्थः॥३९॥ भाषाटीका· - मूढः शांतिं नलभते आत्मज्ञानकरि रहितजोमूर्ख सो कदाचित्त शांति हीनपावे काहेतें·यतः शमितुमिच्छति·जातें ईश्वर कौं न्या रोजांनि दूरिजानि अहंकारादिकनिकरि सहित जत्न करि शांतभयो चाहे तातें धीराः तत्वंविनिश्चित्य परम भाग्यवंत जे ज्ञानीपुरुष ते गुरुके मुषतें एवचन सुनिकरि कौन वच नः तत्वं· रेपुत्र सोजो ईश्वर अक्षयानंदस्वरूप कर्त्ता है सो तो तूंहीहै· दूजोनाहीं तूं आपकों समुझ भेदक्यों आनतु है इत्यादिक जे श्रीगुरुकेवचन तिनिविषें निश्चयमानिक रि सर्वदाशांतमानसः ताहीक्षणतें ब्रह्मरूप ह्वैरहे·पर· मानंदस्वरूपविषें मग्नभये तातें योंजान इत्यादि॥३९॥ ॥

दोहा· मूढनशांतिलहतजो मनरोकतकरध्यान॥
ज्ञानीआत्मविचारतैं सदाशांतमनमान॥३९॥ ॥

संस्कृत· श्लोक· क्वात्मनोदर्शनंतस्ययत्- दृष्टमवलंबते॥ धीरास्तंतंनपश्यंतिपश्यंत्यात्मान मव्ययम्॥४०॥ टीका· - क्वात्मनइति योदृ- ष्टंज्ञानं अवलंबते दृश्यंविषयीकरोति तस्यात्मनोदर्शनं क्वनक्वापीत्यर्थः धीराज्ञानिनस्तंतंतिमिरप्रदीपनादादि कं दृश्यपदार्थं नपश्यंतिकिंतुचिद्रूपमात्मानं पश्यंति॥ ४०॥ भाषाटीका· - तस्य आत्मनो दर्शनक्व ता

कों ईश्वर आत्मस्वरूपकों दर्शन कह्या· कौनको यों दृष्टमव
लंबते· जाके मनको अवलंबन इंद्रिय मनोगोचर कौनहूव
स्तुविषें है· ताकों धीराः तंतंनपश्यंति आत्मज्ञानीजेपुरु
षते इंद्रिय मनोगोचर सामग्री कछू देषतेंई नाहीहै· कैसे
आत्मानं अव्ययं पश्यंती· भाई आत्मातो एकई· दूजो है
एनाहीं· जेनानाप्रकारके रूपतें कह्या· अरु आत्मा अक्षय·
एसमस्त उपजहिं विनसहिं तातें एसमस्त मनको भ्रमहै
मिथ्याहै· योंजानिकरि एक आत्माकों सर्वत्र पूर्णदेषताहै·
तातें तूं समस्तमिथ्या जानि हृदयतें दूरिकरि आत्माकों स-
त्यजानि ॥४०॥ दोहा· जाकोमनविषयनविषें अ
ह्मदृष्टिनहिंताहि॥ ज्ञानीऔरनदेखकें देखतब्रह्मभवाहि
॥४०॥ संस्कृत· श्लोक· क्वनिरोधोविमू
ढस्ययोनिर्बंधंकरोतिवै॥ आत्मारामस्यधीरस्य
सर्वदासावकृत्रिमः॥४१॥ टीका· - क्वेतियः अ
ज्ञानी शुष्कचित्त निरोधैर्निर्बंधंकरोतितस्यविमूढस्यक्वचित्त
निरोधः नक्वापि अज्ञानिनांसमाध्युपगमे पुनश्चित्तप्रसरा
त् स्वात्मारामस्यैवात्मारामस्य अतएवनिश्चलचित्तस्यस
र्वदाऽसौचित्तनिरोधः अकृत्रिमः स्वाभाविकः सर्वदा·
स्वात्मानुभवशालित्वात्॥४१॥ भाषाटीका·-वि
मूढस्यनिरोधःक्व आत्मज्ञान रहितजोमूरख ताकेमनकोनि
रोध कहांकोसो कोनमूर्ष· यः स्वारामस्य धीरस्यैवनिर्बंधः
करोति·यो आत्मारामजो महापुरुष तिनिके समान स-
मस्त बंधननितें छूटिनिर्बंधभयो· चाहतुहै· कि ऐसोजतन
करों· जातें संसारतें निवृत्तहोऊं है कैसो· सर्वदासावकृ
त्रिमः आपकों आदिदे समस्त विस्तारकों नानात्वकरि·

ज्ञानतुहै· एकब्रह्म दृष्टि नाहीं· तातें क्यौंकरि छूटै इत्यादि ॥४१॥ दोहा· मूरखोचित्तविमूढकों नाहींहोतनिरोध ॥ निश्चलचित्तस्वभावतें तिनकौंब्रह्मप्रबोध ॥४१॥ संस्कृत· श्लोक· भावस्यभावकःकश्चिन्नकिंचिद्भावकोपरः॥ उभयाभावकःकश्चिदेवमेवनिराकुलः॥४२॥ टीका· – भावस्येति कश्चित्तार्किकादिः भावस्यभावकः भावरूपःपरमार्थः सन् प्रपंच इतिभावयति मन्यतेइतिभावकः अपरः शून्यवादीबौद्धः नकिंचिदस्तीतिभावयतीति मन्यते इतिनकिंचिद्भावकः कश्चित्सहस्रेष्वेक आत्मानुभवशालीउभयाभावकःसन् एवमेवउभयाभावेनैवनिराकुलः स्वस्थचित्त आस्त इत्यर्थः॥४२॥ भाषाटीका· – कश्चिद्भावस्यभावकः देषरे पुत्र जेमहापुरुषहै तिनके कछु आचरणई अद्भुतहै कोनुजानुसके उनकी ओई जानै· कोऊक प्राणीतो ज्यौंहीयह संसार व्यवहार नानात्वकरिदेषत सुनतहै त्यौंही साचकरिजानै· अरु अपरः नकिंचित् इतिभावकः एकयौं कहतहै कि·यहजो कछू विस्तारहैसो झूठीहै·यौंबिचारतहै·उभयाभावकः कश्चिदेवमेच व्यवस्थितः कोटिनमध्ये कोऊक जोहै महापुरुष सो नतोसाचकरिजानैं· अरु नझूठोकरिजानैं· द्वैतकीभावनाकरिरहित· ज्यौंहै एक अद्वैत स्वरूपत्यौंही स्थिरव्हैरहै· जोसंसार दूजो करि जानहीतौ झूठो साचो विचारही इत्यादि॥४२॥ दोहा· केइयकभावकभावके केइयककहत अभाव॥ दौविवादकौंछांडिकै ज्ञानीब्रह्मस्वभाव॥४२॥ संस्कृत· नकिंचिदपिचिंतयेदितिभगवद्वचनं सिद्धांताभिप्रायेणाह॥४३॥ ॥

श्लोकः शुद्धमद्वयमात्मानंभावयंतिकुबुद्धयः ॥नतुजानंतिसंमोहाद्यावज्जीवमनिर्वृताः॥४३

टीका - शुद्धमिति कुबुद्धयो मूढबुद्धय एव शुद्धं निर्मलं अद्वयं द्वैतवर्जितं आत्मान अत तनशीलं व्यापकंभावयंति चिंतयंति नतु जानंति साक्षात्कुर्वंतिकुतः संमोहात् निर्मलत्वस्य कल्पितमलसापेक्षत्वात् अद्वयस्य कल्पितद्वयसापेक्षत्वात् आत्मत्वस्य कल्पितानात्मसापेक्षत्वात् सापेक्षेरूपचिंतनेनतुमोहानिवृत्तेःयतोनजानंति अतएवयावज्जीवमनिर्वृताः परमसंतोषरहिताः संतोषस्यलाभोज्ञानैकत्वेन,लभ्यत्वादित्यर्थः॥४३॥ भाषाटीका - कुबुद्धयः जेआत्मज्ञानकरि रहित अविद्याकरियुक्तहैते आत्मानंभावयंति·आत्माकोंयोंकरि विचारतिहैपरि जानंतिनः सत्यस्वरूपकों समुझतेनाहीं केसोविचारतुहै· शुद्धं· भाई आत्मातो शुद्धकहीयतुहै· अरुअव्ययं· उत्पत्तिविनाशादि समस्तउपाधितें रहितहै योंतोजानतेक्योंनाहीं· संमोहात्· यावत्जीवंजानंति·अविद्यातें योंजानतहैकि अबही आत्माजीवदशाकों प्राप्त भयोहै· जबजीवत्वछूटे तब वैसोहोइयों नाहींजाननेकि ऐसो कौन हैकि जो आत्माकों बांधै· अशुद्धकरै·जन्मादिकदेई· जीवकरै· बहुरिछोडावे· जोतूं हैएनाहीं· एकईश्वरप्रकाश आत्माईहै· योंनाहींजानते· ताहीतें अनिर्वृत्ताः परमदुःखनिविषें प्राप्तरहतहै इत्यादि॥४३॥ दोहा ॥ कहनमात्रसबकहतहै शुद्धातमअद्वैत॥ नहिंजाएतमहामोहतैं वयभरज्ञानरहीत॥४३॥ संस्कृतः इदमेवविशदयति॥४४॥ श्लोकः मुमुक्षोर्बुद्धि

रालंबमंतरेणनविद्यते॥ निरालंबैवनिःकामबुद्धि र्मुक्तस्यसर्वदा॥४४॥ टीका·-मुमुक्षोरिति·मुमुक्षोरनधिगतात्मसाक्षात्कारस्यबुद्धिः सविशेषालंबनमंतरेणनविद्यते साक्षात्काराभावात्· मुक्तस्यजीवन्मुक्तस्य अतएवमुक्तावपिनिःकामबुद्धिः सर्वदानिरालंबैवनिर्विशेषे आत्मानुभवरूपेव सविशेषादि परित्यागएवात्मानुभावः॥४४॥ भाषाटीका·-मुमुक्षोः बुद्धिः जामूर्खकों मोक्षकी वांछाहै ताकीजो बुद्धिसो आलंब अंतरेण नविद्यते आश्रयते कायविनु नाहीं मोक्ष अवलंबनविषें स्थितहै· मुक्तस्यबुद्धिः आत्मज्ञानीकीजो बुद्धिसो निरालंबी· एकाश्रय करि रहित निराधार आत्माविषेंस्थितहै· अरु निःकामा समस्तकामनानिकरि रहितहै· वाके मोक्षकी कामना· जो एकतें छूटैंतो एकविषें लगे· तातें उनकछू मोक्षस्यापि करि अपनो मन बुद्धिवामोक्षविषें थाप्योहै तातें आत्मस्वरूप क्यौंक्यो· करिसमुझे तोमन बुद्धि घरमें होइ इत्यादि॥४४॥ दोहा· आशकरतजो मोक्षकी ताकीआश्रितिबुद्धि॥ सदामुक्तकीबुद्धिमन रहितकामनाशुद्धि॥४४॥ संस्कृत· निरोधोपि विषयस्फूर्तिचकितैरेवानुष्ठीयते ननुविज्ञेरित्याह॥४५॥ श्लोक विषयद्वीपिनोवीक्ष्यचकिताः शरणार्थिनः॥ विशंतिझटितिक्रोडंनिरोधैकाग्र्यसिद्धये॥४५॥ टीका-विषयेति विषयद्वीपिनो विषयव्याघ्रान्वीक्ष्य· शार्दूलद्वीपिनौव्याघ्रइत्यमरः भीताः शरणार्थिनः स्वात्मरक्षार्थिनो मूढाएवनिरोधसिद्धये एकलक्ष्यवृत्तिसिद्धयेवाझटिति शीघ्रंक्रोडं कंदरांतः प्रवेशंविशंति नतुज्ञानिनइत्यर्थः

॥४५॥ भाषाटीका. - एकाग्रसिद्ध्ये निरोध्यः सं
सारतें छूटिवेकों ईश्वरहूकेंमिलिवेकों समस्तको त्यागक-
रि निकासि निर्जन देशविषें जाइरहैहैं· अरु विषयो द्वीपिनः
विषयवासनाजे इंद्रियनिके अर्थ तिनिकों वारंवार मनवि·
षें आनतें जातहैं·प्रियबुद्धि राषतेहैं· ऐसेप्राणीनकों वीक्ष्य
ज्ञानवंतं पुरुषदेषिकरि· चकिताः भयकंपपरम आश्चर्य-
करियुक्तव्हेकरि· शरणार्थिनः ऊटिनिक्रोडं विंशति· हे ई·
श्वर हेप्रभो ऐसेप्राणीननें राषो इत्यादिक वचन आर्तिस-
हित कहिकहि गोविंदविषें ज्यों बालकहू भयमानिकरि-
माताके गोदविषें प्रविष्ट होई· और दूजो निर्भयस्थल कहूं न
देषे त्यों ईश्वर विषें प्रविष्ट व्हेकरि निकसितें नाहीं ·ऊटिनि·
वेगोत्तर दौरिकरि शरणहीजातहै इत्यादि ॥४५॥ ॥
दोहा· विषयसिंहकोंदेखिकें चकितभयेशरणार्थ॥
जरुदीपैठगुफाहमें करतसिद्धिपरमार्थ॥ ४५॥ सं
स्कृत· वासनात्यागएवविषयभयनिवृत्तिहेतुरित्या
ह॥४६॥ श्लोक· निर्वासनंहरिंदृष्ट्वातूष्णीं
विषयदंतिनः ॥पलायंतेनशक्तास्तेसेवंतेकृतचाट
वः॥४६॥ टीका· - निर्वासनेति निर्वासनोयः पुरु·
षस्तल्लक्षणंहरिंसिंहंदृष्ट्वा विषयदंतिनो नशक्ताःसंतस्तूष्णीं
मौनंयथास्यात्तथा पलायंते कृतचाटवः कृतप्रियवचनाइव
तंनिर्वासनं ईश्वर दृष्ट्वा स्वयमागत्यसेवंत इत्यर्थः ॥४६॥ ॥
भाषाटीका· - हरिंदृष्ट्वा स्मरणमात्रत्रिगुणमय संसा
रपरम दुःखनिवारण आत्मस्वरूपदायक ऐसे ईश्वरकों दे-
षिकरि· कैसेईश्वर·निर्वासनं जहांलौं त्रिगुणमयस्थूलसू
क्ष्म वासना तिनतें दूरि तिनकों देषिकरि अरु तत विषयदं·

काहूसेवा करि भोग सामग्री मांगीहैं· ताकौं अतिविस्तार· सों देषहै· ऐसे देषिकरि तूष्णीं पलायंते मुखमूंदि अन बोले भागि पाछे दोरतहै तो मुखमूंदि क्यों भागतहैं· यतः नसक्ताः· जातें एसमर्थ नाही· ईश्वरको निवारिसकैं नाहीं· तातें कहाकरै· अरुजो कदाचित कहैकि जानौ समर्थतो नाहीं परि तिनके सेवकतौहै· जो एविनतीकरि कहैंकि हेनाथ, यापरम दुःखमय संसारतें छूटिवेकों कछू उपाय नाहीं केवलजो तुमहू छोडहुतौ छूटै तातें प्रभुजी जो तुमही इनकों विषय· भोग सामग्री देत हौं· इनकौं छूटिवौ कहा· कौतो· इत्यादिक वचन कहेते कहा· ईश्वर उनहूकों छोरिलेहि नाहीं· ईश्वर· तो यों कहतहैकि कदाचित आपनो वचन मेटौं· परि भक्तको वचन मेटौं·नाही· अरु एसाधु दयाल उनकों दुःख समूहविषैं प्राप्त होते देषइ· तो वीनती क्यों करहिं तो साचु यह योंहीहैं· परिए सेवक कैसेहैं· कृत्यचाटवंसेवंते· ईश्वरसोंजो वीनतीकरै सो ईश्वरको कस्यो इनकौं कहानाहीं भावतु· जोईश्वर के करत व्यकों निषिद्ध जानि आपनो मत्तो ठहरावै तो सेवक काहेके· तातें इनकों सोई भावतुहै· जो कछु ईश्वर करै· ज्यों पतिव्रता स्त्री सों पुरुष कहैंकि तोहिसों कौनभांति राषियै· तो यह कहैंकि· ज्यों तुमहि भावे· बहुरि पुरुष पूंछेकि तो· हि प्रियकहा· आपनो प्रिय कहू· हम सोई करें· तो वह कहै कि मेरोप्रिय सोईजो कछु तुम करौ· तातें· एतो आपनो तन मन ईश्वरको अर्पि रहेहैं कहाकरैं· अरु कहा ईश्वर सों विनतीकरैं· जातें देषतु कौन वस्तु आपकों किंवा और काहूको अर्थ धर्म काम मोक्षादिक किंवा नरकादिकनितें निवृत्तहै चो कदाचित मति वांछहि· ईश्वरको कस्यो सोई केवल उत्तम

प्रियकरि जानतुम समस्त चिंत वनतें रहित हो इत्यादि ॥४६॥ दोहा· निर्वासनसिंह देषिकें स्वस्थविषयसब· दंति ॥ ह्वैंअशक्तदोरतपुनी मधुरवचनसेवंति ॥ ४६॥ ॥ संस्कृत· श्लोक· नमुक्तिकारिकांधत्तेनिःशंकोयुक्तमानसः॥ पश्यन्श्टएवन्स्पृशन्जिघ्रन्नश्नन्नास्तेयथासुखम् ॥४७॥ टीका· - नमुक्तीति निःशंकोगतसंशयः अतएवमुक्तमानसः निश्चलमानसः ज्ञानीमुक्तिकारिकांयमनियमादिक्रियामाग्रहान्नधत्ते किंतर्हि कर्तृत्वाध्यासरहितत्वाद्यथासुख मात्मसुख मनतिक्रम्य लोकदृष्ट्यावीक्षणादिक्रियाः कुर्वन्नास्त इत्यर्थः ॥४७॥ भाषाटीका· - युक्तमानसः आत्माकों पाइकरि स्थिरभयोहै मनजाको ऐसो महापुरुषः मुक्तिकारिकांनधत्ते· कबहूयों नाही कहतुकि भाई यह वस्तु छोडु· यातें मोंकौं बंधनहैं· कियहग्रहों यातें मुक्तिहैं· कियह करों यहनकरौं सोकाहेतें· निःसंकः बंधिवो छूटिवो जन्ममरणादिक· समस्त अज्ञानतें कहि लियेहैं· आत्मा अजन्मा अविनाशी अद्वैतजो दूजो हैयेनाहीं तौ बाधिवो छूटिवो क्यौं संभवै· योंजानिकरि समस्ततें निर्भय भयोहैं तातैं करैसो कहा· करै· तौचतैं कौनभांति · पश्यन् कछूदेषिवेकौं आइपरैतौ देषै· श्टएवन्· कछूसुनिवेकौं आइपरै तोसुनै· स्पृशन् उत्तमवस्त्रादिक आइवनैतो पहिरै· किंवा सीतल आदिकनिकों सेवै· जिघ्रन् उत्तम सुगंधादिक आइप्राप्त होहितो आघ्राणलेई· अश्नन् उत्तम भोजनादिक आइबनैतो भोजन करै· इत्यादिक व्यवहार ज्यौं प्रकृती मनुष्य आचरे सौंही आचरते संते यथासुखं आस्ते· यहजो परम सुखरूपभ

योहै तातेंजोई आचरै सोईसुखमय· तातें साधके कछू कर्मादिक मतिदेखै· केवल आशय देष·इत्यादि॥ ४७॥ ॥

दोहा· मुक्तिकारिकानहिंधरत जोनिशंकमनहोय ॥पंचविषयकरतेसतै दैवदेहसुखजोय॥ ४७॥ ॥

संस्कृत· श्लोक· वस्तुश्रवणमात्रेणशुद्धबुद्धिनिराकुलः ॥ नैवाचारमनाचारमौदास्यवाप्रपश्यति॥ ४८॥ टीका· - वस्त्विति वस्तुनश्चिदात्मनः श्रवणमात्रेण जाताया शुद्धबुद्धिः अखंडात्मसाक्षात्कारस्ततोनिराकुलः स्वस्वरूपस्थः पुरुषः आचारं· क्रियानुष्ठानं अनाचारंनैष्कर्म्यं उभयत्रापि ताद्दश्यंवा एतत्रयमपिनैव पश्यति आत्मस्थत्वादित्यर्थः ॥ ४८॥ ॥

भाषाटीका· - यस्तु जोपुरुष श्रवणमात्रेणनिराकुलः श्रीगुरुके मुखतें तत्वज्ञानसुनतही मात्र समस्त कर्म भ्रमादिकनितें निवृत्त व्हैकरि निर्भय व्हैकरि स्थिरचित्त भयो है· सोकाहेतें· शुद्धबुद्धिः राजस तामस करि रहितहै बुद्धिजाकी तातें यह ऐसोभयो परि गुरुको परम उपदेश उत्तम सबनिको एकईरूपतो ऐसोपुरुष नैव आचार प्रपश्यति· नतोकछू यों देषैकिभाईया आचरणतेंम निर्बंध होतूंहो यह करौं अनाचारंन नयोंकछू देषैकि यह निषिद्धहै नकरों औदास्यं वानैव नयों जानैकि भाईविरक्तव्है करिसकलसामग्रीतें निवर्तहूं·जोयेवह महापुरुष केवल एक अद्वैतईश्वरकी दृष्टि आनि सदा सुखमय विराजै· इत्यादिक तातेंज्योंमै तोसों कहतहों त्यों एकईश्वरकी दृष्टि आनिकरिसमस्त शुभाशुभ आचरण मिथ्याजानि स्थिरचित्तव्हैकरि जबही स्थित होहि तबही ईश्वरको प्राप्त होहि आजु तो·

आजु अरु कोटि कल्पांतरतौं इति ॥४८॥ दोहा॰
श्रवणमात्रनिजब्रह्मकौं बुद्धिनिराकुलकार॥ अनाचारत्रौ
दास्यअरु नहिंदेखन आचार॥४८॥ संस्कृत॰ ॥
श्लोक॰ यदायत्कर्त्तुमायाति तदातत्कुरुतेऋ
जुः॥ शुभंवाप्यशुभंवापितस्यचेष्टाहिबालवत्
॥४९॥ टीका॰- यदेति यदायत् शुभंनैष्कर्म्यंवा-
अशुभंकर्मवाकर्त्तुमायाति तल्लोकदृष्ट्याप्रारब्धवशात्कु
रुतेऋजुराग्रहरहितः हियतः कारणात्तस्यचेष्टाबालवत्
प्रारब्धमात्रायत्तोरागद्वेषानधीनः॥४९॥ भाषाटी
का॰ - यः जोकहै आत्मज्ञानी यदायत्कर्त्तु आयाति जब
ही जोकोनों देहाचरण करिवेकौं आईप्राप्तहोई॰ तदात
त्कुरुते॰ तबही सोईकरे॰ वांछा अवांछा करिरहित॰ शु॰
भंवापि अशुभंवापि॰ नकौजानेकि यहउत्तमहै॰ करोंकि
यह॰ अनुत्तमहैनकरों॰हिनिश्चयकरि तस्यचेष्टा बालव॰
त्॰ ताकेसमस्त आचरण बालककेसमान जानिये ज्यौं
बालक वांछा अवांछाकरिरहित विधिनिषेध॰ मित्रामित्र
करिरहित एकमाताविषै आसक्तचित्त सदासुखमयवि
राजतुहै॰ तातेंयो होइत्यादि॥४९॥ दोहा॰ जोक
रनेकोहोतजो करतआग्रहहीन॥ होतशुभाशुभचेसटा
ज्यौंबालकपरवीन॥४९॥ संस्कृत॰ श्लोक॰
स्वातंत्र्यात्सुखमाप्नोतिस्वातंत्र्याल्लभतेपरम्॥
स्वातंत्र्यान्निर्वृतिंगच्छेत्स्वातंत्र्यात्परमंपदम्॥
५०॥ टीका॰ - स्वातंत्र्यादिति स्वातंत्र्याद्रागद्वे
षानधीनत्वात्सुखंमनः प्रसादंआप्नोति यतः स्वातंत्र्या
त्परंज्ञानं आप्नोति तथा स्वातंत्र्यान्निर्वृतिं नित्यसुखंगच्छे

तू प्राप्नुयात्· अतएव स्वातंत्र्यात्परमं पदं स्वरूपविश्रां तिं गच्छेत्॥५०॥ भाषाटीका· – देषरे पुत्र· प्रथमतो अज्ञानतें यह प्राणी परवस रहतुहै कि यातें मेरो भरण पोषण होतुहै· यों नाहीं जानतु कि भाई गर्भमों मैं· कौन उद्यम कस्यो· अरु कहा माता कस्यो· तातें जीविका तो साथही रची है· यह नाहीं जानते· वृथा ही परबस व्है रहतहै· तिनको कहांको सुख· तातें जब यों जानिकरि स्वातंत्र होई· समस्ततें निरपेक्ष होई· तबजो कछु उद्यम करैसो सिद्ध होइ· तातें यों जानिकरि स्वतंत्र हो· सबतें निरपेक्ष· हो अरु देष स्वातंत्र्यां न्निर्वृतिं लभेत्·जो कोउ निवृतभयासो स्वतंत्र व्हैकरि भयो परतंत्र भये कोउ निवृत्त नाहीं भयो· अरु स्वातंत्र्यात्परमं पदम् स्वतंत्रई भयेतें परम पद ईश्वरकों समुझै अरु स्वातंत्र्यात्सुखं आप्नोति· जबही समस्ततें निरपेक्ष व्हैकरि स्वातंत्र होताही क्षण महा सुखकों पावै अरु स्वातंत्र्यात्परं लभेत्· स्वतंत्र भयेतें परमसुखरूप जे ईश्वर तिनकों प्राप्त होइ· ईश्वर स्वतंत्र्य· यह परतंत्र तो क्यों करि मिलै तातें स्वतंत्र हो इत्यादि॥५०॥ ॥

दोहा· निर्वृति मिलत स्वातंत्रतें फेर परमपद ज्ञान॥ सुख प्रापति स्वातंत्रते व्है स्वतंत्र तें ज्ञान॥ ५०॥

सूंस्कृत· श्लोक· अकर्तृत्वमभोक्तृत्वं स्वात्मनो मन्यते यदा॥ तदा क्षीणा भवंत्येव समस्ताश्चित्तवृत्तयः॥५१॥ टीका· – अकर्तृत्वमिति यदा स्वात्मनः अकर्तृत्वं मन्यते अभोक्तृत्वं च मन्यते तदा समस्ताश्चित्तवृत्तयः क्षीणा भवंत्येव अमुकं कर्माहं करिष्यामि अमुकं भोग्यं भवत्वित्यादि चित्तवृत्त्युदये तज्जन्यानामन्या-

सामपिचित्तवृत्तीनामनुदयादित्यर्थः ॥५१॥ भाषा टीका - देषरेपुत्र, जौलगिज्ञानोत्पत्ति विनाइनई आत्मा कौं कर्ता अरु भोक्ता करिजानतु है तौलगि याकी सकामका मिटैनाहीं. अरुजो कदाचित कामनादुःखको मूल कन करिस्थिरव्है बैठरहै कछू कामना नकरै परि परदेवतासिद्ध्यादिक जब आइ प्राप्त होइ तब ललचाइकरि अंगीकार करै तातें यदा. जबज्ञानोत्पत्ति भयेतें आत्मनः अकर्तृत्वं अभोक्तृत्वंमन्यते. आत्माकौं अकर्त्ता अभोक्ता स्वतः सुखमय. अनिच्छ निर्लेप सर्वातीत करिजानै निश्चय आवै. तदातबही सकामाश्चित्त वृत्तयः क्षीणाभवंति. समस्त कामनाकरि सहितजो है चित्त सो सकलसों न्यारोव्है करि निर्लेप निर्मल होई. अनेक सिद्ध्यादिक त्रिभुवनके सुखनिकों कदाचित देषैनाहीं. तातें आत्माकों. अकर्त्ता अभोक्ता अनिच्छ अक्षयानंदमयजानिकरि समस्ततें न्यारोहो इत्यादि ॥५१॥ दोहा. नहिंकर्त्तानहिंभोगता आतमकौंयौंमान॥ मनकीवृत्त्यांक्षीणसब तबहीहोतनिदान ॥५१॥ संस्कृत. श्लोक.

॥ उच्छृंखलाप्यकृतिका स्थितिर्धीरस्यराजते॥ न तु सस्पृहचित्तस्य शांतिर्मूर्खस्य कृत्रिमा ॥५२॥

टीका. - उच्छृंखलेति धीरस्य वीतस्पृहस्य अकृतिका अकृत्रिमां उच्छृंखलापि शांतिरहितापि स्थितिः शोभते. सस्पृहचित्तस्य मूढस्यतु कृत्रिमाशांतिर्नशोभत इत्यर्थः ॥५२॥ भाषाटीका. - हेपुत्रदेष. धिरस्य स्थितिः राजते. आत्मज्ञानीजोमहापुरुष ताकीस्थिति सर्वोपरि बिराजति है. जोअनेक कर्मउकरतुहै नकौनहू वस्तुतें

विरक्तन कौनहू वस्तुते अनुरक्त· नकछू शुभजाने नअशु भजानें ज्यौंहीज्यौं आइपरें· त्यौंहीत्यौं आचरें· कछुसमु झैनाहीं· तौऐसेको कर्माचरणऊ विराजें· सौं काहेतें· उच्छं खलायाकृतिका· महाप्रबल वैरीजे समस्त वासना ति· निकरि रहितहैं· तातें मूढस्य शांतिर्नराजते· आत्मज्ञान करि रहितजो मूर्ख सो यद्यपि समस्तको त्यागकरि स्थिरता गहि शांतव्हैकरि बैठोहे· तोहू नकदाचित शांतहोई· अरु न· कहूं शोभापावे· सो काहेतें संस्पृह चित्तस्य· चित्तविषेंकों नहू अर्थ धर्म काम मोक्षादिक वस्तुकी वांछाहै· तातें तो जौकहै कि तुमजो कह्योकि समस्त छोडिकरि शांत व्है बैठे हें तोजों वांछाहै तौ छोड्यो कहा· अरु शांतव्है क्यों बैठो· जहां वांछा तहां शांति कैसी· तो सांचयह योंही है· परि कृत्रि· मा· स्थूल सामग्री त्यागकरि शांतसों स्थिर सोकर्म इंद्रिय· निसों षैंचिकरि बैठोहै· इत्यादि· ॥ ५२॥ दोहा· ॥ शोभितज्ञानी पुरुषकों चलत शुभाशुभचाल॥ तृष्णायुत महामूढकों नहिंशोभितशुभहाल॥ ५२॥ संस्कृत ॥ निरस्तकल्पनानांज्ञानिनांतु भोग तच्छांत्योरप्यन्नाग्र हइत्याह॥ ५३॥ श्लोक· विलसंतिमहाभो· गैर्विशंतिगिरिगव्हरान्॥ निरस्तकल्पनाधीराअ बद्धामुक्तबुद्धयः ॥५३॥ टीका· विलसंती ति· कदाचित्प्रारब्धवशान्महाभोगैर्विलसंति क्रीडंतिक दाचित्प्रारब्धवशाद्गिरिगव्हरान् पर्वत वनानि विशंतिकी दृशाअबद्धाः आसक्तिरहिताः यतोमुक्तबुद्धयः कर्तृत्वा ऽध्यासरहित बुद्धय इत्यर्थः निरस्त वासना धीराज्ञानिनः ॥५३॥ भाषाटीका· – हेशिष्य निरस्तकल्पना धीराः

ज्ञाज्ञानीपुरुषनकी वासना दूरिभईहै ने विलसंति महाभोगैः कोईसमयविषै प्रारब्धजोगतैं नानाप्रकारके सुख भोगादिक भोगतहैं कोई समय विषै प्रारब्ध भोगतैं विशंतिः गिरिगह्वरान् पर्वतविषैं गुहाविषै बन महाबनविषैं प्रवेश होत हैं परिकैशेहैं अबन्धाः अशक्ति अनाशक्तितें रहित हैं जातैं युक्तबुद्धयः कर्त्ता अकर्त्ता बुद्धितें रहित हे इति॥ ५३॥ दोहा कबहुकविलसति सकल सुख कबहुकगुफाप्रवेश॥ दोउसमकरिकल्पनतजी तज्योशुभाशुभदेश॥ ५३॥ संस्कृत श्लोक श्रोत्रियंदेवतांतीर्थमंगनांभूपतिंप्रियम्॥ दृष्ट्वासंपूज्यधीरस्य नक्कापिहृदिवासना॥ ५४॥ टीका - श्रोत्रियमिति धीरस्यज्ञानिनः श्रोत्रियंदेवतांतीर्थं पूजनेसति हृदि क्कापिवासना धर्मार्थकामवासना कापि नजायते अंगनांभूपतिंप्रियं पुत्रादिकंच दृष्ट्वा कापि काम्य पदार्थवासना नजायते सर्वत्रसमत्वादित्यर्थः॥ ५४॥ भाषाटीका - श्रोत्रियं परम वेदस्मृति यमनियम शम दमादि करि युक्तजो ब्राह्मण अरु देवता इंद्रादिकजे देवता समस्त वरके देन हारे अरु तीर्थ गंगादि समस्त तीर्थ अति पवित्र के करनि हारे अरु अंगनां रंभादिकजेस्त्री अत्यंत चित्तकी आकर्षनहारी अरु भूपति समस्त भूमिको अधिष्ठाताजो राजा अनेक सुखनिकरि संयुक्त अरु प्रियं मूर्तिवंत लक्ष्मी अनेक देवतादिकनिहू लोकनि करि उपासनीय इत्यादिक समस्त आइ प्राप्त भयेहैं एकएककौं वा मिलिकरि एकत्रही तिनिकौं दृष्ट्वा देषिकरि अरु संपूज्य सबनिकौ सन्मानकरै ताहू नकापि हृदि वासना हृदयविषै कोनऊ भेदाभेद शुभाशुभ इच्छाभ

निच्छा· अनरक्ति विरक्ति प्रियता अप्रियता· आपको कछु-
धन्यता· श्रेष्ठता इत्यादिक कोनऊ वासना नप्राप्त होई· इत्या·
दि ॥५४॥ दोहा· तीरथद्विजनिजदेवकों पूजत-
कछूनकाम नृपस्त्रीस्कृतमैधीरकों नहीवासनादास ॥५४
॥ संस्कृत· श्लोक· भृत्यैः पुत्रैः कलत्रैश्च
दुर्वृत्तै श्चापिगोत्रजैः ॥विहस्य धिःकृतोयोगीन-
यातिविकृतिंमनाक्॥ ५५॥ टीका· - भृत्यैरिति
भृत्यादिभिर्विहस्यउपहस्यधिः कृतस्तिरस्कृतो योगीमनाक्
किंचिदपिविकृति चित्तक्षोभंनयाति· रागद्वेषहेतोर्मोहस्या
भावादित्यर्थः ॥५५॥ भाषाटीका· - योगी आत्म
ज्ञानीजोपुरुष सो विहस्यधीः कृतोपिवारंवार हसिहसि ज-
द्यपिधिक्कारियतुहै· तथापि विकृतिं समावाक् नयाति· ले·
शमात्र याके मनविषें· कछु हीनता नआवैतो किन करिधिक्का
रिये· भृत्यैः ऐसो अधिकारी हुतोजो अनेक सेवक हुते· ब-
हुरि ज्ञानोत्पत्तितें समस्त को त्यागकरि मिथ्याजानि नगर व
नादिक एकजानि समस्त व्यवहारचेष्टातें रहित भयो· देहा
दिक संस्कारतें रहित भयो तातें ताको बावरोजानि आइस
मस्त सेवक वारंवार याके आगे हंसि हंसि अनेक भांतिनक
रिधिक्कारें· अरु पुत्रैः आपुहीते उपजेहैं जे पुत्र तेऊ अनेक
भांत्ति हसि हंसि धिक्काररहि अरु कलत्रैश्च औरकी कहा·
आपनी स्त्रीजेहैं अरुचेरीजेहे तिन करि अरु दुर्बलैः द्रव्य·
पराक्रमादिकनिकरि रहित अतिहीनदीन ऐसेजे प्राणी -
अरु गोत्रजैः आपने गोत्रीजे समस्त तिनहूं करि इत्यादि·
क अरुहू अनेकनि करि सो काहेतें जाते· जे कछु निंदादिक
ने समस्त देहके तातें देहसों कहू स्पर्शनाहीं· न्यारो है तातें

क्यों कछु व्यापै· तातें समस्त व्यवहार देहके जान तूं आप कों देहादिक समस्त तें न्यारो जानि सुखी हो इति ॥ ५५ ॥ दोहा· दुष्ट मृत्य सुत गोत्र सब हसि हसि दे धिक्कार ॥ निर्मोही महापुरुषके मनकों नाहि विकार ॥ ५५ ॥ ॥ संस्कृत· श्लोक· संतुष्टोपि न संतुष्टः खिन्नोपि न च खिद्यते ॥ तस्याश्चर्यदशां तां तां तादृशा एव जानते ॥ ५६ ॥ टीका· – संतुष्ट इति लोक दृष्ट्या संतोषादियुक्तोपि वस्तुतस्तद्रहितः तस्य ज्ञानिनस्तां तामाश्चर्यदशां तादृशा एव ज्ञानिन एव जानते ॥ ५६ ॥ भाषाटीका· – संतुष्टः सदा अक्षय सुखविषै मग्न एकरस· परम संतुष्ट है· अरु न संतुष्टः अनेक भांति स्नान सुगंध वस्त्राभरण भोजन स्त्र्यादिकनि करि कदाचित न संतुष्ट होई· अरु खिन्नोपि न च खिद्यते· अज्ञानी लोगनि करि अनेक भांति दुःख दीजियतु है· परि कदाचित जानतेही नाही अरु कौनऊ जन्ममरणादिक अध्यात्मिक अधिभौतिक अधिदैवक समस्त दुःखनि करि कछू लेशमात्र दुःखित नाहीं तातें तस्य आश्चर्य दृशास्तास्ताः ता महापुरुषकी तिहुलोक कों परम आश्चर्य रूप जे दशा तिहुई तादृशा एव जानते· जे कोऊ ताहीके समान महापुरुष हैं· केवल तेई जाने इत्यादि ॥ ५६ ॥ दोहा· संतोषी नहि तोषज्यूं· खेदी खेद न होय ॥ जाकी जस जस जो दशा वैसा जानत कोय ॥ ५६ ॥ संस्कृत श्लोक· कर्त्तव्यतैव संसारो न तां पश्यंति सूरयः ॥ शून्याकारा निराकारा निर्विकारा निरामयाः ॥ ५७ ॥ टीका· – कर्त्तव्यतैवेति कर्तव्यतैवमभेदं कर्तव्यमिति कार्य संकल्प एव सं·

सारस्तद्धेतुत्वात्सूरयोज्ञानिनस्तां कर्तव्यतां नपश्यंतिन क ल्पयंति संकल्पमात्ररहितत्वात् कीदृशाः सूरयः शून्येस र्वकार्यक्षये तथावर्तमान घटाद्याकारे अव्याकृतेनिर्विका राः समात्मदर्शिनः अतएवनिरामयाः संकल्पविकल्परहि ताइत्यर्थः ॥ ५७ ॥ भाषाटीका· – संसार कर्तव्य· तांएव· भाई यह मोहि कर्तव्यहै· यह नाहीं कर्तव्य· यातें मो कों पुण्य है· यातें पाप है· यातें सुख है· यातें दुःख है· इत्या- दिकजे कर्तव्यता· सोई संसार तातें सूरयः तांनपश्यंति· आत्मज्ञानीजे महापुरुष ते आत्माकों कछू कर्तव्यता देष तेईनाहीं· अकर्त्ता अभोक्ता अजन्मा अविनाशी अपार अनंत अखंडित· अनीह· आनंदमय ऐसो आत्मा· देषतुहैं हैंकैसे· शून्याकारः ब्रह्मही कों लीये हैं· समस्त चेष्टा जिनकी अरु निराकाराः समस्तसंसारकी शुभाशुभ चेष्टानिकरि रहितहैं· बहुरि कैसे हैं· निर्विकाराः काम क्रोध· लोभ मो· ह· मद मत्सर इत्यादिकजे समस्त शुभाशुभ मनके वि- कार वासना तिन सबनितें रहितहैं· अरु निरामयाः· महा दुर्निवार देववैद्यादिकनिहुं लोकनिकोजन्मजन्म मारनिहा रे ऐसेजे कर्म रोग तिन करि रहितहैं इति ॥ ५७ ॥ दो हा· कर्तबसोइ संसारज्यों सूरनदेखततांहि ॥ सबसं कल्परहितहै शून्यरूपकेमांहि ॥ ५७ ॥ ग्रं· संस्कृत· श्लोक· अकुर्वन्नपिसंक्षोभाद्व्यग्रः सर्वत्रमू ढधीः ॥ कुर्वन्नपितुकृत्यानि कुशलोहिनिराकु लः ॥ ५८ ॥ टीका· – अकुर्वन्नपीति अकुर्वन्न पिमूढधीः सर्वत्र शून्याकार निराकारेषु संक्षोभात्संक ल्पाद्व्यग्रोभवति लोकदृष्ट्या कृत्यानि कुर्वन्नपि कुशलो

निराकाराः अतएव

विद्वान्हिनिश्चितं निराकुलोनिश्चलचित्तः आत्मारामत्वा-
त् ॥५८॥ भाषाटीका - मूढधीः आत्मज्ञान करि
रहितजोहैमूर्ष सो अकुर्वन्नपि आपकों केवल कर्मई बं-
धनरूनिकरि समस्त छोडिबैगेहै तोहू संक्षोभात्सर्वत्र-
व्ययः भाई एकर्म मेंछोडे एहै मोकों कैसे ह्वैहैं वेदस्मृ
ति शास्त्रादिकनिविषेंतो कर्मई प्रधान सुखदुःखनिके
देनहार कहीयतुहैं पुण्यकर्मतें सुख पापकर्मतें दुःख
अरु जोकर्म छोडिदीजे तो अकर्म कहीये तातें थोरे क-
र्मनितें बेगेही जन्ममरण होतजाहि बहुतदिनजीवेऊ
नकरिये इत्यादिक संदेह अरुत्योंही सूक्ष्मकर्म वास
ना तिनकरि युक्तहै तो विनुकरेंही वहकर्म बिस्तार करि-
युक्तहै समस्त कर्मनि करि बांधियतुहै कुशल आत्म-
ज्ञानीजो महापुरुष सो कृत्यानि कुर्वन्नपि ज्योंही ज्यों-
आइ परे त्यौंहीत्यों अनेक कर्मकरतें हूसंते निराकुलः
निर्लेपरहै आपको कदाचित कर्मकरि देषैनाहीं देह-
कों कर्ता देषें तानें येंजानि यथासुख विषें वर्तु इत्यादि
॥५८॥ दोहा अकरतसंतेज्ञुक्षोभतें व्यग्रमू
ढकों होय॥ करतसंतमहापुरुषकों कृत्यलेपनहि को
य॥५८॥ संस्कृत श्लोक सुखमास्ते
सुखंशेते सुखमायातियातिच॥ सुखंवक्ति सु
खंभुंक्ते व्यवहारेपिशांतधीः॥ ५९॥ टीका -
सुखमिति प्राक्तनदशाह्यवहारेपि जायमाने शांतधीरा
त्मनिष्ठ बुद्धिर्विद्वान् आत्मसुखमनातिक्रम्यैवास्ते उप
विशति शेते आगच्छति वक्ति भुंक्ते सर्वेंद्रिय व्यापारंक
रोतीत्यर्थः॥५९॥ भाषाटीका - शांतधीः इश्वर

कों जानि करि विश्रामही प्राप्त भयोहै· मन बुद्धि जाकी ऐसो महापुरुष· व्यवहारेपि देह इंद्रिय व्यवहार हूविषें सुखं आस्ते· सुखमय ई वर्त्ततु है· कौन भांति सुखशेते· जो बैठोहै सो तोहैं तो आत्मविश्राम सुखविषेंहै· अरु सुखं आयाति यातिच कहूं आवतुहै जातुहै तोहूं आत्मविश्राम सुखविषेंहै· सुखं वक्ति· जो बोलतुहै देषतुहै सुनतहै· ओरऊ नाना प्रकारके कर्म करतुहै तोहू आत्मसुखतें कदाचित निवर्त नाहीहोत· इंद्रियनिकों कर्मकरवावत ऊसंतें परम सुख विषें प्राप्त है· तातें जोकौन हू देहनिमित्त कर्मऊ करहि तौहू मन एक ईश्वर विषें राष· आत्माकों अकर्त्ता अभोक्ता जान इत्यादि॥ ५९॥ दोहा· सुखमय सोवत सुखलहै सुखमय आवत जात ॥ शांत धीर व्यवहारमैं सुख बोलत सुखखात॥ ५९॥

संस्कृत· ननुज्ञानिनोपिव्यवहारेषु कथंनखेदः इत्यत आह॥ ६०॥ श्लोक· स्वभावाद्यस्यनैवार्त्तिर्लोकवद्व्यवहारिणः ॥ महान्हृदइवाक्षोभ्यो गतक्लेशः सुशोभते॥ ६०॥ टीका· - स्वभावादिति व्यवहारिणोपियस्य ज्ञानिनः लोकवत् प्राकृतजनवत् आर्तिः खेदो नजायते कुतः स्वभावात्साक्षात्कृतानंदस्य स्वभावात्सामर्थ्यादित्यर्थः सगतक्लेशोज्ञानी महान्हृदइवाक्षोभ्यो निर्विकारः सुशोभते ॥ ६०॥ भाषाटीका· — स्वभावात् यस्यनैवार्त्तिः आत्मज्ञानतें जाके मनकी समस्त आर्त्ति मिटिकरि शीतल स्वभाव भयोहै· विश्रामविषें स्थिर· भयोहै· अरु लोकवद्व्यवहारिणः ज्यों ओर आकृती - लोकसंसार व्यवहार करी ताही भांति करते वहऊ देषीय-

तुहै परिहैकैसो· अक्षोभ्यः नानाप्रकारके व्यवहार कर- तेसंते कहूमनमें क्षोभ नाहींउपजतु· कार्य अकार्य शुभा शुभ सुख दुःखादि कनि करि जाके कहूं लेशमात्र क्षोभना हीं, तो कोनभांति· महाह्रद इवज्यौं अति औंडेदहविषैंअ नेक प्रबल नानाप्रकारके मत्स्य मकर नक्रादिकहै अरुवै समस्तमिलिकै अनेक भांति नचंचलता करैं· देहकों क्षो भही प्राप्त कर्यो चाहै· परिताकौं रुछोही क्षोभ होइ स- दाएक रसही त्यौंही बहुरि कैसो· गतक्लेशः जहांलों कछू क्लेशहै· ते सकल इंद्रियनके बसभयेतें हैं· तातें यह सम- स्त क्लेशनितें न्यारो· परम सुखविषें मग्न· सुशोभते· जहां लों शोभावंत प्रतापवंत ब्रह्मादिक चंद्रसूर्यादिकनिकेऊ परिविराजतुहै· इत्यादि तातें साधुकै कर्मनिकी ओरमति देषही· केवल आशय देष· इति· ॥ ६०॥ दोहा· क रतकर्म लोकीकज्यौं नहिस्वभावतें खेद॥ नहीक्षोभज्याधी रकौं ज्यौंसमुद्रसस्यद ॥ ६०॥ संस्कृत· श्लोक ॥ निवृत्तिरपिमूढस्य प्रवृत्तिरभिजायते॥ प्रवृत्ति रपिधीरस्य निवृत्तिफल भागिनी॥ ६१॥ टी- का· - निवृत्तिरिति लोकदृष्ट्या प्रतीयमानापि मूढस्य बा ह्येंद्रिय व्यापाराणांनिवृत्तिः प्रवृत्तिस्वरूपैव जायते· अहं कारादीनामनिवृत्तत्वात् धीरस्यज्ञानिनः लोकदृष्ट्या प्रा रब्धवशात्प्रतीय मानापि प्रवृत्तिरपि निवृत्तिफलभागिनी मुक्तिपर्यवसायिनी स्यादहंकाराभिमानाभावादित्यर्थः॥ ६१॥ भाषाटीका· - मूढस्य आत्मज्ञान करिर हितजोमूर्ख ताकों निवृत्तिरपि प्रवृत्ति फलदायिनी· भाग वतादिकजे निवृत्तिग्रंथ तेऊजो सुनहि तोऊ कथामात्रजा

नि कर्मादिक तिही विषे प्राप्त होहिं· प्रथम तो निषेध छो·
डाये· विधि ग्रह्ण वाये· उत्तम कहि सुनाये· आगें विधिनिषे·
ध दोऊ समान देषाइ करि दोऊ छोडाइ तत्वसों दृष्टि कीजै
एतन्निमित्तजे कोनऊ सात्विक कर्म थापेहै तिनिकर्म ति·
हिंविषें रहित होहि· तत्वसों परिचय नाहीं अरुजो विज्ञान
मय वचन सुनेतो विधिनिषेध समानजानि करि निषेधनि
हीको आचरण करे· अरुजो भागवतादिक सुने· साधुसे
वैतो कामनामांगै इत्यादिक औरऊ धीरस्य जो आत्म-
ज्ञानी महापुरुषहै· ताकों प्रवृत्तिरपि निवृत्ति उपजायते·
समस्त विस्तारजोहै सोउ निवृत्तिरूपहोइ कौन भांतिजो
शृंगार वीर करुणा अद्भुत· हास्य· भयानक· विभत्स· रौद्र
शांत· इति नवरस इत्यादिक नवरसनिकरि युक्त जे वचनग्रं
थादिक तेऊजो आई प्राप्त होई तोहू यह निवृत्तिही परल
गावै· सोई कहीयतुहै· प्रथमतो शृंगारकी वानी सो पुरुष·
नायक ईश्वरु नायिका आत्मा सो अष्टप्रकारकी ज्योंज्यों प्र·
संग होइ त्यौंत्यौं व्याख्यान करै इत्यादि· १ वीरतो काम क्रो
धादिक इंद्रियादिक अनंत सेनाकरि संयुक्तजो महा शत्रु
प्रतिजन्यको मारनिहारो· मन ताके युद्धविषें सावधानता
इत्यादि २ करुणा ईश्वरसों अति दीनता व्है करुणानि·
धान दीनबंधु पतीत पावन अशरण· निराधारकी आधार
इत्यादिक वचन कहिकहि जिनजिन भक्तनि प्रल्हादादिक
निकी रक्षाकरीहै तिनकी साष सुनाई वारंवार विनती करै
इत्यादि ३ भाई यह बडो आश्चर्य कौनसों कहीये·ऐसो
यह अकर्त्ता अभोक्ता· सदा परमानंद मय स्वरूप· आत्मा
सोंजडसामग्री सों लागि लागि आपुकों भूलिकरि अनें

क वांछा करि आपने कर्मकरि आपही बंधतहै· दुःख-
कों सुख मानि मानि अनेक संकटनिकों सहतुहै त्रास
ही पावतुहै छोडि नाहीं देत इत्यादिक ४ हास्य· हासी
पूर्वक कोई काहूकों निंदादिक तर्कवचन कहै· अरु वहक्रो
धरूपव्है करि अनेक दुर्वचन कहै· महादुःख पावै· ए तमा
सो देषहि किरे देषहु· आपकों भूलिकरि निंदास्तुत्यादिक
आप मोकों थापि लईहै· या प्रकार परम आनंदित भये अ
नेक हांसी ख्यालादिकनिकरि सहित भये विचरहि इत्या
दिक प्रसंग हास्य रसविषें मिलावहि· ५ भयानक गर्भआ
दिदे कुंभी पापक अंतलों परम भयानक अठाईस नर्क चौरा
सीलाष जोनिनकों दुःख सुनावै· किरे आपनो प्रभुजो ईश्वरु
ताकी सेवाविनु इत्यादिकनिविषें डारियतहै तातें ताकों भ-
जहु· इत्यादिक· ६ बिभत्स्य· आत्माको स्वरूप देषाइक
रि देहको स्वरूप देषावहि किदेषरे· रोम· नख· त्वचा· रुधिर·
मांस· मेद· मज्जा· अस्थि· मूत्र· पुरीष· श्लेष्म· इत्यादिकनि·
सों समानसो देह· अरु जड· अनेक दुःख व्याधि वियोगादि
कनि करि संयुक्त ऐसो महानर्कको कुंडलाविषें रतक्योंहू
जीये इत्यादिक· ७ रौद्र· देषहुरे· ऐसो सावधान सिरपर
कालषरो नगारो बजावतहै· जाके भयकर ब्रह्मादिक इंद्रा
दिक तीनऊलोक सदाभय भीत कंपायमान रहतहै· ऐसो
निरंतर तीक्ष्ण कालचक्र बहुतहै ऐसोजो निमेष नाहींजा
नियत· धौंके तेक आयुर्बल अमोल रत्न काढतुहै· ऐसो·
कौनहै· एक ईश्वरविनु ऐसे दुर्निवार कालतें राषै· इत्यादि·
८ शांत· देषोरे जो कदाचित ब्रह्माके लोकलों प्राप्त होइ
तो हू एकनिमेष कालादिकनितें छूटि शांत हीनप्राप्त होइ

इतो नेपरम शांतस्वरूप ईश्वरकों भजिये· जातें वे प्रभु· आपकों मिलाइ लेतहे ई याभांति नवर सनि प्रवृत्तिपरल गावै· अरु समस्त प्राणीनकों ज्यौंज्यौं आपने आपने कर्म निविषें अति आसक्त देषे त्यौं त्यौं यह कहे किरे जिनचात· निविषै इनकों परम संकट महा बंधहोतहै तिनविषें ए ऐसे सावधानहे· हमसुखनिधान सकल बंधन दुःखनिको मिटावनहारु आपको मिलावनुहारु आपनो प्रभु ताविषें क्यौं नाहीं सावधान होत· ज्यौं ऐसावधानहे त्यौंहू तोहोऊ इत्यादिक औरऊ अनेक भांति ॥ ६१॥ दोहा· निवृत्तिमारगमूढकौं प्रवृत्तिफलदाजान॥ वाहीप्रवृत्तीधीरकौं निवृत्तीरूपसमान॥ ६१॥ संस्कृत· श्लोक· परिग्रहेषु वैराग्यं प्रायो मूढस्य दृश्यते ॥ देहे विगलिताशस्य क रागः क्व विरागिता ॥ ६२॥ टीका·– परिग्रहेति मूढस्य देहाभिमानिनः तत्संबंधितया परिगृहीतेषु परिग्रहेषु धनवेश्मादिषु प्रायो बाहुल्येन वैराग्यं दृश्यते देहविगलिताशस्य तत्संबंधिनि पुत्रगृहादौ रागः स्यात् देहे रागविरागयोरभावे तत्संबंधिषु रागविरागयोर्वक्तुमशक्यत्वात् ॥ ६२॥ भाषाटीका·– परिग्रहेषु वैराग्यं प्रायोमूढस्य दृश्यते·॥ स्त्री पुत्र धनधान्य· गृह कुटुंबादिक निविषें विरक्तजोहे सो मूर्षके उपजतिहैजो आत्मज्ञान करिरहितहे ताकौं देह विगलिताशस्य· जिनि आत्मज्ञान पाइ करि देह न्यारो जानि आसक्त तोरिकरि देहवैनिर्लेपकता ग्रहीहै ताके करागः क्वविरागता· जहांलों· इंद्रिय मनोगोचर समस्त सामग्रीहै तहांलों समस्तदेहकीहै· तातें जो समस्तको त्यागकर्यो परि एकदेह परम मताहै·तो कछुछोड्यौना

हीं· जो केवल देहतें ममता दूरि करि न्यारो भयो· तो सब तेही न्यारो भयो· ईश्वर सम भयो· ज्यों वृक्षको मूल त्यों संसारको मूल देह· तातें केवल देहतें न्यारो ह्वैकरि सुख स्वरूप हो इत्यादि॥ ६२॥ दोहा· अज्ञानीकों विभवमें दीखत है वैराग्य॥ निर्मोहीकों देहमें कहां राग अनुराग॥ ६२॥ संस्कृत· श्लोक· भावनाभावनासक्ति दृष्टिर्मूढस्य सर्वदा॥ भाव्यभावनया सा तु स्वच्छस्या दृष्टिरूपिणी॥ ६३॥ टीका· - भावनेति मूढस्य दृष्टिः सर्वदा भावनायां अभावनायां वा· आसक्ति अहं भावनां करोमि यद्वा अहम् भावनां करोमि इत्यहंकारात् स्वच्छस्यात्मनिष्ठस्य तु सा दृष्टिः भावभावनया दृश्यचिंतया उपलक्षिताऽपि अदृष्टि रूपिणी दृष्टदर्शन रहित रूपैवस्यात् अहं करोमीत्यभिमानाभावादित्यर्थः॥ ६३॥ भाषाटीका॥ मूढस्य दृष्टिः आत्मज्ञान करि रहित जो मूर्ष ताकी जो दृष्टि सो भावनाभावनासक्ता· जन्म मरण· सुख दुःख इंद्रियनिके अर्थ इत्यादिके चिंतवनविषें तत्पर सदा संशयविषें प्राप्त रहै· स्वस्थस्य आत्मज्ञानकों पाइ करि विश्राम हि प्राप्त भयो जो महापुरुष· ताकी जो दृष्टि सो भाव्यभावनया जो कछु ह्वैवे है सो जो वांछिये· तो होई· अरु न वांछिये तो न· होई· या निश्चयविषें प्राप्त ताहू पर अदृष्टिरूपिणी· पूर्वसंस्कारतें ज कछु सुख दुःखादिक होत जाइ तेऊ यह यों देषै· ज्यों और काहूके होत देषिये आपु कों देषे एना हीं· देहकों होते देषै· तातें समस्त सुख दुःखादिक भाग्याधीन जानि करि कदाचित मनविषें मत आना हि· ज्यों ह्वैवे त्यों होई· ए होइ· अरु ताहू पर जो कछु होहि सो आपु को मति

स्थ

स्थ

जानहि· देह कोजाननादेह· सो आपकों समुझि कदचि तस्पर्श मति करहि इत्यादि॥ ६३॥ दोहा· भाव अभावे मूढकी दृष्टिसदाआशक्ति॥ ज्ञानीकीयादुहुननैं दृष्टिअरूपिणिरक्ति॥६३॥ संस्कृत· ननुदृश्यभावनेक्रियमाणेपिन दृष्टिः कथंदृश्यालंबिनीत्याशंक्यनिःकामत्वादित्याह ॥६४॥ श्लोक· सर्वारंभेषु निष्कामोयश्चरेद्बालवन्मुनिः॥ नलेपस्तस्यशुद्धस्यक्रियमाणेपिकर्मणि॥६४॥ टीका·– सर्वारंभेष्विति योबालवन्निः कामः सन्प्राक्तनवशात्सर्वारंभेचरति प्रवर्तते तस्य शुद्धस्याहंकार मलवर्जितस्य कर्मणि क्रियमाणे नलेपः नकर्तृतास्यादहंकाराभावादित्यर्थः ॥६४॥ भाषाटीका· – यः जोपुरुष सर्वारंभेषु निःकामः समस्तजे आरंभऊ होहि तिनिविषें कछू कामना नकरै· तोजोकहैकि कामनानकरै कर्मकरै तोयों नाही· किंतु बालवद्विचरेत् ज्यौं बालककेकछू नकरवेकी इच्छा नछोडी वे· कीनकौंनहू कर्मतें सुखजानें नदुःखजानें· अरुनवांछा अवांछा· ज्यौंज्यौं आइपरे· त्यौंत्यो आचरे त्यौंहीयह· तोजौं कहैकि बालकतो अज्ञान परियह उत्तम उत्तम कर्मकरि सुखादिकनिकों क्यौं नवांछै· तो सुनु· बुधः मोह रात्रिविषैं ज्ञान सूर्यको प्रकाश भयो· तातें जान्या कर्म समस्त देहकेजानेसो देह दुःखरूप जानी आपकों परम सुख स्वरूप जान्यो दुःखरूपजो देह ताविषें जेतनी आसक्ति तेतने दुःख· तातें यों जानि करि देहहीसों न्यारो भयोहै तो कर्मैनि विषैं· क्यौं आसक्ति होइ तातें तस्यशुद्धस्य आपनी निःकिंचनः निर्लेप स्वरूप समुझिकरि परम शुद्ध ताकों प्राप्त भयो है

ताको क्रियमाणोपि कर्मणा· अनेक कर्म करते हू संतेनि
र्लेपः कदाचित स्पर्शन होइ तातेंजो कर्मऊ करहिंसो आ·
पविषें मतिथापहि देहकोंजानि तादेहकों अरु आपकोंस
मुझिकरि देहतें निर्लेप ह्वैकरि सुख स्वरूप हो इत्यादि॥
६४॥ दोहा· सर्वकामनिष्कामह्वै विचरतबाल·
समान॥ करतसत्त बहुकर्ममें लिपतनज्ञाननिधान॥ ६४
॥ संस्कृत· एवंविधोपिधन्यआह॥६५॥ ॥
श्लोक· सएवधन्यआत्मज्ञः सर्वभावेषुयः समः
॥ पश्यन्शृण्वन्स्पृशन्जिघ्रन्नश्नन्निस्तर्षमानसः॥
६५॥ टीका· – सएवेति सआत्मज्ञएवधन्योनाः
न्यः यः सर्वभावेषु समात्मबुद्धिरतएवनिस्तर्षमानसः वि
तृष्णचित्तोभवति किंकुर्वन्पश्यन् शृण्वन् स्पृशन्जिघ्र
न्नश्नन्॥६५॥ भाषाटीका· – सएवधन्यः दे·
षरे पुत्र· ब्रह्मादिकजे समस्त देहधारी त्रिभुवनके अधि
पति तिनसबनिके मध्य केवल एक सोई धन्य· जान· सो
कोन यः सर्वभावेषुसमः जोपुरुष समस्तजे इंद्रियनहू
के आचरण· तिनहूविषें समानचित्तहै विश्वासकों पाइक
रि स्थिरचित्त भयोहै· कछुयों नाहींजानतु किमें कछूक
रथों किमोहिकछू करिवेहो· ज्यों त्यों आइ परतुहै त्यों त्यों
आचरतुहै· सो ऐसो काहेतेंहै· आत्मज्ञः जातें अकर्त्ताअ
भोक्ता अनीह· अलेप अतीत अक्षयस्वरूप आत्माकों·
ज्ञान्योहै· तोकौन आचरण पश्यन् अनेक भेदाभेद देष
तसंते· शृण्वन् सुनतसंते· तातोसीरो कोमल· कठोर स्प·
र्शतेसंतें जिघ्रन् अनेक सुगंध दुर्गंधादिकनिकों आघ्राणआ
वतसंते अश्नन् कषाय· मधुर· लवण· कटु तिक्त· आम्लइ

त्यादिक रसनि करि सहित उत्तम अनुत्तम भोजन करते-
संते इत्यादिक अनेक आचरण करते संते समान हैं तौ·
जौ कहैकि समानचित्त क्यों करि रहै जौं लगि देहविषै है
तौं लगि तो इंद्रियनिके अर्थ प्राप्त भये जानहु स्रवन पायो
परि सदा आचरतु है· अरु कदाचित न आइ प्राप्त होहि·
तौ कछू व्यापना नहोई· तौ स्रन निस्तर्षमानसः इंद्रिय-
निके अर्थनिकी कदाचित याके तृष्णा नाहीं जो इच्छा हो
इतौ आये तें स्रख गये तें दुःख उपजहि· तातें यह परम सु
खविषें निरंतर मग्न है· जे अर्थ होहि अरु जाहि तो जाहु·
इत्यादि· तातें समस्त आचरणविषें समान हो आप कों सदा
एकरस जानु ॥ ६५॥　　दोहा·　　पंचविषयमैं जो सदा
तृष्णाहीन अनन्य॥ सर्वभावतें सम रहै सोई ज्ञानी धन्य॥
॥ ६५॥　　संस्कृत·　　तस्यैव धन्यत्वे युक्तिमाह॥ ६६
॥　　श्लोक·　　क्व संसारः क्व चाभासः क्व साध्यं क्व·
च साधनम्॥ आकाशस्येव धीरस्य निर्विकल्पस्य
सर्वदा॥ ६६॥　　टीका· - क्वेति धीरस्य ज्ञानिनः
अतएव सर्वदा विकल्परहितस्य संसारः प्रपंचः क्व· अत
एव तत्प्रतिभासकश्च क्व· अतएव साध्यं स्वर्गादिकं क्व अ
तएव साधनं यागादिकं च क्व·॥ ६६॥　　भाषाटीका· -
धीरस्य आत्मा एक अद्वैत जिनि जान्यो· तातें निर्विकल्प
स्य भेदाभेद तें निश्चय रहित भयो· समदृष्टि भयो· ता म-
हा पुरुष कों क्व संसारः जो कदाचित कोटि कल्प संसार-
ही विषें रहै तो वा कौं संसार कैसो· संसार है सो केवल भे-
द बुद्धि तें आत्मविषें आभासत है· परि है कछु नाहीं ता-
तें क्व च आभासः· जो आत्मा ई जान्यौ तो आभास कैसो ज्यौं

सीपविषें रूपो·जेवरीविषें सर्प· आभासे·ज्यौंलगिसीप जेवरीनजानीये तौलगि परिजब सीप जेवरी जानि करिउ ठाई· हाथकरिदेषी तब आभास कैसो त्यों अरु कसाध्य अरुजो एकई अद्वैत आत्माजान्यो तो साधनीय वस्तुसो कहा अरु साधनकच· ध्यानधारणादिक श्रवणकीर्तन स्मरणादिकतें कहा कौनभांति· आकाशस्यैव जा प्रका र आकाश सर्वशून्य सदा एकरस भेदाभेदकरि रहित· एक अद्वैत इंद्रिय व्यवहारादिकनिकरि रहित अग्राह्य· अलेप· अनीह· इत्यादिक लक्षण संयुक्त तातें केवल भेद दूरिकरि एकआत्माकी दृष्टि आनु इत्यादि ॥ ६६॥ ॥
दोहा· कहाजगतआभासकहा· कहासाधनासाध्य ॥ जिनि छांडीसबकल्पना ज्यौं आकाशअसाध्य॥ ६६॥
॥ संस्कृत· श्लोक· सजयत्यर्थसन्यासी पूर्णस्वरसविग्रहः ॥ अकृत्रिमोऽनवच्छिन्नेसमा· धिर्यस्यवर्तते ॥ ६७॥ टीका· – सजयतीति स· अर्थसन्यासीदृष्टादृष्टप्रयोजनशून्योयतः पूर्णस्वरसःपू र्णस्वभावोविग्रहः स्वरूपंयस्यसपूर्णस्वरसविग्रहोजय· ति सर्वोत्कर्षेणवर्तते·सकः·यस्यअकृत्रिमः स्वाभाविकः अनवच्छिन्ने पूर्णस्वरूपे समाधिरनवच्छिन्नेसमाधिर्यस्यव र्ततेसजयतीत्यर्थः ॥ ६७॥ भाषाटीका· – सजयति देषरेपुत्र एकजो पुरुष ब्रह्मादि समस्त ईश्वरनिको पूज्य· अरु अक्षय सुखविषें प्राप्त सदा एकरस विराजतुहै· सो कोनु· अर्थसन्यासी· जिनि इंद्रियनिके अर्थनिकों त्याग· कर्यौहै तो कैसो भयोहै· पूर्ण स्वरसविग्रहः आत्मानंद समुद्रविषें सदामग्नहैतें· अकृति मौन वांछेन· भोग अरुमो·

क्ष एदोऊउपजेजानि तातें विनाशवंतजानि तातें दोऊ संसारजानि मनतें दूरिकरैहै· इत्यादिक जन्ममरण सुख दुःख पुण्यपापऊंचोनीचो इत्यादिकजे मनके भेद तिनकों नाहीं आनतु काहेतें समाधिर्यस्य वर्तते·एक अद्वैत आत्माविषें मनस्थिरहै तातें भेदाभेदकौंन करै· इति तातें केवलइंद्रियनिके अर्थ दूरिकरि अद्वैत आत्माकी दृष्टि आनि सुखमयहो इत्यादि॥ ६७॥ दोहा· सबअर्थनकों त्यागकें पूर्णानंदसमाज॥ मनअखंडनिजरूपमें सोइ सकलसिरताज॥ ६७॥ संस्कृत· ज्ञानतत्त्वज्ञस्य तुसर्वत्रनिराकांक्षित्वमेवमुख्यंलक्षणमित्याह॥ ६८॥ ॥ श्लोक· बहुनात्रकिमुक्तेनज्ञाततत्वोमहाशयः॥ भोगमोक्षनिराकांक्षीसदासर्वत्रनीरसः॥ ६८॥ टीका· – बहुनेति· अत्रज्ञानिनः बहुनोक्तेन लक्षणेन किंप्रयोजनं ज्ञाततत्वो महाशयः भोगमोक्षयोःफलयोः निराकांक्षी अतएव सदा सर्वदा सर्वत्र भोगमोक्षसाधनेषु नीरसः निरनुरागः॥ ६८॥ भाषाटीका· बहुना अत्रउक्तेनकिं देषरेपुत्र बहुत भांत कहा कहूं थोरेहीमें जान देष· ज्ञाततत्वो महाशयः जान्योहै एक अद्वैत ईश्वर जाकरि ऐसोजो महा पुरुष सो भोगमोक्षनिराकांक्षी केवल वहई भुक्तिमुक्ति दुहुंकी वांछाकरि रहित होइ· अरु सदासर्वत्र नीरसः जो कदाचित कल्प कोटिक संसारहीविषें· अनेक भोग सामग्रीविषें रहैतो हू कदाचितकौ नहू वस्तुविषे प्रियबुद्धिन आने इति तातें समस्त सामग्री मिथ्याजानि मनकों षेंचिकरि एकसत्य स्वरूप आत्माकी भावनाविषें प्राप्त करु· इत्यादि॥ ६८॥ दोहा·॥

बहुतकहनतें कहाहै जोजाननतत्वसारा भोगमोक्ष-आशातजे सोईअनुरागनिवार॥ ६८॥ संस्कृत ॥ श्लोकः महदादिजगद्वैतं नाममात्रंविजृंभितम्॥ विहायशुद्धबोधस्यकिंकृत्यमवशिष्यते॥ ६९॥ टीका-- महदादीति महदहंकारपंचतन्मात्रापंचमहाभूतभौतिकजगल्लक्षणंद्वैतंनाममात्रेणैव विजृंभितंविभिन्नंइवभाति नतुवास्तवं अतएवचतत्र कल्पनांविहाय स्थितस्य अतएवशुद्धबोधस्यस्वप्रकाशचिन्मात्रस्वरूपस्यकिंकृत्यमवशिष्यते सर्वदासच्चिदाधिगमनेनैवकृतकृत्यत्वादितिभावः॥ ६९॥ भाषाटीका-- जगद्विहाय शुद्धबोधस्य यहसमस्तजो इंद्रियमनोगोचर संसारविस्तार ताको दूरिकरि निर्गुणज्ञानविषेंजो प्राप्त भयोहै महापुरुष ताकोंकिंकृत्यं अवशिष्यते कहाकरिवेकोंरह्यो वह समस्त कृत्यकरि सिद्धभयोईश्वरमय भयो तो संसारक्यों छोड्यो द्वैतंजातेयह नानाप्रकारकेभेदनिकरि जन्ममरणादिक सुखदुःखनिकरि सहित आत्मा एकअद्वैतसमान भेदाभेदकरि रहित एकमेवाद्वितीयंब्रह्म सर्वंखल्विदंब्रह्म नेहनानास्तिकिंचन इत्यादिश्रुतयः तातें यौंजानिकरि केवलमनको भ्रमजानिकरि दूरिकर्योतोजो कहैकि उत्पत्ति अरु विनाश समस्तभूतनिकेजान्योहोत जाहिते देषियतेएहै पैरिसंसारतो ज्यौं आहि त्यौंहीरहो याकोतो नाशकबहूनाहीं एक-यह एकब्रह्म यहतोद्वैतभयो अद्वैतब्रह्मक्यौं कहियै तोदेष नाममात्रविजृंभितं केवलसंसार यहजो नाम तन्मात्रहै एकब्रह्मविषें दूजोयह केवल नामकहिलयोहै

नंदा

परि हैकछुनाहीं तातें काहेको नाश काहेको अविनाश· तातें अज्ञान रात्रिविषें सोएते आपुकों भूलिगए हैं· तातें यह जानत हैं तिनमध्य जोई जागे· आपकों समुझें सो कछु द्वैत देषैनाहीं· ज्यौं एकअद्वैत ईश्वर त्यौंहीदेषैं· तौजोक हैंकि समस्त वेद पुराण स्मृत्यादिक यौं करि कहैंकिती नगुण· चोवीसतत्व इनतें आत्मातें मिलिकरि यह संसार है ताकों तुम नाममात्र क्यौं कहतेहो येवचन सकल मिथ्याहैं तोसुन· यह यौंही है· सत्यहै· परि मन्दहादि याकीआदविचारेतें कछूनाहीं देष· प्रथमतोएक महत्तत्वउपज्यो· क्रियाशक्ति ज्ञानशक्ति प्रधान तातें अहंकार: तब आकाश· आकाशतें वायु· वायुतें तेज· तेजतेंजल· जलतें भूमि· इनके· गुण· आकाशको गुणशब्द· वायुकोगुण स्पर्श· तेजकोगुणरूप· जलकोगुण रस· भूमिकोगुण गंध· तौइन पंचभूतनिकरि देह भई सो देहतो इंद्रियनिकरि संयुक्त· पंचतोज्ञानेंद्रिय· श्रोत्र·त्वक्·चक्षु·जिव्हा·घ्राण·तौ· कर्णनिको विषय आकाशकोगुण शब्द· त्वचाको विषय· वायुकोगुण स्पर्श· नेत्रनिको विषय तेजकोगुण रूप· जिव्हाको विषयजलकोगुण रस· नाशिकाको विषय· पृथ्वीको गुण गंध· इत्यादि· तथा पंचकर्मेंद्रिय· वाक्·हस्त·चरण·पायू·उपस्थ·इत्यादि· तौयहजोसमस्तविस्तार उपज्यो सोएक आत्मा ब्रह्मविषेंउपज्यो· तब ब्रह्महीविषें स्थित भयो· ज्यौं समुद्रविषें लहरि बुद्बुदात्यौंतो बिन देहादिकनिविषेंजो अहंकारकियह मेंयह औरइत्यादिक· जोअहंकारहीको बंधन जहांईअहंकार तहांईजीव कहिये· जहां अहंकार नाहीं तहां ब्रह्मईहै· तातेंनकछूहुतो· नकछूआगे रहिहै· अरुविवेकतें

नकछू अबहीआहि तातें केवल अहंकार दूरिकरु एक ई ब्रह्मकी भावना आन इत्यादि॥ ६९॥ दोहा॥
महदादिकसबजगतकों त्यागभयोनिजबोध॥ ताकोंका रजुकोंनसो वाकोरह्योअशोध॥ ६९॥ संस्कृत॥
ननुतथाप्यनर्थशांत्यर्थंप्रयत्नः कर्तव्य इत्यत आह॥ ७०॥
॥ श्लोक॥ भ्रमभूतमिदंसर्वंकिंचिन्नास्तीति निश्चयी॥ अलक्ष्यस्फुरणः शुद्धः स्वभावेनैवशाम्यति॥ ७०॥ टीका॥ – भ्रमभूतमिति॥ अधिष्ठान साक्षात्कारे इदंसर्वंभ्रमभूतंभ्रमेणैवकल्पितं अत एवेदंकिंचित्किमपि वास्तवंनास्तीति निश्चयी अलक्ष्यस्फुरणः चिन्मात्रप्रतिभासवान् अत एव शुद्धः स्वरूपसाक्षात्कारेण बाधिताध्यस्तमलत्वात् स्वभावेनैवशांतो ननुशांत्यर्थज्ञानातिरिक्तमपेक्ष्यमित्यर्थः॥ ७०॥ भाषाटीका॥ –
इदंसर्वं यहजो कछु संसार कहीयतुहै सो भ्रमभूतं केवल आपनेमनके भ्रमतें जान्यो सो परतुहै नतरुहै कछुनाहीं जाहीके मनकों भ्रमि वोरह्यो ताहीकों यह कछुहैएनाहीं ज्यों बहुतक बालक मिलिकरि आपने ख्याल पूर्वक भ्रमाहि तौव सभस्त दशऊ दिशि भ्रमते देषहिं परिउनमें जोई स्थिरह्वै रहै सोई समस्तविस्तार ज्योंस्थिरहै त्योंही देषे तातें किंचिन्नास्ति हैकछुनाहीं इतिनिश्चयी॥ ज्यों कहत सुनतहै त्यों हीजाके हृदयविषें यह प्रतीत उपजीहै ताहीतें अलक्ष्य स्फुरणः ब्रह्मकी स्फुरति भईहै ताहीतें शुद्धः त्रिगुणमयजो अशुद्धता ताकरि रहित भयोहै ऐसो पुरुष सुखेनैव उपशाम्यति॥ कछू करिवेकों नाही रह्यो॥ सुखही पूर्वक ब्रह्मकों प्राप्त होई॥ तातें यासंसारकी अभावना आनुए

क ईश्वरकी भावना मनमें राषि करि परम शांतहि प्राप्त होइत्यादि॥७०॥ दोहा· सर्वजगतभ्रमरूपहै यहिनिश्चयकरिजान॥ त्रिगुणमेलतैं शुद्धव्है चेतनब्रह्म समान॥७०॥ संस्कृत· श्लोक· शुद्धस्फुरणरूपस्य दृश्यभावमपश्यतः॥ कविधिः क्वचवैराग्यं क्वत्यागः क्वशमोपिवा॥७१॥ टीका· -शुद्धेति शुद्धस्फुरणरूपस्य स्वप्रकाशचिद्रूपस्य अतएवदृश्यभावं दृश्यपदार्थमपश्यतः कुत्र कर्मणिविधिः क्वकेषुवाविषयेषु वैराग्यं क्वकेषु पदार्थेषु त्यागः क्वकेभ्यः पदार्थेभ्यः शमोपि वाकार्यः दृश्यपदार्थस्यैवास्फुरणादित्यर्थः॥७१॥ भाषाटीका·- शुद्धस्फुरणरूपस्य· जोपुरुष एक आत्मास्वरूपकरि स्फुरणरूपहै· अरु दृश्यभावं अपश्यतः जहांलों कछु दृष्टिमों आवतुहै ताको सत्य करि नाहीदेषतु· तापुरुषकों विधि क्व उत्तम वचन स्तुति आचरणीय सोकहा· अरु क्व वैराग्यं· निषेधवस्तु तातें विरक्तहू· जोयेसो कहा· अरु क्वत्यागः भाई सबको त्याग करीये सो त्यागई कहा· जो अद्वैत निःकिंचन स्वरूप जान्यो तो औरकछू हैयेनाही तो त्यागकहा· अरु क्वशमोपिवा· जो परमशांत स्वरूपई है ताकों जो कहीयेकि शांतही प्राप्त होई· सो कहा इति· तातें केवल समस्तविस्तार मिथ्याजान· एकईश्वरकी भावनाविषें तत्परहो और कछु करणीय नाहीं· जब ऐसो भयो तब तूंही ईश्वरस्वरूप इत्यादि॥७१॥ दोहा· जाकै आतमस्फुरणहै दृश्यअदर्श नहोत॥ कहाविधीवैराग्यकहा कहात्यागसमजोत॥७१॥ संस्कृत· श्लोक स्फुरतोऽनंतरूपे

णप्रकृतिंचनपश्यतः॥ क्वबंधः क्वचवा मोक्षः क्वह- र्षः क्वविषादता ॥ ७२॥ टीका- स्फुरतइति चि- द्रूपेणप्रकाशमानस्य बंधादिकंनास्तीत्यर्थः॥ ७२॥ भा षाटीका- अनंतरूपेणस्फुरतः अक्षय अखंडित अनं त ईश्वर तिनकरि स्फुरणरूप आनंदितहै. अरु प्रकृतिंचन- पश्यतः समदृष्टिहै घटादिकनिके स्वभाव भेदाभेद नाहीं देषतु-याविस्तारविषैं मिथ्यात्व करि देषतुहै जाको बंधः क्व बंधनसों कहा अरु मोक्षः क्वचवा-जोबांध्योहोइ ताकोमो- क्षहोइ- जो एक आपहीहै दूजो हैए नाहीं तौकहां बंध कहा मोक्ष- अरुक्वहर्षः जाकों दुःखप्राप्तहोई ताको दुःखजाई सु खआवै सुखजाइ दुःख आवै-जो अक्षय परम सुख स्वरू पईहै-ताकोंजो कहीयेकि सुख प्राप्त भयो-सो कहा-ज्यौं स मुद्रकों कहीयेकि देषहु समुद्रकोजल प्राप्तभयो देषहु सू र्यको प्रकाशता अरु तेज प्राप्त भयो चंद्रमाकों शीतलता प्रा प्तभई-तोयहकहा-त्यौं अरु क्वविषादता-जाकों सुखप्राप्तभ योहोइ ताकों सुखके अंत दुःखप्राप्तहोइ-परिजो आपुही अक्षय सुखस्वरूप ताकों सुख दुःख कहा इति- तातें जोक छु दृष्टिमें आवतुहै सो समस्तमिथ्याजानि हृदयतें दूरिक रि-एकसत्यस्वरूप आत्माकी भावनाराषिकरि परम शांत- हिप्राप्तहो इत्यादि॥ ७२॥ दोहा. जोप्रकाशचि द्रूपतें बंधमोक्षनहिताहि॥ प्रकृतिनाहिंदेषतसतें हर्षवि षादनजाहि॥ ७२॥ संस्कृतः श्लोकः बु द्धिपर्यंतसंसारे मायामात्रविवर्त्तने॥ निर्ममोनि रहंकारोनिःकामः शोभतेबुधः॥ ७३॥ टीका- बुद्धीति बुद्धिरात्मज्ञानमेवपर्यंतो नाशोयस्य तस्मिन् संसा

रेमायामात्रं मायाशबलितं चैतन्यंविवर्तते अतात्विकं जग
द्याकारेण प्राप्नोति· अतोबुधोविद्वान्तात्त्विके शरीरे निरहंका
रस्तत्संबंधिनि कलत्रादौ निर्ममः अतएवनिःकामः अत-
एव शोभते दीप्यते कामनानभिमानत्वात्॥ ७३॥ ॥
भाषाटीका· – यस्यबुद्धिःसंसारेन· जाकीबुद्धि संसारवि
षें हैयेनाहीं· मिथ्याजानि षेंचि लईहै· काहेतें· मायामात्रवि
जृंभितं· केवल अज्ञानमात्रहै नतरु कछु हैनाहीं· मायामात्र
कहीयेजो है नाही· परि कोत्रहू एक प्रसंगतें देषिये ज्यों बा-
जीगर मंत्रादिक प्रसंगतें नाना प्रकारकी माया देषावै· राक्षस
नानाप्रकारकी माया देषावै· परि है कछुनाहीं· इत्यादि ओरऊ
जानिवी तातें निर्ममः यह मेरी वस्तु याबुद्धिकरि रहितहै·
जो समस्त सामग्री नाहीं करिजानी· तो कौनबात परम म-
ता आनै· अरु निरहंकारः यहुमें यहुओर· जो एक अद्वै
त अखंडित आत्माजान्यो· दूजो नाहीं तो दूजो कैसो· अरु
ताहीतें निःकामः जो दूजी वस्तु हैये नाहीं· तो कामना का-
हेकी करै· तो ऐसो क्यों करिभयो· बुधः ज्ञानसूर्यके प्रकाश
तें अज्ञान रात्रि दूरिभई· तातें जाग्योतो ऐसो· तो महापुरु
ष· शोभते· यद्यपि देहहू विषें देषीयतुहै· तोहू ब्रह्मादिक
निहूकेऊपर परम वंदनीय अक्षय सुखविषें विराजतुहै
इति· तातें यहसमस्त मिथ्याजानि ममता अहंकार काम-
नादूरिकरि अक्षयसुखविषें प्राप्तहो इत्यादि॥ ७३॥ ॥
दोहा· जाकीबुद्धिनजगतमें मायामात्रविजृंभ॥ नि
रहंकारीनिर्ममी शोभितहैविनडिंभ॥ ७३॥ सं
स्कृत श्लोक· अक्षयंगतसंतापमात्मानं
पश्यतोमुनेः॥ क्वविद्याक्वचवाविश्वं क्वदेहोऽहंम

मेतिवा ॥ ७४॥ टीका - अक्षयमिति अक्षयं अविनाशिनं अतएवसंतापरहितं आत्मानं पश्यतो मुनेः क्वविद्याक्वशास्त्राणीत्यर्थः क्वचवाविश्वं क्वच देहः अहंममेतिवा क्वआत्मव्यतिरिक्तस्य विद्याविश्वादेः अस्फुरणादित्यर्थः॥ ७४॥ भाषाटीका - मुनेः समस्त कर्मनिके आदरकरि रहित भयोहै समस्त इंद्रियस्थिरकरिजो निश्चल चित्त भयोहै तातें आत्मानंपश्यतः अपने स्वरूपकों समुझैहै कैसोहै आत्मा स्वरूप गतसंताप समस्तसंतापनि करि रहित परम शांत स्वरूप अरु अभयं मायाकाल कर्मादिकनिकरि रहित परम निर्भय तातें ऐसे महापुरुषकों क्वविद्या जो विद्या प्राप्त होइतो संसारतें छूटै अविद्यातें बंधै तातें ऐसे महा पुरुषकों विद्या कहा ज्यौं ठौर पहुच्यौ तोमार्गकहा अरु क्वचवाविश्वं वाको संसारसो कहा ज्यौं समुद्रई जान्यौ तो तरंगादिक कहा अरु क्वदेह जोनिराकार आपई शुद्धचेतन आत्माई जान्यौ तौ आकारखंडित अशुद्ध जड ऐसी देहसों कहा अरु अहंममइतिवाक्य यहमें यहऔर यहमेरी वस्तु यह औरकी जो एकई आत्माजान्यो दूजो कछुहैयेनाहीं तो इत्यादिक भेद कैसे इति तातें एकआत्माकों सत्यजानि औरदेहादिक समस्तविस्तार मिथ्याजानिसबतें न्यारोह्वैकरि सुख स्वरूपहो इत्यादि॥ ७४॥ ॥

दोहा अविनाशीआतमसदा योंजानत सुखधाम॥ ताकोंविद्याविश्वसुख कहादेहकहाकाम॥ ७४॥

संस्कृत श्लोक निरोधादीनिकर्माणिजहातिजडधीर्यदि॥ मनोरथान्प्रलापाश्च

कर्त्तुमाप्नोतितत्क्षणात्॥ ७५॥ टीका· - आत्म
ज्ञस्य द्वैतान्नर्थनिवृत्तिरित्युक्तम् अज्ञस्यतुचित्तनिरोधा·
दीन्यपि कर्माणि कुंजरशौचप्रायाणीत्याह निरोधादीनी
ति यदि जडधीः चित्तनिरोधादीनि कर्माणि जहाति तर्हि·
तत्क्षणा दात्म्यमनोरथान् प्रलापांश्च सर्वव्यापारान् कर्त्तुं·
माप्नोति प्रवर्तते· तथाच मूढस्य चित्तनिरोधादिकं अकिंचि
त्कर मित्यर्थः ॥ ७५॥ भाषाटीका· - मंदः जोमू
र्षहैसो निरोधादीनिकर्माणिश्रुत्वानइस्क· श्रुत्वाकर्माणि
जहात्यपि· यों सुनिकरि किरे देषु· एकमर्जो करे नेकेहै·
सो केचल छोडाईवेकों निमित्त कौनभांति किभाई जोएक
हीवार समस्तकर्म त्याग कहिये तो कोऊ नत्यागही· कर्म·
प्रियजानि उत्तमजानि ग्रही बैठेहैं· तातें द्वैप्रकारके क
हि सुनाये· एकविधि· एकनिषेध· विधी सात्विक कर्म क
रैं· कहेराजस तामस निषेधकरि छोडे· कहो जब विधि विषें
आइ ठहरानौ निषेध राजस तामस कर्मनितें रहित भयो·
तब विधिनिषेध समस्तकर्म समानकहि बंधन कहि संसा
रविषें भ्रमावनिहार कही· सुनाए· अरु बस्तु सत्य स्वरू
प· अक्षय आनंदस्वरूप एक श्रीनारायण देषाय· इनको
भजन· संसार समुद्रतें उद्धारनिहार सो दृढ करि ग्रहावो·
तातेंतू समस्तकर्म बंधन जानिकरि छोडु· एक ईश्वरके भ·
जनविषें तत्पर होतो इत्यादिक वचन सुनिकरि कदाचि
त कर्म छोडिवोऊ करे· कौनभांति· अजडवत्· ज्यों आत्म
ज्ञानी पंडित छोडिदेई· त्यों परिक्षणात् विमूढतां नजहा
ति· आपने मनको स्वाभावताही कदाचित एक क्षणऊं नछो
डैइति· तातें स्थूलकर्म समरन दूरिकरि मन फेरिकरि ईश्वर

विषें प्राप्तकरु इत्यादि ॥७५॥ दोहा· जोजडबु
द्धिनरतजैज्ञानकाजशुभकर्म॥ तुरत होतअज्ञानमें उप-
जतमनकोभर्म॥७५॥ संस्कृत मूढस्यात्मश्र
वणमप्यनर्थकमित्याह॥७६॥ श्लोक मंदःश्रु
त्वापितद्वस्तु नजहातिविमूढताम्॥ निर्विकल्पो
बहिर्यत्नादंतर्विषयलालसः॥७६॥ टीका·-
मंदइति मंदोमूर्खस्तत् आत्मवस्तुश्रुत्वापि मूढतां न-
जहाति मलिनचित्तस्यश्रवणादपिज्ञानानुदयात् अतए
वमूढः यत्नाद्बहिर्दृष्ट्या निर्विकल्पोपिअंतर्मनसि विषय·
लोलुपोभवतीत्यर्थः॥७६॥ भाषाटीका· - यःप्र
त्नाद्बहिः निर्विकल्पः जोप्राणिअनेकजत्नकरि बाहेर इंद्रि
यार्थनितें रहित भयोहै· सब त्याग बैठेहै परि अंतर्विषय·
लालसः अंतःकरणविषें शब्द स्पर्श रूप रस गंध· इत्या
दिकविषयनिकी वांछा करतुहै· तोसौं· विमूढात्मा तिहुंलो
कमें एक मूर्ष जाकी समानताकों दूजो नाहीं· ऐसोवह· न
इह· नअपुत्र· किंचित्सुखं अश्नुते· नतौ कदाचित् नाम
मात्रहू यालोकविषें· सुख पावै· अरु नपरलोकविषें का
हेतें जोतें· निवृत्तिकीतो बातई रहो· परि प्रवृत्तिहू विषें
अबहीतो सबछोडि बैठोहै· अनेक कष्टनिसों दिन ग·
वावतुहै· आठऊ पहर कल्पतही रहतुहै· तौ यह लोकतो·
यहबीत्यो· अरु बहिर्लोक विषैतो जो सुख पावै·जो यालो
कमैं कछू उत्तम सात्विक कर्म करे होहि· तातें यहतो सम
स्तकर्म छोडि बैठो काहेकों पावै· तातें निवृत्तिकी कहा·य
ह प्रवृत्तिहूविषें केवल दुःखही पावतरहै· अरु थोरेथो
रे कर्मनितें बहुतदिन जीवऊ नकरें· वेगिही वेगि जन्म-

मरणादिकनिविषें भ्रमतरहे इत्यादि ॥ ७६ ॥ ॥ इहां सैंक्षेपकहे ॥ ॥ एईवचन भागवतके एकादशस्कंध विषें तीसरे अध्याय आविर्होत्रसे नाम योगेश्वर राजा निमिजनकसों कहेहैं श्लोक नाचरेद्यस्तु वेदोक्तं स्वयमज्ञोऽजितेंद्रियः ॥ अकर्मणाह्यधर्मेणमृत्योर्मृत्युमुपैतिसः ॥ १ ॥ टीका- देषोराजा यः जोप्राणी स्वयंअज्ञः आत्मज्ञानकरि रहित मूर्षहे ताही तें अजितेंद्रियः इंद्रियवस नाहीभये आप इंद्रियनिके वसहे अरु वेदोक्त नाचरेत् सात्विक कर्मज्यौं वेदकरिकहेहे राजस तामस छोडे कहेहे त्यौं नकरि समस्त शुभाशुभ कर्मबंधनजानि छोड बैठतेहे नोही निश्चय करि अकर्मणा अधर्मेण कर्मनकों छोडिवो सोही भयोजो अधर्म देवरिण पितृरिणः ऋषिरिण भूतरिण मनुष्यरिण आत्मरिण कर्मछोडेते इत्यादि रिण याके शिररहैं नातें यहजो बडो अधर्म बडोगुनाहे ताकरि सः मृत्योर्मृत्युउपैति सोप्राणीमरिकें जन्मपावै बहुरि बेगेही मरे याहीभांति बेगिजन्ममरणादिकनिविषें भ्रमतहीरहे क्यों हूबहुतदिन जीवोऊ नकरें त्योंही वेद कहतुहे मृत्वापुनर्मृत्युमापद्यतेअर्घमानः स्वकर्मभिरिति ॥ १ ॥ ॥ इहां तकक्षेपकहे ॥ ॥ दोहा मंदमतीसुणज्ञानकों नहि छांडत अज्ञान ॥ ऊपरदीखतसाधुसो भीतरविषय प्रधान ॥ ७६ ॥ संस्कृत ज्ञानीतुलोकदृष्ट्याकर्मकुर्वाणोप्यकर्तैवइत्याह ॥ ७७ ॥ श्लोक ज्ञानाद्गलितकर्मायोलोकदृष्ट्यापिकर्मकृत् ॥ नाप्नोत्यवसरंकर्तुं वक्तुमेवनकिंचन ॥ ७७ ॥ टीका- ज्ञा

नादिनिश्चयः ज्ञानाद्गलितकर्मा लुप्तक्रियाध्यासः सलोकदृष्ट्या कर्मकृदपि किंचन कर्तुं वक्तुमेव अवसरं नाप्नोति अहं कर्म करिष्यामीति वक्तुमपि अवसरं नाप्नोति कर्मावसर अस्तु दूरापास्त इति भावः॥७७॥ भाषाटीका-ज्ञानाद्गलितकर्मस्य· ज्ञानपाइकरिजो महापुरुष कर्मदेहादिक समस्त मिथ्या करिजानेहै· आत्मा अकर्त्ता सत्य जानि स्थिर भयोहै अरु लोकदृष्ट्या कुर्वन्नपि· लोकनिकी शिक्षानिमित्त कदाचित कर्मऊ करतुहै तोहू किंचन नाप्नोति· ताहि कदाचित कछू नलिप्त देह अरु वक्तुमपि कदाचित कर्म थापिऊ देषावै· तोहू ताहि कछु नलिप्त होई· तौं· जो कहैकि आत्मज्ञानीके जो कछु नलिप्त होइ तो लोकनिमित्त कर्मकरते रहै· अरु कर्मई उत्तम कहि थापै· तो देषुयो मति जानहि· यों नाहीं· यासों अरु लोकसों कहा प्रयोजन अरु कहा मिथ्या कर्मनिसों प्रयोजन· यह न कर्म करै· अरु न थापै· परि अवसरं कर्त्तुं तथा वक्तुं कौनऊ अवसर समय आइ प्राप्त होहि· ताविषैं विचारि देषै· जातैं कहूं कोहानि होत देषैं ईश्वरविषैं साधुनविषैं आदर घटि देषै· अरु यों जानेकि मेरे कहेतें मेरे करै· ते याके श्रद्धा चधति है· तो कदाचित कहै· करै इति· तातैं देषुरे पुत्र· जो कदाचित साधुको कर्मऊ करते देषहि· अरु कर्म ही दृढावते देषहि तोहूं· ताविषैं कदाचित और भाव मति आनहि· परम साधु ईश्वरमय करिजानु· अरु कर्म उत्तम मति जानहि· वाकों· आशय विचारु की भाई याकी आसक्ति कौन वस्तुपर है· इत्यादि॥७७॥ दोहा· ज्ञानगलित जो कर्मकों करत लोक व्यवहार॥ सो नाहिं मुखतैं कहत है वै कर्त्ता अ-

धिकार॥ ७७॥ संस्कृत· विद्वांस्तमःप्रकाशादिकंनपश्यतीत्याह॥ ७८॥ श्लोक· क्वतमः क्वप्रकाशोवाहानंक्वचनकिंचन॥ निर्विकारस्यधीरस्यनिरातंकस्यसर्वथा॥ ७८॥ टीका· - क्वेति धीरस्यज्ञानिनः अतएवनिर्विकारस्य निरस्तमोहादिविकारस्यतमः क्वतमसोऽभावेचतान्निरूप्य प्रकाशोवाक्व निरातंकस्य· कालादिभयशून्यस्य हानंक्वचनकुत्रेत्यर्थः अनुरागादिशून्यत्वात्किंचन किमप्यादानादि कर्मापि क्वचनन कुत्रापीत्यर्थः॥ ७८॥ भाषाटीका· - जेज्ञानी निर्विकार अरु सर्वदानिर्भयहै उसकूं अंधकार कहांहै· अरु प्रकाशही कहां· अरु· त्यागकहा·· सर्वत्रएकईश्वरमय है इति॥ दोहा· निर्विकारमहापुरुषकों निरातंक· योंजान॥ कहांउजेलोतम कहा कहांज्ञानअज्ञान॥ ७८ ॥ संस्कृत· ज्ञानीअनिर्वाच्यस्वभावइत्याह॥ ७९ ॥ श्लोक क्वधैर्यंक्वविवेकित्वंक्वनिरातंकतापिवा॥ अनिर्वाच्यस्वभावस्यनिःस्वभावस्ययोगिनः॥ ७९॥ टीका· - क्वधैर्यमिति· योगिनःअतएवनिःस्वभावस्य अतएव अनिर्वाच्यस्वभावस्यधैर्यंक्वविवेकित्वंच क्वनिरातंकतानिर्भयतापि क्वेत्यर्थः॥ ७९॥ ॥ भाषाटीका· - जेज्ञानीपुरुषको अनिर्वाच्य स्वभाव· अरु अनिर्वाच्य स्वभावरहितजे योगीहै उसज्ञानीकूं धैर्य कहां अरु विवेक कहां· अरु· निर्भयताही कहांहै· सर्वएकही ईश्वरमय है इति॥ दोहा· अनिर्वाच्यमहापुरुषकों निःस्वभावतेंजोय॥ धीरजपणोविवेककहां निरातंककहांहोय॥ ७९॥ संस्कृत·

ज्ञानिनस्तत्वदृष्ट्यातुस्वर्गनरकमोक्षादिकं किंचिदपिना-स्तीत्याह ॥ ८० ॥ श्लोकः नस्वर्गोनैवनरकोजीवन्मुक्तिर्नचैवहि ॥ बहुनात्रकिमुक्तेन योगदृष्ट्यानकिंचन ॥ ८० ॥ टीका - नस्वर्गइति सुगमः श्लोकः ॥ ८० ॥ भाषाटीका - नस्वर्गः तामहापुरुषकों स्वर्गादिक अरु ब्रह्मलोकादिक ऊंचे नीचे जहांलोंकछुसुखहै तेनाहीं अरु नैवनरकः कुंभीपाकादिक गर्भादिक जहांलों कछुदुःखहै तेनाहीं अरुजीवन्मुक्तिनचैवहि जीवन्मुक्तिनाहींहिनिश्चयकरि अत्रबहुनाउक्तेनकिंयह नाहीं यहनाहीं इत्यादिक कहा लोकहीये तातें देषुयोगदृष्ट्यानकिंचन जो आत्मदृष्टि प्राप्त भई तो जहांलोंकछुदेषिये चिंतवनादिकनि विषैं आवै तहांलौं वाकों कछु नाहीं वहमहापुरुष अक्षय परम सुखस्वरूप इंद्रिय मन बुद्ध्यादिकनिकों अगोचर सर्वातीत इति तातें इंद्रिय मनोगोचर जो कछुहै सोसमस्त मिथ्याजानि हृदयतें दूरि करि इंद्रिय मनतें अगोचरजो ईश्वर ताकी भावनाराषिनन्मयहो इत्यादि ॥ ८० ॥ दोहा जीवनमुक्तीहैनहीं स्वर्गनरकनहिंताहि ॥ बहुतकहेकहाजानिये योगदृष्टिकरनाहिं ॥ ८० ॥ संस्कृत ज्ञानिनश्चित्तंतुप्रार्थनानुतापादिविकाररहितत्वादमृतेनैव परमानंदेनैवपूरितमित्याह ॥ ८१ ॥ श्लोकः नैवप्रार्थयतेलाभम्नलाभेनानुशोचति ॥ धीरस्यशीतलंचित्तममृतेनैवपूरितम् ॥ ८१ ॥ टीका - नैवेति लाभंनप्रार्थयते अलाभेनसुवर्णाद्यलाभेननानुशोचति अतएवधीरस्यचित्तममृतेनैव परमानंदेनैव पूरितंसत्-

शीतलं आध्यात्मिकादिनापरहितमित्यर्थः ॥ ८१ ॥ ॥
भाषाटीका - नैवप्रार्थयते लाभं सो महापुरुष कौन हू वात पाइवेकी वांछा न करै अरु अलाभेनानुशोचति - कौन हू वस्तु पूर्वसंस्कारतें आई अनवांछी प्राप्त भई थी वह दूर गई तो कछु याके मनविषें आवे नाहीं तानें कहा लोंक हिये धीरस्यशीतलंचित्तं ता आत्मज्ञानी महापुरुषको ऐसो परमशांत स्वरूप हृदय है जो अमृतेनैवपूरितम् ज्यौं काहूकों लेकरि अमृतके कुंड विषैं राषीये अरु वाही समस्त सुखदुःख भूलिजाहु परम अपूर्व आनंदविषैं मग्न रहै समस्त वांछा अवांछा षडूर्मि इत्यादिक सर्वतें रहित होइ अरु वा सुखकों केवल वह ई जाने और कहा कोऊ जानें इति जानें चित्तको शीतल समस्त सुखदुःखादिक भावनविषें सदा एकरस ऐसो साधु पारषिकरि सावधान व्हैकरि संग विषे वा प्रणिपात प्रश्नादिकनिविषैं तत्पर हो इत्यादि॥ ॥ ८१ ॥ दोहा नहिं कछु जाचत काहुपें शोच अलाभहि दूर॥ शीतल मन जा धीरको व्है अमृतमय पूर॥ ८१॥ संस्कृत उक्तप्रायमेव पुनःपुनः भंगीविशेषेणैव वर्णयति॥ ८२॥ श्लोक नशांतंस्तौतिनिःकामोनदुष्टमपिनिंदति॥ समदुःखसुखस्तृप्तः किंचित्कृत्यंनपश्यति॥ ८२॥ टीका - ज्ञानदशायाः सर्वोत्कृष्टत्वख्यापनायनशांतमिति निःकामो विद्याकामाकर्महीनो ज्ञानी शांतं शांत्यादि सद्गुणयुक्तं न स्तौति नापिदुष्टं निंदति तृप्तः सन् समदुःखसुखो भवति निःकामत्वात्किंचित्कृत्यं न पश्यति॥ ८२॥ भाषाटीका - निःकामः जो केवल निःकाम भयो वांछा अवांछादिकनिक-

रिरहितहैसो शांतंनस्तौति· सात्विकीजो पुरुष सेवादि कनिकरि संयुक्त न तो ताहूकी स्तुति करे अरु नदुष्टमपि निंदति· तामसी निंदादिकनिकों करनिहारु दुःखदायक अधर्मी ताहूकों कदाचित निंदादिक नकरैंहैं कैसो सम दुःखसुखः सुख अरु दुःख इत्यादिक देहकेहैं· आत्मा दुहूतें न्यारो यों जानिकरि समानचित्त है ताहीतें स्वस्थः ज्यों सुमेरु पर्वत पवनको चलायो नचलै त्यों समस्तविका रनितें रहितव्है स्थिर भयोहै तातें किंचित्कृत्यंनपश्यति· एक ईश्वरमय भयो कछु साधन कर्मादिक देषते एनाहीं है· तभाव ईमिड्यो इति तातें निंदास्तुति सुखदुःख झूठे· जानि दूरिकरि स्थितव्है ईश्वरमय हो इत्यादि ॥८२॥ ॥

दोहा· श्लाघाकरैन शांतकी खलकीनिंदानाहिं॥ सुखदुःखसमकरकैं कछू कारजदेषतनाहिं॥८२॥ ॥

संस्कृत· न श्लोक· धीरोनद्वेष्टि संसार मात्मानंतु दिदृक्षति ॥ हर्षामर्षविनिर्मुक्तो नमृतोनच जीवति॥८३॥ टीका· – धीरइति धीरोज्ञानीसंसारंनद्वेष्टि संसारदर्शित्वाद्बाधितानुसंधानाद्वा नथात्मानंदिदृक्षति अवाप्तसाक्षात्कारत्वात् अतएव हर्षामर्षविनिर्मुक्तस्तथाजीवन मरणादि रहितः सदैकरूपत्वादित्यर्थः॥८३॥ भाषाटीका· – धीरः आत्मज्ञानीजोमहापुरुष सो संसारंनद्वेष्टि· संसारको द्वेष निंदादिक नकरैं सो काहेतेंकिजाते· आत्मानंतु दिदृक्षति आपुको संसारनाही देषतु· देहको देषतुहै सोदेह यह आपनी देषते एनाहीं· न्यारोहै· दूजोअर्थ संसारको द्वेष निंदादिक शत्रुजानि दुःखादिकनिको देनिहारो जानतनाहीं· काहतेंजातें नद्र

तं

नं

क्षति· संसारद्वेष देषतेई नाहीं किंतु आत्मानंद्रक्षति भेदाभेद दूरिकरि एक आपुहीको देषतुहै तातें कोनकी निंदा कोनकी स्तुति ऐसी दृष्टिआई तातें हर्षामर्षविनिर्मुक्तः सुखदुःखदुहुंकरि रहित भयो ऐसो महापुरुष· नमृतोनचजीवति· नमर्योईकर्योजाई· अरुनजीवनईकर्यो जाई· मृतक क्यों कर्योजाई· जोप्रत्यक्षजीवते आवतें जातें देषतें सुनतें अनेक कर्म करतें देषीये· अरुजीचतोक्यों कहीये· यहतो ज्यों मृतककों कोऊ अनेक भांति निंदाकरो· स्तुतिकरो मानापमान शुभाशुभ शीतोष्णादिक अनेक भावप्राप्तहोहि अष्टसिद्धि मूर्तिमंत लक्ष्मी रंभादिकस्त्री शत्रु मित्र स्वर्गनरकादिक परि वह कछुजानै एनाहीं तौं· याकीगति इति तातेंसंसारको अपनपोजानि द्वेषादिकनितें रहितहो· सुखदुःखमिथ्या स्वप्नप्रायजानि सुखस्वरूपहो इत्यादि॥ ८३॥ दोहा· धीरनद्वेषीजगतको देखतआनममान॥ हर्षामर्षरहीतव्है जीवनमरणसमान॥ ८३॥ संस्कृत· श्लोक· निःस्नेहः पुत्रदारादौनिःकामोविषयेषुच॥ निश्चिंतः स्वशरीरेपिनिराशः शोभतेबुधः॥ ८४॥ टीका· – निःस्नेहइति निराशोबुधः शोभते दीप्यते कीदृशः पुत्र दारादौनिःस्नेहः प्रीतिरहितः विषयेषुनिःकामः भोगेच्छारहितः स्वशरीरेपि भोजनादिचिंतारहितः ॥ ८४॥ भाषाटीका· – बुधः शोभते आत्मज्ञानीजो महापुरुष केवलः सर्वोपरि सुखमय सोई विराजतुहै· कैसोहै सो पुत्रदारादो निःस्नेहः पुत्रस्त्री भाइ· बंधु कुटुंब सेवग धनधान्य ग्रहादिक समस्त सामग्री वि·

षेंजाके कहुं लेशमात्र स्नेह नाहीं अरु निःकामोविषयेषु
च. समस्त इंद्रियनिके अर्थ तिनकी कदाचित इच्छा नाहीं
अरु निश्चिंतः सशरीरेपि उत्पत्ति प्रतिपाल मृत्क सुखदु
खादिक समस्त कर्माधीन जानिकरि आपनी देह हूकी चिं
ता जाको नाहीं ऐसोहै इति तातें समस्त को स्नेह दूरिक
रु अरु इंद्रियार्थ निकी इच्छा दूरिकरु अरु समस्तचिंता
निवारु नाहीक्षण ईश्वर मयहो इत्यादि ॥८४॥ दोहा
॥ निर्मोहीस्रुतदारमें कामीविषयन नाहि ॥ चिंताहीन
शरीरमें शोभितआशनसाहि॥८४॥ संस्कृत ॥
श्लोकः तुष्टिः सर्वत्रधीरस्ययथापतितवर्तिनः
॥ स्वच्छंदंचरतोदेशानू यत्रास्तमितशायिनः ॥८५
॥ टीका - तुष्टिरिति धीरस्यज्ञानिनः यथाप्र
तितेन यथाप्राप्तेन वर्तते तिष्ठति तस्य यथापतितवर्तिनः
सर्वत्र प्रारब्ध प्राप्ते सद्वस्तु नासद्वस्तुनि चतुष्टिरात्मतोष
एवचरतस्तथास्वच्छंदं अनपेक्षित प्रारब्धवशान्नानादे
शान्विचरतः यत्रवने वानगरेरवासूर्योस्तमितस्तत्रैवशा
यिनः शयनंकुर्वतः ॥८५॥ भाषाटीका - यथा
पतितवर्तिनः वांछाअवांछादिकनिकरि रहित ज्योंज्यों आ
इपरै त्योंत्यों आसक्त करि रहित वर्ततुहै अरु स्वच्छंद-
देशान्चरितः स्वतंत्रभयो निमित्तकरि रहित आपनी इ-
च्छादूष जे अनेक तिनि विषें विचरतुहै अरु यत्रास्तमित-
शायिनः मोहनिद्राजाकी दूरिभईहै अरु आठहू प्रहरवि
षें थोरेही नाममात्र सोवतुहै तो धीरस्य ऐसोजो महा
पुरुष नानादेशनु विचरतुहै सोवतुहै परि तुष्टिस्तत्रास्ते
याकी दृष्टि सूत्रना ब्रह्मतें एक निमेष नाही निवर्त होतइ

निश्र

ति· तातें साधुको बाहेरको आचरण मति देषहि आश· यदेष· अरु तूं सदा निरंतर आपनो सूत्र ईश्वर विषें राष· इत्यादि॥ ८५॥ दोहा· तुष्टि सदा जाधीरकों यथालाभ विश्राम॥ स्वइच्छा सब दिन फिरै आथै जहां सु काम॥ ८५॥ संस्कृत श्लोक· पततूदे· तु वादेहो नास्यचिंता महात्मनः॥ स्वभावभूमिवि श्रांतिविस्मृताशेषसंसृतेः॥ ८६॥ टीका·- पतत्विति देहः पततु म्रियतां वा अथवा उदेतु जीवतु वाउभयथापि अस्य ज्ञानिनाश्चिंता न भवति कीदृशस्य - स्वभावो नाम निजरूपं सएव भूमिस्तत्र विश्रांत्या विस्मृत समस्त संसारस्य॥ ८६॥ भाषाटीका·- देहपत तु वा उदेतु· देह जो है चोवीस तत्त्वनि करि निर्मित विकार निहीको संघात सो जो विनसि जाइ तो विनसो अरु जो उपजे तो स्वरूपहीउपजो अरु जो योंही वर्तते रहीये तो· रहो· परि महात्मनः अस्य चिंता न· जो आत्मज्ञानी महा पुरुष है· ताके या शरीरकी चिंता कदाचित नाही· देह परि दृष्टि एनाहीं काहेतें स्वभावभूमिविश्रांत विस्मृताशेष· संसृतेः॥ त्रिगुणमय संसारको जो अभाव मिथ्या जानि बो अरु आत्माको भाव सत्य जानिवो सोई भयो जो भू मि ताविषें विश्रामहि प्राप्त भयो है· तातें विसारि गयो है· संसार जाको ऐसो जो है· ज्यों हाथी घोरे पर्वत वृक्ष· अटारी इत्यादिक भूमि छोडि करि औरऊ जे अनेक स्थू ल तिनि विषें जो होइ तो गिरिवे की चिंता करि सदा सं· युक्त रहे· परि जो भूमि विषे· स्थित होइ· अरु जो अनेक मिलि याके आगे अनेक भांति गिरिवेकी बातेऊ कहें-

तोहू कदाचित याके गिरिवेकी चिंताऊनऊपजे॰ यहचिं ताभूलिऊगई॰ निश्चलताकी बुद्धि स्थिरभई॰ अरुऔरजे कछूहै तेभूमिहीतें ऊपजेहै॰ अरुभूमिहीकी आधाररहै ब॰ हुरि भूमिहीमें लीनव्हैहै॰ वेसब चंचल भूमि स्थिर त्योंही जोकछु त्रिगुणमयविस्तार सो समस्त आत्माहीतें उपजे अरु आत्माहीके आधार रहै॰ आत्माहीविषैं लीनहोइ॰ आत्मा स्थिर अक्षय॰ एसमस्त चंचल क्षयवंत॰ तातें जोलों या॰ विस्तारविषैं मनको वासो राषे तोलगि चंचल केसंग हऊचं चलताकों प्राप्त होइ॰ जब निश्चल आत्माविषैं मनकोवा सोराषे तब निश्चलको निश्चल॰ तातें तूंयह चंचल क्षयवं तजानि मनकों षेचिकरि निश्चल अक्षय स्वरूप ब्रह्मवि षें राषिकरि तन्मयह्वो इत्यर्थः ॥८६॥ दोहा॰ जन्मत मरतजुदेहकौं चिंतनकछूनकाम॥ शेषजगतकौं भूलिके सुभावभूविश्राम ॥८६॥ संस्कृत॰ ॥

श्लोकः अकिंचनः कामचारो निर्द्वन्द्वश्छिन्नसंशयः॥ असक्तः सर्वभावेषु केवलोरमते बुधः॥८७॥ टीका॰ - अकिंचन इति केवलोनिर्विकारो बुधो॰ रमते कीदृशः अकिंचनः नास्तिकिंचित्परिगृहीतंयस्यसः अकिंचनः अतएवकामचारः विधिनिषेधायकिंकरः स्व॰ च्छंदचारी अतएवनिर्द्वन्द्वः सुखदुःखादिशून्यः छिन्नसं॰ शयः द्वैताशयशून्यः सर्वेषुभावेषु विषयेषु असक्तः सं गशून्यः ॥८७॥ भाषाटीका॰ - अकिंचनः जाके कोनहू वस्तुको नाममात्रहू संग्रह नाहीं अरु निर्द्वन्द्वः सु॰ खदुःख मानापमानादिक समस्त द्वन्द्वनितें रहितहै अरु क्षीणसंशयः जाकेदेह आत्मा परमात्मा विषें कोनहू सदे॰

हनाहीं· अरुसर्वभावेषु असक्तः समस्तजेहे शब्द स्पर्श रूप रस गंध इत्यादिक इंद्रियनके अर्थ तिनिविषें कदाचितजाके मनकी आसक्त नाहीं तौ ऐसो महापुरुष कामचारः यद्यपि आपनी इच्छा पूर्वक लोकनिके उद्धार निमित्त अनेक भांतिके इंद्रिय व्यवहारकू आचरतु है· अनेकनिसों मिलि संगति और करतु है तोहू केवलो रमते देषियतु है· आचरण करते· परिवाके अभिरामके वस्तु एक अद्वैत आत्माविषें है· सो काहेतें· जातें बुधः ज्ञान सूर्य के प्रकाशतें अज्ञान रात्रि केसोई बेतें जाग्यो है· ज्यों सोवते स्वप्नविषें अनेक व्यवहार करे हुते· अरु जागि परे हु ने त्ते आपही सकल मिथ्याजाने· त्यौं जे कछू व्यवहार करहुते अरु करतु है ते समस्त स्वप्नसमान करि लेषतु है कछू देषते नाहीं· जाग्रद्रूप एक अद्वैत ईश्वरविषें रत है· इति· तातें तू कछू नाममात्रहू संग्रहमति करहि· अरु समस्त द्वंद्व पुण्य· पाप सुख दुःख मानापमान शीतोष्णादिक देहके जानि आपुको निर्द्वंद्व जानि मनतें दूरि करु अरु अज्ञान को निवास समस्त संदेह जानि करि मनतें दूरिकरु· अरु इंद्रियार्थनिविषें कदाचित मनकों मतिजानें दे केवल सत्यस्वरूप ईश्वरकी भावनाराषि तन्मय हो इत्यर्थः ॥८७॥ दोहा·

निसकिंचन कारज करै क्षीणद्वंद्व संदेह । व्है अशक्त सब-भावमें केवलफिरत विदेह ॥ ८७ ॥ संस्कृत ॥

श्लोक निर्ममः शोभते धीरः समलोष्टाश्मकांचनः ॥ सुभिन्नहृदयग्रंथिर्विनिर्धूतरजस्तमाः ॥ ॥ ८८ ॥ टीका·- निर्ममइति धीरोज्ञानी शोभते दीप्यते यतो निर्ममः अतएव समलोष्टाश्मकांचनः ज्ञानबले

नसुभिन्नोत्हृदयग्रंथिरहंकारोयस्यसः तथाविनिर्धूतरजस्तमसीयस्यसः ॥८८॥ भाषाटीका- धीरः शोभते· देषरेपुत्र जेकोऊ शोभावंत कहीयतहैं·तेशोभावंत नाहीं· जोकोहू कहीये तातें अधिक अधिक अनेकहैं· अरु सकल वांछादिकनिकरि सहितहैं· अरु कालके भयकरिभीत सदारहतहैं· तातें जिनको सदाकल्पतेहीजाई· अरुसदा परवस भये भयभीत रहैं· जिनको सुख जल तरंग समान चंचलहैं तिनिको कहा शोभतुहैं· तातें सर्वोपरि सदा निरंतर संसारकी आदिमध्य अंतविषें आत्मज्ञानीजो महापुरुष केवल सोभतुहैं·सो काहेतें निर्ममः तिहुलोक की· प्रभुता आठऊ सिद्धि इत्यादिक समस्त याके आधीन सेवाहीविषें सदा सावधान रहैं· परि यह कदाचित उनकी ओर उत्तम जानि चितै वोऊनकरै सो काहेतें समलोष्टाश्म कांचनः जातें प्रज्वलित अग्नि अरु पाषाण· अरु सुवर्णादिकसमस्तधन इनिविषें समानबुद्धिराषतुहै· सो कौनभांतिकि भाई·यह सकल इंद्रिय मनोगोचर उत्तम मध्यम निकृष्टमायाहैं· सब समानहैं·मिथ्याहैं· ईश्वर या सकलतें न्यायेहैं तातें·जोयाही सकलतें न्यारोहू जियै तो ईश्वर परायणहूजिये· बहुरि कौनभांति· ज्यौं पाषाण अनेकहैं·परि उनतें न· कार्य· अरुन अकार्य· तातें उनपरनैं अनुरक्तिनैंविरक्ति समभावरहैं· त्यौंही सुवर्णादिकधन अष्टसिद्धि याके सदा समीपहीरहैं· परियहन इनतें कछूक कार्यदेषै· अरुन अकार्यहीदेषै· तातें नैंअनुरक्त· अरु नैंविरक्त सब मिथ्याजानि करि समभाव रहै· तौजी कहैकि कार्यतोजानैंहु कछूनाही·परि अकार्य क्यौं नहीं· एक यह मायाई संसार

विषें भ्रमावती है· तातें यापरि विरक्त क्यों नआनिये तो देष· प्रज्वलित अग्निकी उपमा हीतें दीन्ही· यों विचारैकि-भाई जोप्रचलित अग्नि देषियेतो वातें तौन कछू कार्य-अरु नअकार्य· तातें क्यों अनुराक्तिकरिये· अरु क्यों वि· रक्ति करीये याकोतो दाहक स्वभावहै·परि आपतें उठि करि दाहै नाहीं· त्यौं यह स्रुवर्णादिकधन आपतें उठि करि बंधन होइ नाहीं·ए सकलही मूढलोक आपही जा· इ बंधतहैं· तातें अनुरक्ति विरक्ति यापर क्यों आनीये·अ रु यों विचारैकि, भाईज्यों प्रज्वलित अग्निहै अरु वाकौंस्प र्श करीये तो केवल जरिवोई करिये· और स्रुख कछू नाम मात्रही नाही· ज्यों पतंग प्रत्यक्ष देषियतुहै त्यौंही या स्रुव र्णादिक सामग्रीतें स्पर्शतें केवल संसार विषै भ्रमिवो दुः खई है· और स्रुख कछू नाम मात्र हूं नाही अरुज्योंही ज्यों· अग्निको अधिकार त्यौंहीत्यौं जरिवेको अधिकारहै·-ज्यों एककेघरकौं अग्निलगै अरु बहुत बर्धमान होइ तो· अनेक पतंग जहांतहां तें आइ उडि उडि पडै अरु औरऊ जे वाके निकट घर हैं तेऊ जरैहि· ज्यों स्रुवर्णादिकजे धन तेजौं काहूके बर्धमान होहि तौ वाकोदृढ बांधि संसारवि षें डारैंहि· अरु वाके अंगी प्रसंगी नकों अरु याके प्रकास-कों देषिकरि दूरि दूरितें मनुष्य पतंग अनेक आइ आइ बं धिबंधि संसार विषै भ्रमैंहि· अरु त्रिविधजे नाना प्रकार के संतापनिकरि तपे तो ज्यों समस्त अग्नि निवर्त होइ अ रुकेहू दिन निकरि समस्त अग्निके जोरतें ऊपज्यो हू तो जो घरमें संताप सो जिसकाल निवर्त होई तब जाइ स्रुखऊ पजे· ज्यों हीज्यों समस्त स्रुवर्णादिधन दूरिकरै अरु केते

हूदिननिकरि मनकी वासना जब दूरि होहि· जबजाइसु
खउपजै इत्यादि तातें अग्निकीउपमा द्रव्यकों दीन्हीता
तें यह महापुरुष इत्यादिमतें करि संयुक्त अनुरक्तिकरि
रहित समस्ततें न्यारो है तातें सर्वोपरि शोभतुहै· बहुरि
काहेतें सुभिन्नहृदयग्रंथिः और सकल अहंकार करि
कै संयुक्त है· आपुको हीन कोऊ नाहीं कहावतु· यह महा·
पुरुष ऐसो सर्वोपरिहै· परि यह अहंकारको नामई नाहीं
राष्यो· अपनपौ दूरिही कर्यौ है· आपकौं देषतेई नाहीं·
बहुरि कैसो है विनिर्धूत रजस्तमः विशेषकरि दूर करे है·
राजस तामस जाकरि जहांलों कछु द्वंद्व पुण्य पाप सुख दुः
ख मानापमानादिक संसारविषें भ्रमावनिहारे है· ते सक·
लरजोगुण तमोगुणमय है· तातें द्वंद्वनिके मूलकरि रहि
त है· सात्विकी प्रकृति करि संयुक्त· एक सत्यस्वरूप ईश्वर
की भावनाविषें तत्परहै इत्यादि· तातें सर्वोपरि केवल एक
यहई सोभतुहै तातें तूं समस्त इंद्रिय मनोगोचर सामग्री
मिथ्या जानि अनुरक्ति विरक्तीहू करि रहित ह्वै सकलतें न्या
रो हो· अहंकार परम शत्रु भ्रमरूप रूगोसो हृदयतें दूरि
करु· राजस तामस दूरि करु· अरु एक सत्यस्वरूप ईश्वर
की भावना राषि तन्मय हो इत्यादि॥ ८८॥ दोहा·
निर्ममता शोभित सदा सम कंचन सम लोह॥ जबहियेग्रं
थीषुलैं तब, ह्वै रजतम निर्मोह॥ ८८॥ संस्कृत· ॥
श्लोक· सर्वत्रानवधानस्य न किंचिद्वासनो हृ
दि॥ मुक्तात्मनो वितृप्तस्य तुलना केन जायते॥ ८९
॥ टीका· - सर्वेषु विषयेषु सर्वत्रानवधानस्य एका
ग्रतारहितस्य तया न किंचिद्वासनः हृदि मुक्तात्मनः कर्तृ

त्वाध्यासरहितात्मनः अतएवात्मानंदेनविशेषेण तृप्तस्य केन तुलना जायते ज्ञानिव्यतिरिक्तस्य ईदृशस्याभावादि त्यर्थः ॥८९॥ भाषाटीका· – सर्वत्र अनवधानस्य समस्त इंद्रिय व्यवहारनिविषें असावधानहै काहेतें त्द दिनकिंचिद्वासनः जातें त्हदयविषें समस्त नाहीं करिजा न्यौहै· दूजोअर्थः बाहेर समस्त कर्मनिविषें सावधानहैं करने देषियतुहै· अरु त्हदयविषें निश्चयकरि स्वप्नप्राय- जानतुहै· अरु वाहीतें मुक्तात्मनः जाकोमन कौनहू वस्तु विषें बध्यौनाहीं ताहीतें वितृप्तस्य विशेष करि आत्मानं द संतुष्टहैतो ऐसे महापुरुषकौं तुलना केनजायते· ऐसो कौनहै· जाकी समानतादीन्ही जाई· जैसो वह तैसो वहई और दूजो कौनव्है सकै· निर्बंधके समान बंध्यो क्यौं करि हो· ई· अरु यह स्वाधीन सदा सुखमय सदातृप्त· निर्भय- ओर सकल पराधीनसदाचिंतादुःखमय· सदा अतृप्त·स दाभयभीत·तिनकी समानता क्यौं करहोई इति· तातें स- मस्त व्यवहार मिथ्याजानि करि स्थिरहो· अरु मनको क हूं आसक्ति मति होनेदे इत्यादि॥ ८९॥ दोहा· ॥ सबविषयननतें मनरहित हिये वासनानाहि॥ मुक्तात्मामहापुरुषकी समतातुलेनकांहि॥ ८९॥ संस्कृत·- अतुलनामेवविशेषेणविशदयति॥ ९०॥ श्लोक·

जानन्नपिनजानाति पश्यन्नपिनपश्यति॥ ब्रुवन्नपिनचब्रूते कोन्योनिर्वासनादृते॥ ९०॥ ॥

टीका· – जानन्नपीति निर्वासनात्ज्ञानिनः ऋतेऽन्यः को लोकदृष्ट्या मनसा जानन्नपि वस्तुतो नजानाति· तथा चक्षुषा पश्यन्नपि वस्तुतो नपश्यति ब्रुवन्नपि नच ब्रूते क

तृत्वाभिमानाभावादित्यर्थः॥९०॥ भाषाटीका·
जानन्नपिनजानाति· समस्त शुभाशुभ वेदोक्त लौकि
क व्यवहार जानतुहै· परि समस्त स्वप्न प्राय जानि करि हृ
दयविषें कदाचित् आनतु नाहीं· अरु प्रवृत्ति निवृत्तिदो
ऊ जानतुहै·परियो रहतुहै· मानौ मूर्षहै· अरु पश्यन्नपि
नपश्यति समस्तव्यवहार देषतसंते स्वप्नसे जानि कदा
चित् मनमें यों नाही जानतु किमेक छु देष्यौ कि कछु दे
षतहौं· अरु ब्रुवन्नपिनब्रूते· अनेकनिसों यद्यपि बोलि
बोऊ करतुहै तोहू नैंतो ऊनहीकों जानें अरु नैं यों जाने कि
में कछु कस्यो किकहतुहौं· याको मनजो आत्मविश्राम
विषैंस्थित भयो तातें व्यवहारादिकनिविषें स्योहू प्राप्त·
होइएनाहीं·जो व्यवहारऊ करै सो सकल विश्रामसौ ली
येही करै तातें कोन्योनिर्वासनाहनै समस्त वासना जि
नि दूरिकरीहै· ऐसै महापुरुषही छोड़िऐसो आचरण औ
र कौन करिसकै· भावकह्याकि देषुरे पुत्र जो समस्त को·
त्याग करि एकांतविषैं रह्योहै· अरुये संसार व्यवहार
हृदयविषें मिथ्यानाहीं जान परे· समस्त वासना हृदय
नें दूरि नाही करी तो वाविषैं साधुको लक्षण एकऊ नाहीं
आयो· अरुजो समस्त मिथ्याजानि हृदयतें दूरि करयो
है अरु इंद्रिय व्यवहार ऊ करतूहै तो हू वह कछु करतूना
हीं· सबतें निर्लेपहै· तातें तूं साधुको कर्म मति देषहि·
केवल आशय देष· अरु तूं यह ज्ञान हृदयमों राषिकरि·
यों आचरु· इत्यादि॥९०॥ दोहा· देखतसंते
नदेखही आनतसंतेअजान॥ बोलतनहि बोलतसंते
कोहैयाविनआन॥९०॥ संस्कृत· श्लोक

भिक्षुर्वाभूपतिर्वापियोनिः कामः सुशोभते ॥ भावेषुगलिताशस्यशोभनाशोभनामतिः ॥ ९१ ॥ ॥
टीका· – भिक्षुरिति यस्यज्ञानिनः उत्कृष्टेषु भावेषु शोभना अपकृष्टेषु अशोभनत्वाद्रागाद्विनीमतिर्गलिताअतएवयोनिः कामः सभूपतिर्वाजनकादिवत् · भिक्षुर्वायाज्ञवल्क्यादिवत् शोभत एवभावेषु निर्विकल्पत्वात् राज्यं भिक्षावातस्यनबंधायेत्यर्थः ॥ ९१ ॥ भाषाटीका·
हेपुत्र देषु·भिक्षुर्वा·जोभिक्षा मांगिखाइ सबेको त्याग करै·दूजी कौपीन मात्रऊ नराषे· एकाकी निःकिंचन एकांतवासी होइ तो होउ अरु भूपतिर्वा·जो समस्त भूमिको अधिपति अनेक संचय कर्मादिकनिकरि सहितहे तो होउपरियों निः कामः सशोभते· केवलजाके हृदयविषे कदाचित कौनऊ इच्छा अनिच्छा नाहीं·सशोभते·सर्वोपरि एकसो शोभतुहै· नाहीतें भावेनुगलिताशस्य इंद्रियनिकेमनके जेसकल अर्थ तिनकरि रहितजो महापुरुष ताहीकी शोभना आचरणि सो शोभनामता तिहुंलोकविषें विराजति हैं इति· तातें इंद्रिय मनोगोचर जहांलों कछुहै ताकी आशक्ति अरु वांछादूरिकरि सुखस्वरूप हो इत्यर्थः ॥ ९१ ॥
॥ दोहा· निःकामीशोभतसदा राजाअथवारंक ॥ जोअशक्तविषयानतें ताकीबुद्धिनिशंक ॥ ९१ ॥ ॥
संस्कृत· श्लोक क्कस्वाच्छंद्यंक्कसंकोचः क्कचातत्वविनिश्चयः ॥ निर्व्याजार्जवभूतस्यचरितार्थस्ययोगिनः ॥ ९२ ॥ टीका· – क्केति योगिनः निर्व्याजंनिःकपटंयदार्जवंऋजुबुद्धिस्तद्रूपस्य आत्मनिष्ठत्वाच्चरितार्थः पूर्णार्थः नाम्नः स्वाच्छंद्यंस्वेच्छाचारित्वं क्क

तथासंकोचः प्रकृत्यादिसंवरणं कृततत्वविनिश्चयः कृतकर्तृत्वाध्यासाभावात् अतएवनिर्व्याजंयदार्जवंवक्रबुद्ध्यभावस्तद्रूपस्य॥६२॥ भाषाटीका.- योगिनः आत्मज्ञानीजोमहापुरुषताको कस्वाच्छंद्यं जास्वाचरणतेंस्वेच्छाचारी हूजिये ताकरिकोन प्रयोजनहै. अरु कृतसंकोचः जानें बंधनहोइसोकहा. अरु तत्वविनिश्चयः कृता. ताको तत्वज्ञानके परिचयसो कह्या सो काहेतें हैकैसो. यहमहापुरुष निर्व्याजार्जव भूतस्य समस्तजे कपट दंभादिकतिनकों दूरिकरि अत्यंत कोमल शीतलता ताकों प्राप्त भयो. है. दूजो अर्थ समस्तजो स्थूलसूक्ष्म बिस्तारहै सो लक्षणरूप जानि हृदयतें दूरिकरि महाकोमल शुद्ध शीतल भयोहै.ताहीतें चरितार्थस्य प्राप्तभयेहै अर्थरूप ईश्वर. जाकोजो अनर्थ छोड्यौतौ अर्थकों प्राप्त भयो. दूजो अर्थ समयजानिकरिकि भाई. जासमयकों ब्रह्मादिक इंद्रादिक कालतें संसारतें बारबार भयभीत व्हैव्हैवांछतहैं कि भाईजो मनुष्यदेह पाय एतौ ईश्वरको भजनकरि परम संकटतें छूटिये. ईश्वरमयहूजिये. सो समयमनुष्यदेह मोकों प्राप्त भईहै. तातें अबके असावधान भये कहूंछूटी वोनाहीं. योंजानिकरि चौरासीहू लक्ष. जोनि मांवेषें भोगएजहैं. इंद्रियभोग तिन्कों मिथ्या जानि दूरिकरु. सदा निरंतर सावधान व्हैकरि आपनो अर्थ जिनि साध्योहै. ऐसोजो महापुरुष इति. तातेंसाधुसकल साधनकरि स्थल पहुंचे. आत्मस्वरूप जान्यो. अबकछू करणीयनाहीं. तातें उनविषें योंमतिविचारहि कीभाई इनके कछू साधननाहीं देषीयतु. एतौ अ

ज्ञानसें देषियतुहैं· केवलउनको आशय देषु· अरुयहम नुष्यदेह परम दुर्लभजानि करि महाभयानक संसार समुद्रकी नांव जानिकरि गुरुकों षेवट जानिकरि ज्यों नावविषें आपनो समस्त मतो दूरि करिज्यों षेवट बैठारे त्यों बैठिये· ज्यों कहै त्यों करिये· त्यों जाइ पार पहुंचिये· त्यों हीयानांवकों पाइ करि आपनो मतो दूरि करु· केवलगुरुके वचनविषें तत्परव्हैकरि संसारकेपार ईश्वरविषें प्राप्तहो इत्यर्थः ॥ ९२॥ दोहा· स्वेच्छाचारीपनो कहा और कहासंकोच॥ निःकपटी चरितार्थकों कहाविनिश्चयशोच॥ ९२॥ संस्कृत· श्लोक· आत्मविश्रांतितृप्तेन निराशेनगतार्तिना ॥ अंतर्यदनुभूयेन तत्कथंकस्यकथ्यते॥ ९३॥ टीका·–आत्मेति आत्मनि विश्रांत्या स्थित्या तृप्तेन अत एवाशारहितेन अत एवच गतार्तिना गतदुःखेन ज्ञानिनायदंतःकरणेनुभूयेत तत्कथं कंप्रकारंधर्ममाश्रित्य कथ्यते प्रकारस्यैवधर्मस्याभावात् कस्यवा अधिकारिणः कथ्यते तादृशाधिकारिणोभावात् ॥ ९३॥ भाषाटीका·–आत्मविश्रांतितृप्तेन· आत्मविषेजो मनको विश्राम ताकरि सदा आनंदमयहै सो काहेतें· निराशेन· जाको पायेतें कौनऊ आशा करिवेनाहीं रहितसो काहेतें· गतार्तिना· जातें· कालकर्म सुखदुःखादिक मायाकी कौनऊ व्यापनानाहीं तातें दूजोअर्थः निराशेन· जब समस्तमिथ्याजानि दूरि करीये· समस्त आशा दूरि करिये· तब उपजैतो अंतर्यदनुभूयते· हृदयविषें उपज्योहै· ऐसो परम अपूर्व अद्भुत परम आनंद सो कस्य कथ्यते· कासों कहिये· तोजो कहै·

कृपाकरि मोसों कहीयेतो· कथंकोनभांति कह्योजाई· वहसुख जाकेंउपजे· केवल सोईजाने· इंद्रियनिके जेसु- खदुःख तेंइंद्रिय गोचरहै यह आत्माको परम आनंद आ त्माईजानैं· अरु जोकहि कोनऊ समानताकरियें साचेको झूठेकी समानता क्यों करि बनै· तातें वह सुख पाइवेको· जतन सदा सावधान व्है करु· यहई जतनजो सकल मि- थ्याजानिकरि समस्त आशा दूरिकरु· एक ईश्वर सत्य स्वरू पकी भावनाराषि तन्मयहो इत्यर्थः ॥ ९३॥ दोहा· ॥
आत्मज्ञानतें तृप्त भये आशादुखमिटिजाय॥ जबसुखहि यउपजततबै कहतकौनपैंआय॥ ९३॥ संस्कृत· ॥
श्लोकः सुप्तोपिनसुषुप्तोचस्वप्नेपिशयितोनच ॥ जागरेपिनजागर्ति धीरस्तृप्तः पदेपदे॥ ९४॥
टीका· - सुप्तइति धीरस्यसुषुप्तो नसुप्तः स्वप्नेपिशयि तोनच जागरेपि नजागर्ति अवस्थात्रतीया बुद्धिस्तद्विविक्ता त्मज्ञत्वात् इदमेवाभिप्रेत्याह· पदेपदेक्षणेक्षणे अवि रतंनित्यानंदानुभवतृप्तः ॥ ९४॥ भाषाटीका· -
सुप्तोपिनसुषुप्तोच· ज्यों भूलिकरि सोईजाइ एसुषुप्ति· अवस्थाविषे· अरु कोउ कछू लेजाईतो लेजाउ किंवा धरि· जाऊ किंवा शत्रुआवे अरु मित्रआवे सिंह सर्पादिक आवे कोऊनिंदाकरो अरु कोऊस्तुति करो अरु और अनेक ना नाप्रकारके व्यवहार होहि परियह कछू नजानेतो त्यौंहीव ह महापुरुष है परि सोई करि सुषुप्ति अवस्थाहीमें नाही प्राप्तभयो· जहांतहां आवते जाते· बेठते· उठते दीषियतुहै देषयतुहैं· भाव कहाकि समस्त संसार व्यवहार स्वप्न प्राय देषतुहैं· परि सोयो नाहीं· एकतो यहइ जो प्रत्यक्ष जागते

देषिये अरु सोवत्तनाहीं· आत्मस्वरूप समुझै· ओरतीन-
योंलोक सोवत्तहै· आपुकों समुझतेनाहीं· अरुजागरेपि
नजागर्ति जागतेसंते नाहीं जागतु· भावकह्या·एकतोयह
ईजो प्रत्यक्ष जागते देषियत्तुहै· परि लक्षण सोवतेके ऐसे·
जोसुखदुःख मित्र शत्रु शीतोष्ण मानापमान· अरु निंदा
स्तुत्यादिक समस्त संसार व्यवहार होतसंते कछु जानतु-
नाहीं· अरु जागतुहै· ज्ञानसूर्यके प्रकाशतैं मोहरात्रि दूरिभ
ई· तातें जाग्योहै· आत्मस्वरूप समुझीयोहै· तातें जाकोसं
सार जागिवो कहतुहै· समस्त कर्म व्यवहार·सावधान भ-
यो करतुहै तेसमस्त यहसमुझतेई नाहीं·स्वप्नसे देषतुहै
तातें धीरः पदेपदे तृप्तः ऐसोजो आत्मज्ञानी महापुरुष सो
ईजहांईजाइ तहांई परम आनंदमय ज्यौं एक मत्स्यकौं ले
करि समुद्रविषैं डारिये· अरु वहजो लाषकोस कूंजाय तो-
हू कहुंगयो नाहीं·समुद्रही विषे आनंदितहै· त्यौंही ईश्व
रअपार·जब याकेईश्वर दृष्टिभई तबजहांईजाइ तहांई·
श्वरविषें आनंदितहै· इति तातैं संसारकी ओरसोउन समस्त
व्यवहार स्वप्नप्रायजान ईश्वरकी ओरजागु· आपुकोंस
मुझि करि सुखमयहो इत्यादि ॥९४॥ ॥ यहांतेंक्षे
पकहै·॥ ॥ अरुयह जागिवे सोइवेको प्रसंग श्रीकृष्ण
अर्जुनसोंगीताके द्वितीय अध्यायविषें कह्योहै· तदाह·
श्लोक· यानिशासर्वभूतानां तस्यांजागर्तिसंय-
मी ॥ यस्यांजाग्रतिभूतानिसानिशापश्यतोमुनेः
॥१॥ टीका·- सर्वभूतानांयानिशा· ब्रह्मादिस्थावरप
र्यंतजेप्राणी तिनको जोदिन विषे सोइवो निवृत्तिदिनतो-
नादिन समस्तनिकेसोइवेविषें संयमीजाग्रती·जिनसम

स्त इंद्रिय· मन बुद्धि चित्त अहंकारादिक अत्यंत चंचल· ते स्थिरस्वरूप एक ईश्वरविषें बांधेहैं· स्थिर भयोहै ऐसो जो कोऊ एकमहापुरुष सो जागतुहै· आत्मस्वरूपकों देषतुहै· यस्यां जाग्रति भूतानि जा रात्रिविषें समस्त प्राणीजागतेहै· प्रवृत्तिसों रात्रि महाअंधकार ताविषें आत्मदृष्टिआछन्नभयेतें आपकों विनिदेषे दुःखमय भ्रमतहै· परि निवृत्तिदिनकों सुख जानेबिनु वहई दिन मानि सुख मानि रहेहै· तो ऐसी महा अंधकार रात्रिविषें सानिशापश्यतो मुनेः निर्मल दृष्टिकरि संयुक्तजो मुनि जिनि समस्त प्रकृतिनकौं मौन ग्रहवायोहै· समस्तचेष्टानितें निवर्त्त करवायोहै· सो जोकदाचित देषतुहै तो ज्यौं सोवते अरु नानाप्रकारकेव्यवहार करैं देषै अरु जागेतें मिथ्या करि जानैं यों देषतुहै अरुज्यौं कछुक निद्रावश भयोहै· कछुक बैठे जागतुहै· अरु वाके आगें अनेक वाद्यतृ नृत्य गीतनिंदा स्तुति अरु शत्रुमित्रादिक व्यवहार होइतो वहदेषैसुनैतो परि हृदयमें कछुनजानैकियहकछुमें देष्योकि यह सुन्योतो महापुरुष यों देषतुहै· इत्यादि· अरु यह रात्रि दिनको प्रसंग गीताहीविषें कह्योहै· निवृत्ति दिन प्रकाश· प्रवृत्तिरात्रि अंधकार तदाह अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः इत्यादि· धूमोरात्रिस्तथा कृष्णः इत्यादि जानिये· ॥ २॥ ॥ यहां तक क्षेपकहै

॥ दोहा· सूतौनाहिसुषुप्तिमें सुपनेशयननहीर ॥ जाग्रतमेंजागतनहीं क्षणक्षण तृप्तसुधीर ॥ ९४ ॥ ॥

संस्कृत· श्लोक· ज्ञः सचिंतोपिनिश्चिंतः सेंद्रियोपिनिरिंद्रियः ॥ सुबुद्धिरपिनिर्बुद्धिः साहंकारोनहंकृतिः ॥ ९५ ॥ टीका· – ज्ञ इति ज्ञो ज्ञानी

लोक दृष्ट्या चिंतादिसहितोऽपि वस्तु तस्तद्रहितः विविक्तात्मदर्शित्वात् ॥ ९५॥ भाषाटीका· – ज्ञः आत्मज्ञानीजो महापुरुष सो सचिंतोपिनिःश्चिंतः सदानिरंतर· एक ईश्वरकेचिंतवनविषें महाचिंता करि युक्तहे·परम आनंदितहे· परिजिन काल कर्म सुख दुःखादिकनिकी चिंता नकरि ब्रह्मादिक समस्तजीव सदा निरंतरग्रस्तई रहत· हे· ते चिंतायाहि भूलिही गईहे· जाननेई नाही अरु सेंद्रियोपि निरिंद्रियः समस्त इंद्रियनिके संयुक्तहे अरु समस्त इंद्रियनिके अर्थ सदायाकेनिकट आधीनई रहतहे· परि मानो इंद्रिय हैये नाहीं·यों रहतुहे·अरु त्योंहीयद्यपि अनेक इंद्रियार्थ आचरिवोऊ करतुहे· तोहू कछु जाननेई नाहीं किमें कछुकर्यो कि करिवेहे कि करतुहे· अरु सुबुद्धिरपि निर्बुद्धिः जहांलों समस्त त्रिगुणमयको विस्तारहे· तहांलों कुबुद्धिहीकरि युक्तहे· जो काहूविषे सुबुद्धि होइ तो भ्रमत सदा स्योंरहे· तातें केवल एक यह सुबुद्धिकरियुक्त आत्मस्वरूपको देषतसंते· आनंदकरि पुर्ण विराज· तुहे· तो ऐसो होतसंते निर्बुद्धि कह्या· बुद्धि करिरहितहे·भावकह्या· जाको संसारी लोक बुद्धि कहतहेकि यह बुद्धिजो निषेध कर्मदूरिकरि उत्तम पुण्य कर्मनिकों वर्धमानकरीये· शुभाशुभ सुखदुःख आपनो परायो जानिये·यह बुद्धिः औरजो विपरीताचरण सो कुबुद्धि तातें यह कुबुद्धि दुहुं करि रहितहे· अरु साहंकारो नहंकृतिः केवल अहंकार ही करि संयुक्तहे· परिकहू· अहंकारको लेशनाही समुझतेई नाही· भावकह्या· केवले एक अहंकारहीहे· योंजानतुहेकि केवलएक अद्वैत स्वरूप मेहीहों द्वैत भावईनाहीं· –

यह तो यों· अरु ज्यों संसारमें देहादिकनिविषें अहंका रहै कि यह में अरु यह और इत्यादिक कछू समुझतेई नाही इत्यादि· तातें एक ईश्वरके चिंतवनविषें तत्पर व्हैकरि सक लचिंतवन दूरि करु अरु समस्त इंद्रियनके अर्थनिविषेंक दाचित मनको भूलिहू मतजाने· देह अरु संसारकी बुद्धि· सुबुद्धि या दुहुको दूरिकरि एक ईश्वरतें सुखजानि जतन करु· अरु अहंकारकों दूरिकरु· अरु एक अद्वैत आपुही कों जान कर द्वैतभावकों दूरिकरु सुख स्वरूप हो इत्यादि ॥९५॥ दोहा· चिंताछतेनिचिंत है इंद्रियछतेन कार ॥ बुद्धिछतेनिर्बुद्धिजन अहंकारिनहंकार ॥ ९५॥

॥ संस्कृत श्लोक· नसुखीनचवादुःखी नविरक्तोनरागवान् ॥ नमुमुक्षुर्नवा मुक्तोनकिंचि न्नचकिंचन ॥९६॥ टीका· - नसुखीति लोकह ष्ट्यासुखीत्यादिरूपोपिवस्तुतस्तद्रहितः अंतःकरणा, ध्यासरहितत्वात् नविरक्तोविषयद्वेषाभावात् नवामुक्तः पूर्वमपिबंधनाभावात् तथाकिंचिन्न सदैकरूपत्वात् तथा किंचनकिंचिदपिनचानिर्वाच्यत्वात् ॥९६॥ भाषा टीका· - नसुखी नचवादुःखी · आत्मवेत्ताजो महापुरु ष सोनतो सुख संयुक्त अरुन दुःख संयुक्त भाव कहाकि संसार विषें सुखदुःख कहीयतुहैं· तिन दुहुकरि रहित· एक अद्वैत सुख स्वरूप आपुही विराजतुहै· अरु नविरक्तो नरागवान्· समस्तत्रिगुणमय विस्तारविषें नतो आपुकों बंधनजानि करि कौनहू वस्तु विषें विरक्त अरु न अनुरक्त भावकहाकि आत्मस्वरूप एक अद्वैत जान्यो और कछु दू जी वस्तु जानतेई नाहीं· तातें कोनवस्तु विषें विरक्त होई-

कौनविषैं अनुरक्त होइ· अरु नमुमुक्षु र्नवामुक्तः नतोमो
क्षकी इच्छा करि संयुक्त अरुनमुक्त· भाव कहाकि जो अ-
क्षय आनंदमय एकई आपहीकों जान्यो· दूजो हैये नाहीं
तो मोक्षकहा अरुवांछा कैसी· यहतोयों अरु मुक्तनाहीसो
कहातोदेष· जो एक आपुहीहैतो कौनबांधै कौन छोडै किं
वाकाहेसों बंधै काहेतें छूटै इति अरु नकिंचिन्नचकिंचनः
नतौकौनहू वस्तु करि संजुक्त अरु नकौनहू वस्तुकरि र-
हित· भावकहा एक आपुही अद्वैत अक्षय स्वरूप होवि
राजतुहै· दूजो कछु हैये नाहीं· तातें कौन वस्तुको संग्रह
होइ· यहतोयों· अरु कौनहू वस्तुकरि रहित नाही सोकहा
तोदेष· ब्रह्मादिक अरु इंद्रादिक अष्टसिद्धि मूर्तिमंत ध
र्म अरु लक्ष्मी सरस्वती कीर्ती शोभा धृति क्षमा इत्या
दिक तीनोलोक जाको आराधन सावधान भये सेवा कर
तहैं· तातें उनकों निःकिंचन कैसोकह्यो जाई· अरु सम
स्त विस्तार ज्यौं देहविषै अनेक नाना प्रकारके अंगत्यों आ
पनोई रूपजानि करि स्थित हैं· कौनऊ वस्तु दूजीजानि
न्यारो नही रहतो· तातें निःकिंचन क्यों कहिये इति· ता
तेंयों जानि करि अरु आचरण करि सदा सुखस्वरूप
हो· अरु यों सहज सुखाचरणविषें स्थितजोहै साधु·
ताकों जानिकरि सेवाविषें तत्परहो इत्यर्थः ॥ ९६॥ ॥
दोहा· नाहींसुखीदुखीनही नहिंविरक्तनहिंराग॥
नहिमुमुक्षुनहिमुक्तहै नहि कछुकिंचनथाग ॥ ९६॥ ॥
संस्कृत· श्लोक· विषयेपिर्नविक्षिप्तः स-
माधौन्नसमाधिमान्॥ जाड्योपिनजडोधन्यः पां
डित्येपिनपंडितः॥ ९७॥ टीका· – विषयेपी

ति धन्योज्ञानी लोकदृष्ट्या विषयेपि वस्क्तो नविक्षिप्तःस्व प्रकाशात्मानुभवात् लोकदृष्ट्यासमाधौप्रतीय मानेपि नसमाधिमान् समाधिकर्तृत्वाध्यासाभावात् लोकदृष्ट्या जाड्ये प्रतीय मानेपिनजडः स्वानुभवशालित्वात् लोकदृष्ट्या पांडित्ये प्रतीयमानेपिनपंडितः पंडितोहमित्यभिमानाभावात्॥ ९७॥ भाषाटीका -धन्यः तिहुं लोकविषै धन्य परम बंदनीय जो आत्मज्ञानी महापुरुषसो विषयेपिनविक्षिप्तः कदाचित सावधान नाही· अरु कछु समुझत नाहीं· कौनहू व्यवहारविषै चित्तकौं स्थिरतानाहीं बावरोहै·परि सदाकाल सावधानहै· बावरोनाहीं· भावकहाकि समस्त संसार असावधानहै· अरु आपनो सत्यस्वरूप समुझतऊनाही विक्षिप्तचित्तहै· भ्रमकरि नाना प्रकारके भेदाभेद व्यवहार विषैं सावधान रहै सांची और सावधान नाहीं· तातैं यहई साच सो करिकै थापतुहै· तातें संसारकीओर यह महा पुरुष असावधानहै· कछुवै नाही समुझत· अरु तिहुंलोकविषें सावधान केवल एक परब्रह्म ही है· जिनचित्तको· भ्रम समस्त दूरिकरु· अरु आत्मस्वरूप जान्योहै· इति· अरु समाधौन समाधिमान्· समाधिविषैहै· परि समाधि सहितनाहीं· भावकहाकि समस्ततें मन खैंचिकरि एक आत्म स्वरूपविषैं प्राप्त करिये· ताकौं नाम समाधिहै· तातें यह सावधानहै· याभांतिकी समाधि करिरहित है· अरु अद्वैत आत्मस्वरूप कौंजान्यौ· द्वैतभावई दूरिभयो तातें समाधिके लगाइवेकी कहांरही· सदासर्वकाल समाधिरूपईहै· आत्मानंदविषें मग्नहै· अरुजाड्योपि न-

जडः जडताकरिसंयुक्तहै. परिजडनाहीं. भावक हाकिज्यों
जड पाषाणशिला सुखदुःख पुण्यपाप निंदास्तुति शत्रु-
मित्र संकल्पविकल्प शुभाशुभ समस्त भेदाभेद व्यवहा
रनिकों कछु नसमुझै. कछू जानैएनाहीं. सकलचेष्टानिकरि
रहितहै. त्योंहीयह महापुरुष है. परिओर समस्त तीनयों
लोक जड देहादिक मिथ्या सामग्रीसों मिलिकरि तन्मय
ह्वै जडसे ह्वै रहेहैं. यहदेह इंद्रियादिक समस्त जड संसार
व्यवहारनकीओर पाषाण शिला समान ह्वै करि शुद्धचै
तन्य आत्मस्वरूपविषें विराजतुहै. अरु पांडित्येपि नपंडि
तः समस्त पंडित व्यवहारनिकरि संजुक्तहै. अरु विद्याशा
स्त्र श्रुति स्मृत्यादिकनिविषैं जेनाना प्रकारकी पुष्पितावा
णी शब्दादिचातूर्यता करि रहितहै. अरु विद्यादिक निपु
नसो पंडित नाहीं. किंतु एक आत्म दृष्टिकरि संजुक्तसो पं
डित कहिये इति. तातें इनि लक्षणनिकरि संजुक्त साधुको
जानु कछु विद्याचातूर्य मति विचारहि इत्यादि॥ ९७॥ ॥
यहांतेक्षेपकहै:॥ ॥अरुयह पंडितको प्रसंग श्रीभा
गवतके एकादशस्कंधके उनतीसवें अध्यायविषे श्रीकृष्ण
जीउद्धवसों कह्योहै. तदाह. श्लोक पुल्कसेब्रा
ह्मणेस्तेने ब्रह्मण्येर्के स्फुलिंगके ॥ क्रूरेऽक्रूरके:
चैवसमदृक्पंडितोमतः॥ १॥ टीका. - पुल्कसेचां
डालविषें ब्राह्मणे श्रुति स्मृति उक्तजे आचरण तिनिकरि
संजुक्तजो ब्राह्मण ताविषें. स्तेनें ब्राह्मणादिकनिके सर्वस्व
को हरनिहारो ताविषें ब्रह्मण्ये ब्राह्मणादिकनिको अने
कसुखसामग्रीनको देनहारो ताविषें अर्कें. तपस्यादि-
कनिके तेजसेकरि पूर्णहै ताविषैं स्फुलिंगके अत्यंतअ

सक्तजे जन्नके महमहूं करिके रहित ताविषें क्रूर परा-
ये अकार निंदादिक विकार नहि करि जीवतुहै ताविषें
अक्रूरकेचैव परम सिद्धांतः करणजो साधु ताविषैंतो इत्या
दिक समस्तनिविषें समदृक् जो देहबुद्धि विषेकों दूरिक-
रि समान एक आत्मा देषतुहै सोही पंडितोमतः पंडित
ही कहिये इति- तोब्राह्मण अरु चांडाल इनिविषैंतो जा-
तिकी विषमताकरि बडोभेद अरु ब्राह्मणादिकनिके स-
र्वस्वको हरनिहारो अरु ब्राह्मणादिकनिकों अनेक प्रका
रकी सुख सामग्रीकों देनहारो इनविषें कर्मकी विषम-
ता करिबडोभेद अरु तेजोराशिविषें हीनैंतेजविषें स्व-
रूपकी विषमता करि बडो भेद अरु क्रूरपणाविषे वा अ
क्रूरपणाविषें स्वाभावकी विषमता करिके बडोभेद तो-
इत्यादिक नानाप्रकार विषमभेदनि संयुक्तजे तीनहू लोक
तिनकों देषतसंते जाके कदाचित भेदबुद्धि नउपजै केव
ल समान आत्मदृष्टि रहै सो पंडित कहिये इत्यादि॥१॥
यहांतक क्षेपकहै॥ दोहा· विनयमैंविक्षि
प्तनांहि सिद्धसमाधिनमांहिं॥ जाडीहै परिजिडनहीं पढे
परिपंडितनांहिं॥ ९७॥ संस्कृत श्लोक·
मुक्तोयथास्थितोस्वस्थः कृतकर्त्तव्यनिर्वृतः॥
समः सर्वत्र वैतृष्ण्याद्रस्मरत्यकृतंकृतम्॥ ९८॥
टीका· - मुक्तइति मुक्तःप्रारब्धवशाद्यथा प्राप्तास्थितौ
सत्यामपिस्वस्थचित्तः तथाकृते पूर्वकृते कर्तव्येच करिष्य
माणेच कर्मणिनिर्वृतः संतुष्टः अभिनिशोद्वेगशून्यः अ-
तएवच सर्वत्रसमः वैतृष्ण्यादिदम् कृतं इदंचं कृतं इति न-
स्मरति॥ ९८॥ भाषाटीका· धीरः अकृतकृ

तं नस्मरति आत्मवेताजो महापुरुष सो कछु कर्यो अन-
कर्यो साचो झूठो शुभाशुभ नाहीं जानतु कछु इत्यादिक·
निविषें समुझनेही नाही सोकाहेतें·जब इनविषै हुतो·जब
जानतो हुतो परि अब एक अद्वैत ज्ञानतें द्वैत को भावई दू
रि भयो सबतें अतीत भयो· ताहीतें·यथास्थितस्वस्थः प
रमसुखविषे स्थिरभयो· समस्त वांछा अवांछादिकनितें र
हित भयो· ताहीतें कृतकर्तव्यनिर्वृतः यहमें कर्यो·य
हमोहि करिवे है इत्यादिक निकरि रहित भयो ताहीतें सर्व
त्रसमः समस्तविषम भेदाभेदनिकों देषत संते कछुजानतु
नाहीं· सबनिविषें समदृष्टि है तातें वितृष्णः सकल इच्छा
अनिच्छा दूरि भई· तृष्णा संतापादिक समस्त निवर्त भ-
ई· ताहीतें यथास्थिति· निर्भय भयोजो भावतु है त्यौंरह
तहे अरु ज्यौंजाने त्यौं रहो इति तातें साधु निर्भय भये ज्यौं
हीजाने त्यौंही रहजाई· साधुके आचरण मति दूषहि·
केवल आशय देष संगकरु· अरु इनलक्षणनिकरि संयु·
क्त है निर्भयहो इत्यादि· ॥ ९८॥ दोहा· यथाप्रा
प्तमें स्थितसदा कृतकर्तव्यनिवर्त॥ समसर्वत्रवितृष्ण
तें नहींस्मरतेकर्त॥ ९८॥ संस्कृत· श्लो
क· नप्रीयते वंद्यमानो निंद्यमानोनकुप्यति
॥ नैवोद्विज तिमरणे जीवने नाभिनंदति॥ ९९
॥ टीका·- नप्रीयतइति केश्चित्पुरुषैर्वंद्यमानो
नतुष्यति· निंद्यमानोनकुप्यति· मरणेउपस्थिते सति·
उद्वेगनप्राप्नोति· आत्मनोनित्यत्वानुसंधानात् अतए
वजीवने सति नाभिनंदति नतुष्यति॥ ९९॥ भाषा
टीका·- नप्रीयते वंद्यमानः अनेक भांति करि देवता

पंडित राजादिक समस्त नानाप्रकारकी सेवा करें स्तुतिकरें अरु विनतीकरें परियहउनकों कदाचित संतुष्टनहोइकी एसकल मेरी सेवा पूजा स्तुत्यादिक करत हैं अरु निंद्य मानोनकुप्यनि अनेक भांतिकर कोऊ आइ दुःखदे अरु निंदाकरीकै कोप उपजावहि परि कदाचित कोपनकरहि ज्यों पालामेथे अग्नि नउपजे अरु मरणेनैंवोह्विजेत् जो प्रत्यक्ष मूर्तिमंत काल मृत्यु आप देषै तौहू कछु क्षोभन उपजै अरु जीवनेनाभिनंदति ज्यों कल्प कोटि वर्ष तक आयुर्बल होइ तौहू कछु आनंदमानेनाहीं इत्यादिक समस्त व्यवहार देहके जानेतादेहकों मिथ्याजानि न्यारोभयोहै तातें निंदास्तुत्यादिक समस्त भावयों देषै ज्यों काहूको होत देषिये इति तातें योंजानि सुखस्वरूप होयकरें आनंदमें रहै इत्यर्थः ॥ ९९॥ दोहा नहिंप्रसन्नहैस्तुतिकिये निंदाकियेनकोप॥ मरतसतेंउद्वेगनहिं जीयेसुख न अनोप॥ ९९॥ संस्कृत श्लोक न धावतिजनाकीर्णंनारण्यमुपशांतधीः॥ यथा तथा यत्र तत्र सम एवावतिष्ठते॥ १००॥ ॥ इतिश्रीअष्टावक्रविरचिते शांतिशतकं संपूर्णं ॥१८॥ टीका – नधावतीति उपशांतधीः पुरुषः जनाकीर्णप्रदेशं नानुधावति नाप्यरण्यं सर्वत्र शांतत्वात् यथातथा जनसंमर्दप्रकारेण वा यत्र तत्र वनेपर्वते वा सम एव स्वस्थचित्त एवावतिष्ठते आत्मसाक्षात्कारत्वात् ॥ १००॥ ॥ इतिश्रीमद्विश्वेश्वरविरचितायां अष्टावक्रटीकायां शांतिशतकं नाम अष्टादश प्रकरणं

+ नदसंमर्दप्रकारेण

समासम् ॥ १८॥ भाषाटीका. – उपशांतधीः आत्मस्वरूपकों पायेतें शांति स्थिरभई है बुद्धिजाकी ऐसोजो महापुरुष सो जनाकीर्णनधावति. जहां मनुष्यादिक प्राणी रहतहै तहां कदापि नजाई. अरु नारण्यं. जहां मनुष्यादिकको वासो नाहीं. एकांतहै नतो नहांजाई. तोरहैकहां. यत्रतत्र. कछुगृह अरु वनादिक. इनको भेदजाने एनाहीं. जहांईरहै तहांईरहै. तोरहैको नभांति. यथातथा. भेदाभेद, विचाराविचार करि रहितज्यौंहीज्यौं आइपरै त्यौंहीत्यौं वर्त्तन संते समएवावतिष्ठते. देहज्यौं रहो त्यौं रहो-जहांरहो तहांरहो यहसमस्त भेदाभेदनि करि रहित सदा सर्व काल एकरसहोय विराजतुहै. तातें तू समस्त गृह अरु वनादिक भेदाभेद दूरिकरि सब एक आत्माजानिकरि समचित्तह्वैकरि स्थिरहो. अरु साधुको कछु कर्माकर्म अनुरक्ति विरक्तादिक आचरण मति देषहि. केवल आशय देषि साधुसेवानि विषैं तत्परहो इति. अरु देषु. और उपदेश जोमैं तोसों संक्षेपमात्र कहे है. सो. अरु यह साधु लक्षण उपदेश विस्तार सों कह्यो. सो याकेनिमित्त जो साधुकों पहिचानि करि सेवादिकनि विषैं तत्परहोइतो निवृत्तिकी सामग्री. शम दम तितिक्षा ज्ञानादिक सहजही विनाकष्टही समस्त पाइ करि परम पदकों पाइयो. ज्यौं समुद्रविषे प्राप्तभयो ताते समस्तनदी तीर्थादिक सहजही आपही आपही प्राप्त भये. अरु ज्यौं सकल राज्यादिकनिको एकचक्रवर्ती राजाके दरबार पाइये त्यों ज्ञानादिकऊ ठहराय एकचक्र वर्तीजोई

श्वर तिनकोदूरबारजो साधु ताविषें पाइये· तातें केवल शब्द हृदयव्है करि· निश्चय आनि सत्संगविषें सावधा नव्हैतत्परहो किमन्यत् ॥१००॥ दोहा· ज्ञानी कौंहोएकसे जनसमूहवनवास ॥ जैसेंतैसेंजहांतहां समसुखकरतनिवास ॥१००॥ ॥ श्रीधरमनथिर होतजबै तबैशांतिसुखठाव ॥ मिलतआपहीआपमें ज्यौंअग्नीविनकाठ ॥१॥ ॥ इतिश्री अष्टावक्रकी भाषाटीका ताकोशांतिशतकन्नाम अष्टादशमोउपदेश संपूर्णभयो ॥१८॥ ॥ श्रीरस्तु ॥

अथएकोनविंशतितमोपदेशप्रारंभः

श्लोक· साध्यसाधनरूपेणज्ञानेज्ञानेगुरोर्मुखा त् ॥ शिष्यः स्वात्मनिविश्रांतिमष्टभिःप्राहसंस्फुटं १ ॥ ॥ एवंतत्वज्ञानिनः स्वभावभूतां शांतिंश्रुत्वास्वकृता र्थतयागुरुंपरितोषयितुं आत्मविश्रांत्यष्टकं शिष्यःस्व यमाह ॥१॥ श्लोक· तत्वविज्ञानसंदंशमा दायहृदयोदरात् ॥ नानाविधपरामर्शशल्योद्धा रः कृतोमया ॥ १॥ टीका· - तत्वेति हेगुरो म- याभवतः सकाशात् तत्वविज्ञानोपदेशमादाय स्वहृ- दयोदरात् नानाविध परामर्श एवयत्शल्यं तस्यउद्धा रः अपहारः कृतः ॥१॥ भाषाटीका· - याही- प्रकार तत्वज्ञानी महापुरुषनके स्वभावतेंही प्रगटभई जो शांति ताकों सुनिकें आपने कृतार्थता करिकें श्री गुरु अष्टावक्र मुनिकौं तोषित करनेके अर्थ आत्म वि श्रांतिजोहै सो आठऊ श्लोक करि शिष्य कहतहै· हेगु रोमयाभवतःसकाशात्· तत्वविज्ञानोपदेशमादाय· स्व

हृदयोदरान्· नानाविधपरामर्श·एव यत् शल्यं तस्य उद्धा
रः अपहारः कृतः इत्यन्वय· तत्वविज्ञानसंदेशं आदाय
हेगुरो·एक अद्वैतज्ञान सोई भयो जो अभेद्यकवच ताकों
पहिरि नखशिखतें आपको ज्ञानकवचविषे राषिकरि ना
नाविध परामर्श शल्योद्धारः कृतोमया· नाना प्रकारकेजे
अत्यंत दुर्जय शत्रु जिनकेवश ब्रह्मादिक तीनियों लोक
हैं तिनिके अत्यंत क्रोधकरि संयुक्तजे वज्रहू ते अधि·
क नानाप्रकारके शस्त्र पराक्रम तिनकों जो तिरस्कारसो
में कर्यो आपुकों राष्यो· तातें निभय भयो तो ऐसोज्ञा
नकवच कहां पायो तो हृदयोदरान्· आपने हृदयहीमें
हुतो·परि ज्यों लगि भूलिगये तों लगि शत्रुनके वशभ-
ये·दुःखमय हुते· अब श्रीगुरुकेवचन तिने हृदयमें षो
ज्यो तो पायो इति· तातें औरजे कछु जतन करे तिनतें·
याकेशत्रु नहीकों पोषहें· और याकों छूटिवो नाहीं कहूं
तातें जा कवचकों पहिरेतें मेरीजयभई· सोई कवचतो
हृदयमोंहे· केवल हृदयविषे स्थिरहैं·बैठिकरि षाजतो
कार्य इत्यर्थः॥ १॥ दोहा· गुरुज्ञानसंदेशनिज
गुरुमुखलियेविचार॥ हृदयोदरनानाविधहि कीयेशल्य
उधार॥ १॥ संस्कृत· तदेवस्पष्टयति॥ २॥ ॥
श्लोक· क्वधर्मः क्वचवाकामः क्वचार्थः क्वविवेक
ता॥ क्वद्वैतं क्वचवाद्वैतं स्वमहिम्निस्थितस्यमे॥ २
॥ टीका·-क्वधर्मइति धर्मार्थकामाः अपिहृद
योदरात् निरस्ताः क्षयिष्णुत्वादित्यर्थः स्वमहिम्निस्थि-
तस्य तस्यमेमम विवेकताक्वद्वैतंवाद्वैतंच क्वचिन्मात्रविश्रां
तस्य बिवेकानुपयोगान् उत्तीर्णेतु परेपारे नौकयाकिंप्रयो

जनमितिन्यायात् द्वैतस्यच ज्ञानबाधितत्वात् अद्वैतस्य द्वैतसापेक्षत्वे नास्वाभाविकत्वात् विवेकादयोपि ममन संतीत्यर्थः ॥ २॥ भाषाटीका - तौदेखु जहांलौं कछु दूजोहै तहांलों सब शत्रु तातें तत्वज्ञान कबनतें मनको द्वैत भाव दूरि भयो एक मेंही अक्षय आनंदमय विराजतुहौं सोई कहीयतुहै स्वमहिम्नि स्थितस्य में स्वयंप्रभुस्वतः प्रकाश स्वयं स्फुरव स्वरूपजोहै मेरो ईश्वररूप ताहीविषें समुझि करि स्थितभयोहों जामें ताकों क्वधर्मः धर्मजो कछुदूजो कहिये सो कहां अरु क्वचवाकामः कामकहीये सो कहां अरु क्वविवेकता मोक्ष कहीये सो कहां अरु क्वचवा द्वैतं जो अद्वैत एकही कहीये तौ क्योंकरि कह्यो जाइ त्यौं तातें यौं जानि तन्मय हो इत्यादि ॥ २॥ दोहा कहांधर्मकहां कामहै कहांविवेकरुअर्थ ॥ निजस्वरूपस्थित मोहिमें द्वैताद्वैतीव्यर्थ ॥ २॥ संस्कृत क्वद्वैतमित्युक्तमेवविशेषतः प्रपंचयति ॥ ३॥ श्लोक क्वभूतं क्वभविष्यंच वर्तमानमपि क्वच ॥ क्वदेशः क्वच वानित्यं स्वमहिम्नि स्थितस्यमे ॥ ३॥ टीका - क्वभूतमिति कालस्यापि ममास्फूर्तेस्तदुपाधिक भूतभविष्य वर्तमानान्यपिनसंतीत्यर्थः नित्यंस्वमहिम्नि स्थितस्यममदेशोपिनास्तीत्यर्थः ॥ ३॥ भाषाटीका - स्वमहिम्नि स्थितस्यमे अद्वैत आत्मस्वरूपविषें स्थितहों जोमें ताकों क्वभूतं जोकछु व्हैवीत्यो सो कहां अरु क्व भविष्यहां आगेंजो कछु होनहारोहै सो कहां अरु वर्तमानमपि क्वच जो कछु अबहीतें कहीये सो कहा अरु क्वदेशः

देशविशेषतें कहा· अरु क्वचवा कालः काल अकाल कहि येसो कहा· जोहैतत्व हैये नाहीं एकस्वयंप्रभू मेंहीहो· इत्यादिकजेकछु भावहैं ते देहके हैं अरु सो देह चित्तके भ्रमकरि जानियतसीहैं परि है कछु नाहीं· तातें योंजानिकरि निर्भयहो इत्यर्थः ॥३॥ दोहा· भूतभविष्यवर्तमान कहा कालत्रयनेस ॥ निजस्वरूपथित मोहिकों कहा नित्य कहा देश।३॥ संस्कृत· अतनिर्व्याप्नोती,त्यात्मासच्च व्याप्यमपेक्ष्य कथ्यते स्वमहिम्निस्थितस्यममात्मादिकं नास्तीत्याह ॥४॥ श्लोकः क्वचात्मा क्ववानात्मा क्वशुभं क्वाशुभंतथा ॥ क्वचिंता क्वचवाचिंतास्वमहिम्निस्थितस्यमे ॥४॥ टीका·—सुगमःश्लोकार्थः॥४॥ भाषाटीका·— स्वमहिम्निस्थितस्यमे· स्वयंप्रभु एक स्वरूपविषे स्थित भयो जोमैं· ताकों क्वस्वप्नः स्वप्न कहिये सो कहा· अरु क्वसुषुप्तिःसुषुप्ति कहिये सो कहा· अरुतथा जागरणं क्ववा· जागिवो जाग्रती कहियेहै सो कहा· अरु क्वतुरीयं· तीनहूं अवस्थाकर जोचोथी अवस्था तुरिया कहीहै सोकहा· अरु भयअभय क्ववा· भय कहियतहै सो कहा· अरु अभय कहीयत है सो कहा· तातें योंजानिकरि जो स्वस्वरूप है त्योंही स्थित व्है विराजतु है इत्यर्थः॥४॥ दोहा· कहा स्वपन सुषुपति कहा· कहा सुजाग्रतिजीति ॥ निजस्वरूपथितमोहिकों कहातुरियाकहाभीति॥४॥ संस्कृत· श्लोक· क्वस्वप्नः क्वसुषुप्तिर्वा क्वचजागरणंतथा॥ क्वतुरीयभयंवापिस्वमहिम्निस्थितस्यमे॥५॥ टीका·—

कस्वप्न इति स्वप्नादयो बुद्धेरेवावस्थास्ता मम न संति एत-
त्रितयाभावेन त्रिरूप्यतुरीयावस्थापि मम नास्ति तथा-
भयादयोप्यंतः करणधर्मा मम न संतीत्यर्थः ॥ ५ ॥ ॥
भाषाटीका. - स्वमहिम्निस्थितस्यमे. स्वयंप्रभु आ-
त्मस्वरूपविषें स्थितजो हों मे ताकों क्वचात्मा. यह आ
त्मा कहीये तो सो आत्मा दूजो कहा अरु अनात्मावाक्व
अहं आत्मा न होइ मायाहै तो माया कहीये सो कहा.
अरु क्वशुभं कहा शुभ. अरु क्ववाशुभम् कहा अ-
शुभ. अरु क्वचिंता. चिंता कहीयत है सो कहा. अरु अ
चिंतावाक्व. निश्चिंत व्हैकरि रह्यो है सो कहा. इति. ता
तें यों विचार करि सुखस्वरूप हो इत्यर्थः ॥ ५ ॥ दो
हा. आतम कहा अनातमा कहा शुभाशुभनित्त ॥
निजस्वरूपथित मोहिकों चिंता कहा निचिंत ॥ ५ ॥ ॥
संस्कृत श्लोक. क्वदूरं क्वसमीपं वा बाह्यं
क्वाभ्यंतरं क्व वा ॥ क्वस्थूलं क्व च वा सूक्ष्मं स्वमहिम्नि
स्थितस्य मे ॥ ६ ॥ टीका. - कदूरमिति सर्वत्रपरिपू
र्णस्य मम दूरसमीपादिकं नास्ति. पूर्णदर्शिनो मम स्थू-
लसूक्ष्मदृष्टिरपि नास्तीत्यर्थः ॥ ६ ॥ भाषाटीका. -
स्वमहिम्निस्थितस्यमे. स्वयंप्रकाश एकस्वरूप विषैं स्थि
त हौं जो मैं ता मोकों कदूरं दूरि कहिये सो कहा. अरु-
समीपं वाक्व. निकटनाम समीप कहियत है सो कहा.
बाह्यंक्व. बाहर कहियत है सो कहा. अरु अभ्यंतरं क्व. भी
तर कहिये सो कहा. अरु कस्थूलं. स्थूल कहियत है सो
कहा. अरु सूक्ष्मवाक्व. सूक्ष्म कहिये सो कहा. इति
तातें. यों स्वयमेव ही प्रभु जानि करि सुखस्वरूप होइ

रहौ इत्यर्थः॥ ६॥ दोहा. कहादूरअतिनिकट. कहा कहाभीतरउपरूल॥ निजस्वरूपथितमोहिकौं कहासूक्ष्मकहास्थूल॥ ६॥ संस्कृत श्लोक.- क्वमृत्युर्जीवितंवा क्व क्वलोकाःक्वास्यलौकिकम्॥ क्वलयः क्वसमाधिर्वास्वमहिम्निस्थितस्यमे॥ ७॥ टीका.- क्वमृत्युरिति कालत्रये सद्रूपस्य मम जीवनमरणेनस्तः पूर्णात्मदर्शिनोस्यममलोकाभूरादयः नसंति लौकिकंकार्यमपि नास्ति पूर्णस्य ममलयः क्वसमाधिश्च क्व॥ ७॥ भाषाटीका.- स्वमहिम्निस्थितस्यमेंस्वयंएकईप्रभुअद्दय तिनिविषैं स्थित हौं जो में ताकौं मृत्यु क्व मरिवो कहियतुहै सो कहा. अरु जीवितंवाक्व. जीवो कहियेसोकहा. अरु लोकाःक्व. अनेकजेलोक कहियत है सो कहा. अरु क्वचलौकिकं लोकनके वासी ते कहा. अरु क्वलयः लीनव्हैकरि रहिवो सो कहा. अरु क्वसमाधिर्वा. चित्तकों एकाग्रता करि रहिवो सो कहा इति. तातें. यों सर्वातीत एकशून्यस्वरूपकों जानिकरि तन्मयहो इत्यर्थः॥ ७॥ दोहा. कहामृत्युजीवनकहा कहा लोकलौकीक॥ निजस्वरूपस्थितमोहिकौं लयसमाधिकहानीक॥ ७॥ संस्कृत श्लोक. अलं. त्रिवर्गकथयायोगस्यकथयाप्यलम्॥ अलंविज्ञानकथयाविश्रांतस्यममात्मनि॥ ८॥ ॥ इत्यष्टावक्रविरचितायां आत्मविश्रांत्यष्टकं संपूर्णम्॥ १९॥ टीका.- अलमिति धर्मार्थकामकथया योगाभ्यासकथयाविज्ञानकथया वाआत्मविश्रांतस्य मम एतैः प्रयोजनाभावादित्यर्थः॥ ८॥ ॥ इतिश्रीमहिम्ने

श्वरविरचितायां अष्टावक्रटीकायां आत्मविश्रांत्यष्टकं एकोनविंशतिकं प्रकरणं समाप्तम् ॥१९॥ भाषाटीका: ममात्मनि विश्रांतस्य स्वयंप्रभु स्वयंसर्व स्वयंएक स्वयंपरमानंद स्वयंशुद्ध चैतन्य ऐसे आत्मस्वरूप विषे विंश्रांत महि प्राप्त भयो हों जो मैं तामोकों अलं त्रिवर्ग कथया· अर्थ धर्म काम इन तीनों पदार्थन की वार्ता जो है· सो निवर्त होइ· अरु धारणा समाधि यह जो अष्टांग योग ताहूकी वात रहो· अरु अलं विज्ञान कथा· जातें ईश्वर विषे प्राप्त व्है करि जियतु है· जानियतु है ताहूकी वात रहो जो स्थूलही प्राप्त भये तो मार्ग सो कहा· इति· तातें ऐसे सर्वातीत एक अद्वैत स्वरूप प्रभु परमानंद स्वरूप ईश्वरकों आपकोंही जानिकरि तन्मय हो इत्यर्थः ॥८॥ दोहा· ज्ञान योग अरु वर्गत्रय इनतें पूर्ण अकाम ॥ रूपेहि ज्ञान विश्रांतके मन मैं ब्रह्मस्वधाम॥८॥ ॥ श्रीधरज्ञानीज्ञानग्रह देअज्ञानविचार॥ ज्यौं दीपक घ्टतजीमिके काजलदेतविडार॥१॥ ॥ इतिश्रीअष्टावक्रकी भाषाटीका ताको एकोनविंशत मोउपदेश संपूर्ण भयो॥ १९॥ ॥

अथ विंशोपदेश प्रारंभः

श्लोक: आत्मविश्रांत्यभिव्यक्तां स्वभावां मुक्तिशालिनीम् ॥ जीवन्मुक्तिदशां शिष्यश्चतुर्दशभिरब्रवीत्॥१॥· संस्कृत· प्रागुक्तात्मविश्रांतिफलीभूतां विदुषः स्वभावभूतां जीवन्मुक्तिदशां शिष्यश्चतुर्दशश्लोकैर्निरूपयति॥१॥ श्लोक: क्व भूतानि क्व देहो वा क्वेंद्रियाणि क्व वा मनः॥ क्व शून्यं क्व च नैराश्यं मत्स्वरूपे निरंजने॥१॥ टीका·- क्व भूतानी

ति· निरंजनेसर्वोपाधिमलशून्ये मत्स्वरूपे भूतदेहेंद्रियमनांसिक्क तर्हिकिंशून्यमस्तिनेत्याह· कशून्यमितिनहिसदात्मनिसतिशून्यं संभवतीत्यर्थः नैराश्यमपिस्वाभाविकंन· आशानिरूप्यत्वादित्यर्थः ॥१॥ भाषाटीका· - हेगुरो मत्स्वरूपे एकअद्वैतप्रकाशस्वयं· प्रभुजोमेरोईश्वर ताविषैक्कभूतानि· पृथ्वी आप तेज वायु आका· श एतेजेपंचभूत कहियेतेकहा· क्ववादेहः भूतनिकरि निर्मितजोदे हसोकहा· अरु इंद्रियाणिक्क· इंद्रिय कहियेतेकहा· अरु क्ववामनः मन कहिये सोकहा· कशून्यं सकलवस्तुकरि रहित कहिये सोक हा अरु क्वचनैराश्यं सकल आशकरि रहित कहिये सो कहा· सो मेरोस्वरूपनिरंजनेः जहांलों इंद्रिय मनोगोचर कछु कहीयतुहैसो सकल अंजनमायांधकारहै ताकरि रहितजोस्वरूप अरु अद्वैत· जोकछु कहिये सोहैये नाहीं केवल कहिलेयोहै· यहस्वरूप दूजेक रिरहितहै· एकआपुहीहैइति· तानें यों भावनाराषि तन्मयहोइति ॥१॥

दोहा· पंचभूतकहादेहकहा कहाइंद्रियमन वास॥ मोरनिरंजनरूपमैं कहांशून्यनैरास॥ १॥

संस्कृत· ॥श्लोकः क्वशास्त्रंक्वात्मविज्ञानं क्ववानिर्विषयमनः॥ क्वतृप्तिः क्ववितृष्णत्वंगत द्वंद्वस्यमेसदा॥ २॥ टीका· - क्वेति सदागतद्वंद्व· स्यमेममशास्त्रं क्वतज्जन्यंविज्ञानंच क्व· आत्मविश्रांत्यासर्वस्या गलितप्रायत्वात् निर्विषयंमनोपिन तस्यापिगलितप्रायत्वा· त् अतएवचतृप्तिरपि नतथातृप्तिसाध्यवैतृष्ण्य चित्तत्वमपि नचित्तस्यैवगलितप्रायत्वादित्यर्थः॥ २॥ भाषाटीका· मै ऐसोजोमेरोस्वरूप· तास्वरूपकों क्वविद्या· विद्याके पाये सं· सारतें छूटिये· सो विद्याईकहा· अरु क्वशास्त्रं जिनिशास्त्र निके पढियेतें ज्ञानोत्पत्तिहोय तेई शास्त्रकहिये· अरु आ·

त्मविद्यानं क्व· आत्माकोजानिवोसोईकह्या· अरु निर्विषयंम
नः क्व वा· भाईजोमनकी समस्त विषयादिकनिकी वासना
दूरिहोई तो निवृत्तहूजिये· तो विषय अरु विषयनिकरि रहित
मनसोकह्या· अरु क्व तृप्तिः भाई अबमेंसंतुष्टभयोतो कोनवा
तकरि संतुष्टभयो· अरु संतुष्टकहिये सोकह्या· अरु तृष्णाक
हिये सोकह्या· अरु कौनवस्तुकीतौहैकैसो मेरोस्वरूप· गत·
द्वंद्वस्य· पुण्य पाप· सुखदुःख शुभाशुभ· द्वंद्वनिकरि रचित
जोहैसंसार· तासंसारते रहितहै एकपरमानंदस्वरूप· इति·
तातें ऐसे आत्मस्वरूपकों विचारत संते तन्मयहो इत्यर्थः ॥२
दोहा· कह्याशास्त्रविज्ञानकह्या निर्विषयीकह्यामान॥ धाप्यौ
अनधाप्योकह्या सदा द्वंद्वगतजान॥२॥ संस्कृत· श्लोक·
क्वविद्या क्वचवाविद्या क्वाहं क्वेदं मम क्व वा॥ क्वबंधः क्व
चवा मोक्षः स्वरूपस्य क्वरूपिता॥३॥ टीका·–
क्वविद्येति मयि क्वविद्याद्यहंकारधर्माः इदंबाह्यवस्तुजातं क्व मम
संबंधः क्वद्वितीयस्य संबंधिनोभावात् तथाबंधमोक्षावपिधर्मौ
क्व अत्रहेतुमाह· स्वरूपस्येति निर्विशेषस्वरूपस्य ममस्वरूपिताधर्म
वार्ता· क्वतथाच निर्धर्मकेमयित्वविद्यादयोधर्माः संतीतिफलितार्
थः॥३॥ भाषाटीका·–स्वरूपस्यमे एकआपहीआपपरमशां
तप्रकाशस्वरूपहैजोमें ताकों क्वविद्या· विद्याकहियेसोकह्या· अरु
क्वचवाविद्या अविद्याकहीयेसोकह्या· अरु क्वाहं यहमें यहमेंनाही
सोकह्याअरु क्व इदं यहसंसारकहीयेसोकह्या अरुममक्ववा· यह
मेरीवस्तुहैसोकह्या· अरु क्वबंधः बंधकहियेसोकह्या· अरु क्व
चवामोक्षः छूटिवोकहियेसोकह्या· अरुरूपता क्व· तास्वरूपकों क
छुरूपबनाइयेतोरूपईकह्या· इति· तातेंयोंजानिकरि तन्मयहो इत्य
र्थः॥३॥ दोहा· विद्याअरुअविद्याकह्या मैंयहममताओर॥

गाकहाबंधअरुकहांमोक्षहै स्वस्वरूपनिजकोर॥३॥ संस्कृ
त· श्लोकः· क्वप्रारब्धानिकर्माणिजीवन्मुक्तिरपिक्ववा
क्वतद्विदेहकैवल्यंनिर्विशेषस्यसर्वदा॥४॥ टीका·– क्व
प्रारब्धेति· प्रारब्धानिकर्माणितथाजीवन्मुक्तिस्तथाविदेहकैवल्यमे
तेक्व॥४॥ भाषाटीका·–सर्वदानिर्विज्ञेयस्यमे सदैवमनवुद्धि
इंद्रियादिकभावत्तंजाको कदाचित जानिनसके·ऐसोजो सर्वातीतस
त्यशुद्धचैतन्य मेरोस्वरूप ताकौप्रारब्धानिकर्माणिक्व· आरंभितहैजे·
नानाप्रकारकेकर्मतेकहा·अरुजीवन्मुक्तिरपिक्ववा· जीवतसंतेमुक्तिक
हियेसोकहा· अरुक्वतद्विदेह·देहकरिरहितकहियेसोकहा· अरु·
कैवल्यंक्व· मोक्षकहियेसोकहाइति·ताते ऐसोकेवलआपुहीआप
आत्मस्वरूपविचारतसंतेतन्मयहोइति॥४॥ दोहा· कहाजीवन
कहामुक्तिहै कहाकर्मअरुदेह॥सदाजुनिर्विज्ञेयकौं कहाकैवल्यवि
देह॥४॥ संस्कृत· श्लोकः· .क्वकर्त्ताक्वचवाभोक्तानि
ष्क्रियस्फुरणंक्ववा॥ क्वापरोक्षंफलंवाक्वनिःस्वभावस्य
मेसदा॥५॥ टीका·– क्वकर्त्तेति· सदानिःस्वभावस्यमे कर्तृत्व
भोक्तृत्वनिष्क्रियस्फुरणानिक्व· अतएवअपरोक्षंवृत्तिरूपंचज्ञानं
क्व·फलंविषयावच्छिन्नंयत्फलंचैतन्यंक्वेत्यर्थः॥५॥ भाषाटी·
का·– सदानिःस्वभावस्यमे· सदानिरंतर समस्त भावाभाव
शुभाशुभ इत्यादि सकल प्रकृतिहीतें रहितहौं जोमैं· ताकौं
क्वकर्ता कर्मनिको करनिहारो कहीये सो कहा· अरु क्वचवा
भोक्ता· कर्मन फलको भोगवनिहारो सोकहा· अरु निःक्रि
यंक्व· निः कर्मव्हैवो सो कहा·अरु स्फुरणंवाक्व· ज्ञानको
जो प्रकाश कहियतहै सो कहा· अरुक्व अपरोक्ष्यं· प्रत्य
क्षकहीये सोकहा· अरु फलंवाक्व· यह प्रत्यक्षजो संसा
र· ताके फलजेहैं सुख दुःखादिकनेके समूह ने कहा· इ

ति॰ तातें यों समस्त इंद्रिय मनोगोचर सामग्री करिकैं रहि
तहै ऐसीजो स्वयमेव ईश्वरकी भावनाहै तामैं मन राषि॰
तन्मयहो इत्यर्थः॥ ५॥ दोहा॰ कहाकर्त्ताभोक्ता
कहा कहास्फुरणनिस्क्रेय॥ निःस्वभावमहापुरुषकौं॰
कहांअपरोक्षफलेय॥ ५॥ संस्कृत॰ श्लोक॰
॥ क्वलोकाः क्वमुमुक्षुर्वा क्वयोगीज्ञानवान्क्ववा॰
॥ क्वबधः क्वचवामुक्तः स्वस्वरूपेहमद्वये॥ ६॥ ॥
टीका॰ - क्वलोकाइति॰ अहमित्येवरूपे द्वये अहमद्व
ये आत्माद्वैते स्वस्वरूपे सति लोकः कमुमुक्षुः कयोगी॰
ज्ञानवान् क्वबद्धः मुक्तश्चक्वेत्यर्थः॥ ६॥ भाषाटीका॰
ममस्वरूपे॰ मेरोहीहैजो निजस्वरूप स्वयंप्रकाश स्वयंम॰
भु ताविषें क्वलोकः लोकजे कहीयतहै नानाप्रकारके ने
कहा॰ अरु क्वमुमुक्षुर्वा॰ मोक्षकहा॰ अरु मोक्षहूकीं॰
वांछाकरनिहारो सो कहा॰ अरु क्वयोगी॰ अष्टांगयोग
करियुक्तजे है सोकहा॰ अरुज्ञानवान्क्ववा॰ प्रकृतिपु
रुष॰ पुरुषोत्तमजातें जानिये ऐसेजे ज्ञानीपुरुष ते कहा॰
अरु ज्ञान करिकैं संयुक्तपुरुष सो कहा॰ अरु क्वबंधः बां
ध्यो यहजो कहीयै सो कहा॰ अरु कौन काहेसें बांध्यो॰ अ
रु क्वचवामोक्षः छूटिवो नाम संसाररूप बंधनसें मुक्त॰
होकर परमपुरुषमैं ध्यान लगावनो सो कहा इति॰ तातें ऐसे
सर्वातीत स्वरूपकी भावनाराषि तन्मयहो इत्यर्थः॥ ६॥ ॥
दोहा॰ कहामुमुक्षुलौककहा॰ योगीज्ञानीतोष॥ मे॰
रेअद्वयरूपमैं कहांबंधकहांमोक्ष॥ ६॥ ह्रि संस्कृत॥
॥ श्लोक॰ क्वस्रष्टिः क्वचसंसारः क्वसाध्यंक्व
चसाधनम्॥ क्वसाधकः क्वसिद्धिर्वास्वस्वरूपेह

मद्वये ॥ ७॥ टीका· – क्वसृष्टिरिति अहमद्व
ये आत्माद्वैते स्वस्वरूपे सति सृष्टि संहारो साध्य साध
ने साधक सिद्धीवा क्व ॥ ७॥ भाषाटीका· – स्वस्व
रूपे स्थितेमयि आपने एक निजस्वरूपविषें स्थित होंजो
में ताविषैं क्वसृष्टिः उपजवो कहिये सो कहा· अरु क्वसा
ध्यः साधन करेतें जो वस्तु पाइये सो कहा· अरु क्वचसा·
धकः वस्तुकी वांछाकरि जो साधन करै सो कहा· अरु क्व
सिद्धिर्वा सिद्धीजो कहियत है सो कहा· इति · तातें ए सकु
लबरे मायासात्विक संपत्तिजान एक अद्वैत स्वयमेव ई·
श्वर आत्मस्वरूप की भावनाराषि तन्मयहो इत्यर्थः॥ ७
॥ दोहा· कहासाध्यसाधनकहा कहासृष्टिसंहा
र॥ स्थित सरूपनिज मोहिकों साधकसिद्धिकहार॥ ७
॥ संस्कृत श्लोकः क्वप्रमाताप्रमाणंवा
क्वप्रमेयंक्वचप्रमा ॥ क्वकिंचित्क्वनकिंचिद्वासर्व·
दाविमलस्यमे॥ ८॥ टीका· – क्वप्रमानेति सर्व
दाविमलस्योपाधिसंबंधमलशून्यस्य मे प्रमातृप्रमा·
णप्रमेयप्रमासंबंधः क्वमम किंचित्सामान्यतोन्यत्पदा·
र्थमात्रंक्वनकिंचिद्वाक्वपदार्थशब्दाभावोपि ममक्वसर्वथा
संबंधशून्यत्वादित्यर्थः॥ ८॥ भाषाटीकाः– स
र्वदाविमलस्यमे· यासंसारकी आदिमध्य अंत सदैव एक
रसनिर्मलजो है मेरो स्वरूप ताकों क्वप्रमाता· प्रमानको·
करनिहारो सो कहा· अरु प्रमाणंक्व· प्रमाण कहिये सो
कहा· अरुक्वप्रमेयं ताकोप्रमाण करीये सो कहा·अरु
क्वच प्रमाणं· यह वस्तु एतनी प्रमाण करते जाणि सो·
कहा· अरु क्वकिंचित्·यह कछु है सत्य वस्तु सो कहा॥

अरु क्वकिंचिद्वा॰ यहनाहीं कछुमिथ्याहै सो कहा॰ इति तातें एक स्वयमेव ईश्वर सर्वातीत निजस्वरूपकी भावना॰ राषि तन्मयहो इत्यर्थः ॥८॥ दोहा॰ परमाएीपर॰ माएकहा कहाप्रमापरमेय॥ सदाविमलनिजरूपकौं कहाकछुकिंचनकेय॥८॥ संस्कृत॰ श्लोक॰ ॥
क्वविक्षेपः क्वचैकाग्र्यं क्वनिबोधः क्वमूढता ॥ क्वहर्षः क्वविषादोवासर्वदानिष्क्रियस्यमे॥९॥ टीका॰
क्वविक्षेपइति सर्वदानिष्क्रियस्यमे विक्षेपादिकाःक्रियाः क्वे त्यर्थः ॥९॥ भाषाटीका॰ - सर्वदानिष्क्रियस्यमे॰ सदैव कर्मातीत जौहौंमें ताकौं क्वविक्षेपः चित्तकोजो भ्र॰ मिवो सोकहा॰ अरुक्वचैकाग्र्यं चित्तकी समाधिविषैं स्थिर तासोकहा॰ अरु क्वनिबोधः परमज्ञानजोहै सोकहा॰ अरु॰ क्वमूढता अज्ञानता जो कर्माकर्मको ज्ञान नही सो अज्ञान कहा॰ अरु क्वहर्षः सुखनाम आनंद कहिये सोकहा॰ अ रुक्वविषादः दुःख कहिये सोकहा॰ इत्यादिक समस्त जे भा वाभाव तिनिकर्मनिको कर्त्ता कोहैं॰ तातें में सदैव निःकर्म सर्वातीत तातें ऐसे आत्मस्वरूपकी भावनाराषि उनमेंही तन्मयहो इत्यर्थः ॥९॥ दोहा॰ विक्षेपरुएकाग्र्य कहा॰ कहामूढताहर्ष॥ सदाजुनिसक्रियमोहिकौं कहा॰ विषादअमर्ष॥९॥ संस्कृत॰ श्लोक॰ क्व
चैषव्यवहारोवाक्वचसापरमार्थता ॥ क्वसुखं क्वचवादुःखंनिर्विमर्षस्यमेसदा॥१०॥ टी
का॰ - क्वचैषइति सदानिर्विमर्षस्य विशेषज्ञानवृत्ति॰ शून्यस्य व्यवहार व्यवहारिक पदार्थज्ञानं क्वपरमार्थता॰ ज्ञानंच क्व सुख दुःखादिकमपि क्व ॥१०॥ भाषा॰

टीका· – मेंसर्वातीतजोहौं मेरोनिज स्वरूप ताकों एष· व्यवहारः क्व· यहजो· समस्त इंद्रिय व्यवहार सो कहा· अरु एषापरमार्थता क्व· यहजो समस्त व्यवहार छोडि करि परमार्थचिंतवन ज्ञानविचारकरि मनको स्थिरकरि वो सोकहा· अरु क्वसुखं सुख कहिये सो कहा· अरुक्व वादुःखं दुःखकहिये सोकहा· तोहूंकैसो· मेरो निजस्वरूप· सदानिर्विमर्षस्य· सदैव इच्छा अनिच्छादिकनिकरि रहित स्वयमेव· स्वयंप्रकाश· अक्षय परमानंदस्वरूपता तें योंजानिकरि तन्मयहौं इत्यर्थः ॥२०॥ दोहा·

कहायहैपरमार्थता कहायहैव्यवहार॥ मोसेजैनिर्विमर्षकों कहादुःखसुखसार॥२०॥ संस्कृत ॥

श्लोक· क्वमाया क्वचसंसारः क्वप्रीतिर्विरतिः क्ववा ॥ क्वजीवः क्वचतद्ब्रह्म सर्वदाविमलस्यमे ॥२१॥ टीका· – क्वमायेति सर्वदाविमलस्यउपाधिमलशून्यस्य ममभाया संसारो प्रीतिर्विरतिश्च वैराग्यं क्व जीव भावो ब्रह्मभावश्च क्व कार्योपाध्य भावेजीवत्वस्य वक्तुमशक्यत्वाद्व्याप्य वस्तुना मभावे ब्रह्मत्वस्य वक्तुमशक्यत्वादित्यर्थः॥२१॥ भाषाटीका· – में एकअद्वैत स्वरूपजोहौंमें ताकों मायाक्व· माया कहियतहैसोकहा· अरुसंसारः क्व· संसारकहिये सोकहा· अरु क्वप्रीतिः मनकोंजो अनेकवस्तुकी इच्छाहोकर उसीपरप्रीति लगतीहै सोप्रीति कहा· अरु विरतिः क्ववा· विरक्तिकहिये सोकहा· अरुक्वजीवः जीवकहिये सो कहा मायाकरि तिरस्कारहीप्राप्त कर्योहै प्रभावजाको ताकों जीव कहीये· तातेंजो ऐसोजीव कहावतुहै सोजीवक

हा· अरु क्व च तद्ब्रह्म· यह माया यह जीव यह सकलनें· परेजो कहीयतुहै कोऊ सो वह ब्रह्म· तातें यह जोहै कैसो मेरो स्वरूप सर्वदाविमलस्य· सदैवनिर्मल एकरस· सर्वातीत· स्वतः प्रकाशः स्वयंप्रभु एक अद्वैत विराजमानजो है तातें एसमस्त कहियेतें कहा· इति· तातें ऐसो आत्मस्वरूप जानिकरि सुखमय विराजु इत्यर्थः ॥ ११॥ ॥

दोहा· कहांमायासंसारकहां कहांविरतिकहांप्रीति॥ कहांजीवतब्रह्मकहा· सदाजुविमलमतीति॥ ११॥

संस्कृत ॥ – श्लोक· क्वप्रवृत्तिर्निवृत्तिर्वा· क्वमुक्तिः क्वचसाधनम् ॥ कूटस्थनिर्विभागस्य· स्वस्थस्यममसर्वदा ॥ १२॥ टीका· – प्रवृत्तिरिति कूटस्थनिष्क्रियस्यतथानिर्विभागस्य भेदरहितस्य सर्वदा स्वस्थस्य मम प्रवृत्तिश्च क्वमुक्तिबंधनेच क्वेत्यर्थः ॥ १२॥ भाषाटीका· – ममप्रवृत्तिः क्व· ऐसोजोएकई मेरो अद्वैत स्वरूप ताकौं प्रवृत्तिजो जन्म मरणादिक· व्यवहारनिविषें वारंवार सदैव वर्तिवो सो कहा· अरु निवृत्तिर्वाक्व· जन्ममरणादिक समस्त भावनितें छूटिवो सो कहा· अरु मुक्तिः क्व· मुक्तिकहियेसो कहा· अरु क्वचबंधनं बंधन कहिये सोकहा· तौहै कैसो मेरोस्वरूप· कूटस्थनिर्विभागस्य जहांलौं समस्त घटहैं तिनके बाहेरहू भीतरहू अंतरहू पूर्णएक अखंडील अद्वय स्वरूप है· अरु सर्वदा स्वस्थस्य· सदैव एकरस परमशांत परमानंदस्वरूप निश्चलविराजतुहै· इति· तातें ऐसे स्वरूपकी भावना आपनें मनमैंराषि तन्मयहो इत्यर्थः ॥ १२॥ दोहा· ॥

निर्विभागकूटस्थमम स्वस्थसर्वदाजोय॥ ताकौंप्रवृत्ति

निवृत्तिकहा मुक्तिबंधकहाहोय॥१२॥ संस्कृत· श्लोक· क्वोपदेशः क्ववा शास्त्रं क्वशिष्यः क्वचवा गुरुः॥ क्वचास्तिपुरुषार्थोवानिरुपाधेः शिवस्यमे॥१३॥ टीका· – क्वोपदेशइति · निरुपाधेः उपाधिशून्यस्यतथाशिवस्यनित्यानंदस्वरूपस्यउपदेश क्रिया क्व उपदेशकंशास्त्रंचक्वमायाक्वउपाध्यभावे तत्कृतोपदेशस्यचाभावात् अतएवशिष्यश्चगुरुश्च क्व स्वयं शिवरूपस्यचपुरुषार्थोवाक्वास्ति॥१३॥ भाषाटीका·– तौऐसे मेरे अद्वैत स्वरूपकों क्वोपदेशः ज्ञानादिकनिकोजो उपदेशसो कहा· अरु क्ववाशास्त्रं· शास्त्र कहिये सो कहा अरु क्वशिष्यः शिष्यकहिये सो कहा· अरु क्वचवागुरुः गुरुकहिये सोकहा· अरु क्वचास्ति · यहवातजोहै सो कहा · अरु क्वचवानास्ति यहू कछु नाहीं सर्वत्रजो है सोसवमिथ्याहै सोकहा· अरु क्वचैकं एकई कहिये सो कहा· अरु क्वचवाद्वयम्· दूजो कहिये सोकहा इति· तातें ऐसो इंद्रिय मन बुद्ध्यादिकनिकरिजोजान्यो नजाई· ता अक्षय अनंत· अपारपरमानंदस्वरूपकी भावनाराषि तन्मयहो इत्यर्थः ॥ १३ ॥ दोहा· शास्त्रकहाउपदेशकहा· कहाशिष्यगुरु होय॥ कहांअस्तिकहा नास्तिहै· कहांएक कहांदोय॥·१३॥ संस्कृत· जीवन्मुक्तिदशामुपसंहरति॥१४॥ श्लोक· क्वचास्ति क्वचवानास्ति क्वास्ति चैकं क्वच द्वयम्॥ बहुनात्रकिमुक्तेन किंचिन्नोत्तिष्ठतेमम॥१४॥ टीका· – क्वचास्तीति ममअस्तीति· नस्फुरति असत्वापेक्षत्वात्सत्वस्य तथानास्तीत्यपि नस्फुरति सत्वापेक्षत्वान्नास्तित्वस्य अतएवमिथः सापेक्षत्वान्

कत्वद्वित्वे अपिममनस्तः प्रत्येकंव्यक्तिभेदेननिषिद्धस्य कल्पकल्पकोटिभिरपिवक्तुमशक्यत्वात्सामानान्यन आह बहुनेति बहुनाउक्तेनकिंप्रयोजनंममचिदेकरूपस्यकिंचिदपिनोत्तिष्ठतेनप्रकाशनेइत्यर्थः ॥१४॥ ॥इतिश्रीमद्विश्वेश्वरविरचितायांअष्टावक्रटीकायांशिष्यप्रोक्तंजीवन्मुक्तिचतुर्दशकंनामविंशतिकंप्रकरणंसमाप्तम्॥२०॥ ॥

भाषाटीकाः - कविधिः ऐसोजो मेरो अद्वैत स्वरूप ताकौं विधिकहीये सो कहा अरु कनिषेधोवा निषेध कहिये सोकहा अरु कजन्म उपजिवो कहिये सोकहा अरु मरणं कवा विनसिवो कहिये सो कहा अरु देषरे पुत्र अब बहुनाउक्तेनकिं यहजोमें तोसों विस्तारसों कहते रहों तो कहा लौं कहों अरु कहां प्रयोजन कहे सो तूं वह जो किंचिन्नोत्तिष्ठतेमम जहांलों कछु आंषि नदेष्योजाइ कानतिसों नसन्यौजाइ स्रवसों कह्यौजाइ अरु मनसें वाबुद्धिसें विचारते आवै सोसमस्तकछुहैयेनाहीं तातें तूं यासमस्तकों मिथ्या भ्रमरूप जानि करि मन तें दूरि करु एक अद्वैतअक्षय अजन्मा अविनाशी अनंत अपार अनीह अखंडित अव्यय परमानंदप्रकाश स्वयंप्रभु सत्य स्वतःसिद्ध शुद्ध परमशांत चैतन्यघन तेजस्वरूप ईश्वर आत्मस्वरूपकी भावना राषि करि सोईहो इत्यर्थः॥१४॥ ॥

दोहा कहानिषेधरुविधिकहा जन्ममरणकहाहोय॥ बहुतकहनकरकहाहै कछुनतिष्ठनमोय॥१४॥ ॥ श्रीधरस्रवउपजतजबै मनकृतमिटतविकार॥ जैसेज्वरके अंतमें लागतअन्नसुप्यार॥१॥ ॥इतिश्रीअष्टावक्रवेदांतकीभाषाटीकाताकोजीवन्मुक्तिचतुर्दशकंना

मवीशमोउपदेशसंपूर्णभयो॥ २०॥ ॥ ॥

अथग्रंथानुक्रमणिकाप्रारंभः

श्लोकः बिनेयबुद्धिसौकर्यमुद्दिश्यग्रंथकृत्स्वयम्॥ श्लोकसंख्यांपुरस्कृत्य प्राहानुक्रमणींस्फुटम्॥ १॥ संस्कृत· श्लोकः दशषट्चोपदेशेस्युः श्लोकाश्चपंचविंशति॥ सत्यात्मानुभवोल्लासेउपदेशे· चतुर्दश॥ २॥ टीका· – दशषट्षोडशश्लोकाः गुरुणाउपदेशेस्युः संतिप्रथमप्रकरणे· पंचविंशतिश्लोकाःशिष्योक्तानुभवोल्लासेद्वितीयप्रकरणेस्युः चतुर्दशश्लोकाः पुनर्गुरुणाक्षेपमुद्भूयोपदेशाख्येतृतीयप्रकरणेस्युः॥ २॥· भाषाटीका· – अब एकईश जे उपदेश आगिलेसहितिनविषें जामें जेतने श्लोकहें ताहीताहीके तेतने तेतने कहतहें· अरुजोकोऊयह कहेकि उपदेशतो जानहु लीनो· यहतो साधुकोपरम लक्षणहें· परिश्लोकनिके बंवरासों अरुसंख्या करिके कहिवेसो कहा प्रयोजनहें· तो देषु· अष्टावक्रकी अभिप्राय यहहेकि देषुरे पुत्र· एतने एतनेश्लोकनिकरि ज्यौं ज्यौं क्रमक्रमतोहिमें उपदेश दीन्होहे त्यौंही· जानिकरि हृदयविषें राषिकरिकि भाई· एतनेश्लोकनिमें· एकऊ भूल्यो तोनाही· याभांति बारबार संभारत संते इनकेतत्वज्ञानकरि ईश्वरमयहोगे· एकतो याके निमित्त· अरु यौंजानियोंकि ज्यौं षोजकरेतें अरु विचारियेतें यों कहिकेकौं होइकि सहस्र श्लोकमें एतनेश्लोक हैंचारि परमतत्वकेहैं· और सकलजो कहियें सो एहीकहियें निमित्त· औरनिके विस्तारविनु एही तत्वज्ञानमय जानियेनाहीं· भाई अमुकेग्रंथ एतनेश्लोक तत्वज्ञानमय फलरूप हैवा

मे एतने वामें एतने याप्रकार केतेहू ग्रंथनिमें लेकरि कछुकश्लोक तत्वज्ञानमय संसारतें छोडावनिहारे संख्या करि स्थापीये· ज्यों अनेकरत्ननिके समूहतें कछूक रत्न अमोल दारिद्र्यनाशक· अरु सुखदायक ऐसे गनिकरि संख्या स्थापिये· त्यों अष्टावक्र मुनिजीनें उपदेशविषें जेतने श्लोक कहे· अरु सब जेतने भये· ते सकल· यों करि जनाएहें· कि देषरे पुत्र· अब एतनें उपदेशनिविषें कहे हैं जे एतने श्लोक तिनकेमध्य ओरकी कहा· जो कदाचित· एतने ही श्लोकके एक एक चरणको विचार करि उसमें तृप्त रहोइ तौहू सर्वथाकरि ईश्वरपरायणहोई· तातें इनके· कहेविषें तत्पर होऊतौ एकचरणके विचारतें निवृत्ति· होइतौ कैसें· तदाह· तृष्णामात्रात्मकोबंधः॥ यहजो पीछे कहिआयेहें कि देषरेपुत्र, आत्मातो अजन्मा· अविनाशी अनीह अखंडित आनंदमय चैतन्यशुद्ध, सत्य एक अद्वैतस्वरूप सदासर्वकाल एकरसको नबांधै· अरु बंधैसोकूंनसोवंधे· तातें बंधनजोहे सो केवल· एक तृष्णाईहे· सो कह्योंहे तृष्णाही बंधन हे· जो आपने स्वरूपहीको भूलिकरि दूजो मानि करि कोन वस्तु थोरी किंवा बहुतकी इच्छाकरी सोई बंधनहे· तातें यों जानिकरि एक मनकी इच्छा दूरिकरि सुखस्वरूप होय आनंदसमुद्रमें विराजहु· इत्यर्थः॥ त्योंही ओर यदा नाहं तदामोक्षः कि देषरे पुत्र यहजो कछु संसार सागरको दुःख कहावतुहे· सो कछु हेयेनाहीं· देषरे ईश्वरतो अद्वैतरूपहे· जिनिके दूजो भाव हेये नाहीं· एकईहे· तातें यह दूजो सो कहा· अरु जो कहे कि सत्यस्वरूप·

ईश्वरहै एकईहै· परि यह दूजो तूंहींन पत्र कर्‌यो है· उप-
जावहि·, प्रतिपालहि·, अरु संहार करहि तो देषु· वह ई-
श्वरतो स्वप्रकाश स्वयमेव· प्रभु शुद्धचैतन्यघन· अक्षय
अनित्य· अजन्मा अविनाशी· अनीह· वांछा अवांछादि
करि रहित स्वयमेव परमानंद स्वरूप उनही एती कहा·जो
यह ख्याल करहि ताते न कोऊ उनकों उपजायो· अरु नप्र
तिपालहि· नसंहारहि·यहतो यौंहै· ज्यौं स्वभावहीतें ए
कसमुद्रविषैं नाना प्रकारकी लहरि बुदबुदा उपजतें प्र-
वर्तें·अरु विनसैं तो उसकों समुद्र कछु करै नाहीं· अरु वै
ही कछु समुद्रसें दुजो नाहीं· सब एक समुद्रहै· त्यौं· ब्र-
ह्म समुद्रही जानु· परि एजो नाना प्रकारके जन्म मरण सु
ख दुःख भेदाभेद जानिये कि ईश्वरकों दूजो करि अरुआ
पुकों दूजोकरि संसार नानाप्रकारको सो जान्यो परे सोदे
षु· समस्त एकई अहंकार है· सो वृथाही आपुकों दूजो
करि मान्यौं· तौ नाना प्रकार कैसे जान्यौं·पर्‌यौ· अपार दुः
खनि कों पाषें लग्यौ· जब केवल एक अहंकार मिटिगयौ
तब संसार काहेकोहै· ईश्वरकौं ईश्वरु· तातें केवल एक
अहंकार दूरिकरि ईश्वर मयहो इत्यर्थः याही प्रकारजा
निवो इत्यादि· तातें कहतहैं· दशषट्चोपदेशेस्युः छह
अरु दश मिलके सोरह श्लोक परमज्ञानमय संसार के-
छोडावनिहारे अरु ईश्वर के मिलावनिहारे प्रथम उपदे
शविषें गुरु अष्टावक्र मुनि कहतहैं· अरु श्लोकाश्वप
चविंशति· पचैसजेश्लोकहैते· शिष्योक्त· आत्मानुभव
उल्लासे उपदेश देत संते आत्माके अनुभवतें भेदाभेद
रहित ह्वैकरि·तन्मयह्वैकरि शिष्य कहेहैं· अरु उपदेशे·

चतुर्दशः आक्षेपद्वारा जातें उपदेश लगे· प्रथमतो आ
त्माके स्वरूपकी अपार महिमा कहि सुनाई· तदनंतर·
याशिष्यकी बुद्धिसराही· उत्साहवधायो बहुरि माया·
की हीनता बताइकरि मनुष्यदेहकी दुर्लभता बताई·
करि चौराशीहू लक्षयोनिविषे विषयादिक नानाप्रकार
के भोग एसुनाइकरि कछु उनको तिरस्कारसो करि रोष
सो करिकर अब तोहीयों बूझिये·जो ऐसो व्हैकरि अरु·
ऐसोसमय पाइकरि एकनिमेषऊ भयानक रूप देहादि
क मायाविषें मनकों प्राप्त करहिं· तातें अब सब वास
नादिकनितें मनकों निवर्तकरि ईश्वरमय होइ रहो· इ-
त्यादिक वचन चौदह श्लोकनिमें कहि सुनाए इति॥ १॥

॥ दोहा· उपदेशनसंख्याकहूं पहलेषोडशमा
न॥ दूजोदुहापचीसको चवधातीजेजान॥ १॥ ॥

संस्कृत· श्लोक· षडुल्लासेलयेचैव उपदे-
शेचतुःचतुः॥ पंचकंस्यादनुभवे बंधमोक्षेचतु
ष्ककम्॥ २॥ टीका·-षट्श्लोकाः शिष्योक्तानु
भवोल्लासे चतुर्थप्रकरणेस्युः चत्वारः श्लोकाः गुरुप्रो·
क्तेलयाख्ये पंचमप्रकरणेस्युः पुनश्चत्वारः श्लोकाः गु
रुप्रोक्ते प्रतिवादिसिद्धलयनिषेधोपदेशाख्ये षष्ठेप्र-
करणेस्युः श्लोकानांपंचकं शिष्यप्रोक्तेऽनुभवाख्ये-
सप्तमेप्रकरणेस्यात्॥ २॥ भाषाटीका·-षडु
ल्लासे·शिष्य· छह श्लोकनिकरि ज्ञानीजे पुरुष भये उ·
नकों निर्भयता बताई·करि आनंद उत्साह बधायो कि·
जो ज्ञानीकी प्राप्ति भई· अरु कदाचित हीः यासंसार
समुद्रविषें केतेऊ कष्टरहेतोहू वह वह परमानंद ई·

श्वरहीविषें रहै· कदाचित कोऊ विकार स्पर्शौनाही ना-
तें समस्ततें मन कौं षेंचिकरि मैं कहतुहौंजो ज्ञान ता
ज्ञानविषें स्थिर अरु निर्भय आनंदमय ह्नो· इत्यादिक·
अरु लयस्यैव उपदेशे चतुः चतुः॥ गुरुः चारि चारिस्लो
कनिकरि लय· उपदेश्यो·कि यह प्रकार तूं ईश्वरस्वरूप
विषें लीनह्नो· इति· अरु पंचकंस्यादनुभवे· शिष्यःपं-
चस्लोकनिकरि दृष्टांतनिसों· एक अद्वैत आत्मा ई बता
यो· अरु द्वैतभाव जोहैसो सब दूरि कर्यो· बंधमोक्षेच
तुष्कः गुरुः चारिस्लोकनिकरि बंध अरु मोक्ष बतायो·
कि देषरे पुत्र, याकर्मनितें बंधह्नोय· अरु यातें जीवकों
मोक्षहोइ ईश्वरकों प्राप्तहोइ· इत्यर्थः॥ २॥ दोहा
॥ षट्दोहाउल्लासमें लयलयबेदविचार॥ पंचकहै
अनुभवविषें बंधमोक्षमेंच्यार॥ २॥ संस्कृत·॥
श्लोक· निर्वेदोपशमोज्ञान एवमेवाष्टकं भवे
त्॥ यथासुखसप्तकंच शांतोस्याद्द्दसमतिः॥
३॥ टीका· – निर्वेदोपशमइति· श्लोकाष्टकं गु
रुप्रोक्ते निर्वेदाख्येन वमे प्रकरणेस्यात्। गुरुप्रोक्तमु
पशमाष्टकं नामदशमं प्रकरणं गुरुप्रोक्तज्ञानाष्टकं नाम-
एकादश प्रकरणम्· शिष्यप्रोक्तमेवमेवाष्टकं नाम द्वाद
शमप्रकरणम्· शिष्यप्रोक्तंयथासुखसप्तकं नामत्रयो
दशमं प्रकरणम्· शिष्यप्रोक्तं शांतिंचतुष्कं नामचतुर्दश·
प्रकरणम्॥ ३॥ भाषाटीका· – निर्वेदोपशमज्ञा
नंएवमेवाष्टकंभवेत्· आठश्लोकनिकरि निर्वेदजो कर्मा-
कर्म सुखदुःखादिकनिविषें विरक्ति सो उपजाइ सदानि-
रंतर समस्ततें दुःख अपार बताइ करि बिरक्त कर्यो· अ

रु आठई श्लोकनिकरि उपशमता बताईकि, देषरे पुत्र, तूं केतेक जन्म नाहीं अर्थ. धर्म कामादिकनिनें तत्परहो. कछु संख्याहैं परिकदाचित एकनिमेषऊ या संसार समुद्रके द्वंद्वनितें ननिवर्त्तभयोः तातें अब पूरो देखि औरई बहुत करिमानु ऐसो औसर पावनो बहुत दुर्लभहैं ना तें अब समस्त मन वचन कर्मकृत जे व्यवहारहैं ते सब दूरिकरि शांतहो. अरु आठई श्लोकनिकरि ज्ञान बतायो. अरु सुख दुःखादिक आपनोई करे जनायो. और कोऊ क्यौंजानीये. अरु समस्त काल कर्म मायादिक एकई रके आधीनहैं ऐसे जनाये. अरु एकही वस्तु संसारके भ्रमाइवेकी कारणहै ऐसे बताई. अरु एकई छोड़े संसार सागरतें छूटिवो. ईश्वरकी प्राप्ति बताई. ऐसो सुलभज्ञान बतायो. अरु आठही श्लोकनिकरि ज्यौं आपः आचरण करि निर्भय भयो. न कहुंगयो. न आयो. अनायासही ईश्वरविषें प्राप्तभयो. द्वैतभावई दूरिभयो. तातें याभांतिही ईश्वरविषें प्राप्तहो. अरु यथासुखे सप्तकंच सातश्लोकनिकरि आपकों यथा सुखकी प्राप्ति बताई. यथासुख कहिये. जोईश्वरके पायेतें परम सुख रूप होयगयो. अरु समस्त बांछा अवांछादिकनितें सदा रहित. अरु स्थिरहै. अरु जबही आइ कर्मको प्रेर्यो कछु करिवेकी प्राप्त होइ तब सोसो करत संते इंद्रियनिसों करावत संते आपु नित्य आत्मा विश्राम सुख विषें विराजै. शांतौवेदसंज्ञितंस्यात्. चारि श्लोकनिकरि. शांति देषाई. क्रिया आचरणतें शांत तामोंको प्राप्त भई. याही भांति परम शांतिकों पाइकरि अक्षय सुखमें रहो इत्या

दि॥३॥ दोहा· अठअठनिर्वेदोपशमज्ञानएव· मेवाष्ट॥ सप्तयथाक्रममाहिहै वेदशांतिसेस्पष्ट॥३॥॥ संस्कृत श्लोक· तत्वोपदेशंकिंचिच्चदशज्ञानोपदेशके॥ तत्वस्वरूपेविंशच्चशमेचशतकंभवेत् ॥४॥ टीका· – तत्वोपदेशइति· विंशतिश्लोकाः गुरुप्रोक्ते तत्वोपदेशाख्ये पंचदशे प्रकरणेस्युः दशश्लोकाः गुरुप्रोक्तेविशेषोपदेशाख्ये षोडशे प्रकरणेस्युःविंशतिश्लोकाः गुरुप्रोक्तास्तत्वज्ञस्वरूपोपदेशाख्येसप्तदशे प्रकरणेस्युः गुरुप्रोक्तंसमशतक नामाष्टादशं प्रकरणम् ॥४॥ भाषाटीका· – तत्वोपदेशेविंशच्च· वीसश्लोकनिकरि तत्वज्ञानकरि एसमस्त द्वंद्व व्यवहार· देहके कही सुनाये सो देह अज्ञानतेंहै· आत्मा तो अद्वैत अकर्ता भोक्ता सदा आनंदमय् कहि सुनायो· अरु एकादशज्ञानोपदेशके· एकादश श्लोकनिकरि· ज्ञानविशेष पूर्वक उपदेश्यो· समस्त लोक आपुहीतें बंधन करि करि आपुही बंधाते देषायो· अरु एकई वस्तु गृहेतें सर्वत्र संसार कहि देषायो· अरु एकही वस्तुके त्यागतें· समस्त संसारको त्याग देषायो· अरुसंसारकेत्यागतें ईश्वरकी प्राप्तता कहिसुनाई· अरु तत्वस्वरूपे विंशति· वीस श्लोक करि तत्वज्ञान सहित जो पुरुष ताको सर्वत्र· तें निर्भयता· निर्विकारता निःस्वरूपता कहि सुनाई अरु थोरेही सुगम उपायतें ईश्वरकी प्राप्तता कहि सुनाई· अरु समेचशतकंभवेत्· शत श्लोकनि करि समस्त· संसारको समानदृष्टि आयेतें तन्मयस्वरूप करियुक्त ते शब्द कहि सुनाये· इत्यादि॥४॥ दोहा· ॥

वीसतत्वउपदेशमैं ज्ञानखंडषटच्यार॥ तत्वस्वरूपेवीशहै शांतीशातनिरधार॥ ४॥ संस्कृतः श्लोकः अष्टकंचात्मविश्रांतो जीवन्मुक्तोचतुर्दश॥ षट्संख्याक्रमविज्ञानेग्रंथैकात्म्यमतः परम्॥ ५॥ टीकाः - अष्टकंचेति शिष्यप्रोक्तमात्मविश्रांत्यष्टकं नाम एकोनविंशति प्रकरणं शिष्यप्रोक्तजीवन्मुक्तचतुर्दशकं नाम विंशतिमं प्रकरणं गुरुप्रोक्तं संख्याक्रम कथनं नामैकविंशतिमं प्रकरणम् अतः परं विंशत्यंकमितैःखंडैः एकं ग्रंथैकात्म्यं संख्यो ग्रंथखंडानां चैकात्म्यं समूहरूपतया एकात्मत्वमित्यर्थः ॥५॥ भाषाटीकाः - अष्टकंच आत्मविश्रांतो आठश्लोकनिकरि आपनोईश्वर विश्राम बतायो ज्यौं एक ओषध षायेतें काहूकोरोगगयो होई अरु ताही रोगसहित ओर कोऊ होई तौ वह पुरुष रोगीसो कहैकिरे भाई यहई बडोरोग मेरेकौं हुतो सो या ओषधतें दूरिभयो अब मैं निरोगी अरु सुखीभयो तौ एवचन प्रत्यक्ष सुनिकरि रोगीके निश्चय आवै अरु सब छोडिकरि ता ओषधविषैं सदासावधान होजाई त्यौं जा ओषधतें अष्टावक्रमुनि याभवसागर रूपी महारोगतें रहित भये सोई ओषध अरु निरोगभयेतें आपनो सुखसो संसार रोग करि रहित है जो शिष्य तासों निश्चयके निमित्त आचरिवेके निमित्त कहि सुनायो अरु जीवन्मुक्तो चतुर्दश चौदह श्लोकनिकरि देहनिविषै अज्ञानांधकार वसतसंते ज्योंतिरूप अद्वैत स्वरूपता बताई अरु एकई ईश्वर कहि सुनाये अरु यौं जनायोकि तातें तूं समस्तारविषैं मिथ्यात्व आनिए

क अद्वैत सत्यस्वरूप ईश्वरकी भावना आनि तन्मय हो षट्संख्याक्रमविज्ञाने· छह श्लोकनि करि क्रम क्रमश्लोकनिकी संख्या करियह कहिय आए· अरु अतःपरं ग्रंथैकात्म्यानुक्रम संख्या करिकै समस्त ग्रंथ कोटिकूं दीन्हो· तो केतनू टीकूं सो कहत हैं· ॥५॥ दोहा· आठआत्मविश्रांतिमै चवधैजीवन्मुक्ति॥ षट्संख्याक्रममैं कहे सबै ग्रंथकी युक्ति ॥५॥ संस्कृत श्लोक· ॥ विंशत्येकमितैः खंडैः श्लोकैरात्माग्निमध्यखैः॥ अवधूतानुभूतेस्तं श्लोकसंख्या क्रमा अमी॥ ६॥ ॥ इत्यष्टावक्रवेदांते एकविंशति प्रकरणं समाप्तम्॥ २१॥ टीका· - विंशत्येकमितैः इति अष्टावक्रसंख्याक्रमं विंशति एको कियद्भिः खंडैः विंशत्येकमितैः एकविंशति खंडैरित्यर्थः कियद्भिः श्लोकैः आत्माग्निमध्यखैः जीवात्मपरमात्मभेदभिन्नो आत्मा आद्यौ अग्नयस्त्रयः मध्ये खंचमध्ये शून्यं अंकानां वामतो गतिरिति- न्यायात्· अंते द्वौ· मध्ये खं आदौ त्रयम् ३०२ द्व्यधिकैः त्रिंशत् श्लोकैरित्यर्थः॥ श्लोकसंख्यामुपसंहरति· अवधूतानुभूतिरूपोऽयं ग्रंथस्तस्य संख्याक्रमो विद्यते इत्युत्तर संख्याक्रमाः ईदृशाः श्लोकाः अमी कथिता इत्यर्थः॥६॥ ॥ इति श्रीमद्विश्वेश्वर विरचितायां अष्टावक्रटीकायां संख्याक्रमादिव्याख्यानं नामैकविंशतिकं प्रकरणं समाप्तम् ॥२१॥ ॥ श्रीकृष्णो जयति॥ ॥ भाषाटीका· - विंशत्येकमितैः खंडैः॥ एककरि अधिकजे बीस खंड कहाये कईस उपदेश तिनकेजे सकल श्लोक तिनकरि अमीश्लोकाः संख्याक्रमा सबग्रंथके श्लोक

निकी यहसंख्या भई कौनसोई कहीयनहैं आत्माग्नि मध्यखैः ॥ आत्माजो ब्रह्म तिनकोजो स्वरूप सो कैसो है तो शून्यरूप· तातें एकतो प्रथमही शून्य अरु अग्नितीनि तो तीनिको अंक अरु खं कहिये आकाश ताको शून्य रूप तातें दुहूके मध्य विषें शून्य तो है शून्य अरु तीनको अंक· तीनसेंपे श्लोक हैं ३०२ संख्याता यहः संख्याका हेकों करीतोहैं·कैसे· श्लोक अवधूतानुभूतः अवधूत· कहिये जो समस्त देहके गुणनिको जीतिकरि निर्भय· भयो आत्मानंदविषें मग्नहै· तातें जा पात्रविषें जोवस्तु होइ तापात्रको मुख उघारेतें ताहीवस्तुकी वासना आवे त्यों एसमस्तजे श्लोक तेईश्वरकी वासनाहे तातें संसार के छोडावनिहारे अरु ईश्वरके मिलावनिहारे हैं इनविषैंजो एक उपदेशकी वा एकश्लोककी अरु अधाश्लोक की अथवा एकचरणहूके मनेविषें तत्पर भयेतें संसार· ते छूटिकरि ईश्वरविषैं प्राप्ति हूजियै· तातें वारंवार संभारिवेके निमित्त संख्या करी इत्यादि ॥ ६॥ दोहा· ॥

एकवीससब खंडहै श्लोकतीनसोदोय ॥ अवधूतहिअनुभूतकी ऐसी संख्याहोय ॥ ६॥ ॥ श्लोक ॥ ॥

अस्मदाद्यतिदीनानां दुःखहत्यै दयालुना ॥ संतदासेनयत्प्रोक्तं तस्मात्किंचिदवस्थितम् ॥ १॥ तन्मयात्मसुबुध्यर्थं चतुर्दासेन निर्मितम् ॥ अष्टावक्रोक्तपद्यानां भाषयार्थनिरूपणम् ॥ २॥ ॥

टीका· - अस्मदाद्यतिदीनानांदुःखहत्यै· मोहिआदिदेकरि अतीव दुःखीतजे समस्त प्राणी तिनकोंदेषिकरि सोदुःख दूरि करवेकों दयालुना· परम दयाकरियु

क्त शरणविषे आपनीही शक्तिकरि आनि दीननिको भक्ति
दान देकरि परम दारिद्र्यरूपजो संसार ताको दूरिकरि परम
सुखनिधान ईश्वरविषें प्राप्त करिवेकों जिनिको जन्महै· सं
तदासेन· ऐसेजेहैं सद्गुरुरूप श्रीसंतदासजी तिनकरिअ
ष्टावक्रोक्तपद्यानां भाषया अर्थनिरूपणं· यत्प्रोक्तं कथ्यो·
जोया अष्टावक्रभाषित श्लोकनिको अर्थ तस्मात्किंचिदव
स्थितं· तार्अर्थतें थोरी बुद्धितें कछुक नाममात्र मेरे हृदयवि
षें रह्यो· तातें भयमानिकरिकि भाई यहऊ मति भूलिजाई·
यह विचारिकरि तन्मयात्मसुबुद्ध्यर्थं· कछूक रह्योजोहृद
यविषे अर्थ सोमें आपने समुझिवेके अर्थ भाषयानिर्मितं
आपनी भाषाकरि लिखिलयोतो होंकैसोमें· चतुर्दासेनम
या ब्रह्मको जोनिर्णय ताविषें परम चतुरजे श्रीसंतदास ता
हि आदिदेकरि परम भागवत तिनिका दासनिको दास हौं
इति· अरुत्यौंही चतुर्दास यानामकरि युक्तजोहों सेवक
को सेवक सो सेवाके टहलके निमित्त वाको सुखी दुःखी
पूंछिवे निमित्त नामादि बोलायो चाहिये· तातें यहनाम है
इति ॥ २ ॥ श्लोकः अहं तदनुकंप्योस्मि कृ
षणप्रियदयालुभिः ॥ परंमेधृष्टतानैव माननीया
महात्मभिः ॥ ३ ॥ टीका· – तत् तातें महात्मभिः
अहं अनुकंपोस्मि सकल महापुरुषनि करि मोंकों दयाक
रणीयहें· काहेतें· कृषणप्रिय दयालुभिः समस्त उत्पत्ति प्र·
तिपाल संहारादिक प्रवृत्ति निवृत्ति जिनकी शक्तिहीतें व
र्ततहें आप सकलतें न्यारो ऐसेजे श्रीनारायण एकतेईहैं·
प्रियवल्लभ जिनके अरु आपजिन ईश्वरके परम प्रियहैं ता
तें ईश्वरहीके चिन्हनि करि युक्त भयेहैं· तातें परम दयाकरि

युक्त जेहैं गुणाइ देषतहै औगुण देषतेईनाही· तातें मोकों दयाकरिबे योग्यहै· ऐसेजे महा पुरुष तातें मैंधृष्टतानेव माननीया मेरीढिठाई नाहीं मानिवेकी· यह कछु अष्टाव क्रको व्याख्यान कस्यौहै· परंनात्पर्थ इत्यादि ॥३॥ ॥

श्लोकः येनमेमोहनाशार्थनानाशास्त्रार्थदर्शनैः॥ दीपितोज्ञानमार्तंडः संतदासंनमामितम्॥ ४॥ टीकाः- येनजिनिकरि मेंमोहनाशार्थ· मेरोजोमोहरूप परम अज्ञान ता अज्ञानकों दूरिकरिवेके· अर्थ तोक्यौं केवल मेरोही अज्ञान दूरिकरिवेके अर्थ योंनाही· मे मोहनाशार्थ मम यहमें यहमेरीवस्तु यहमेरीबस्तु नाहीं· यहसंसारमैं ईश्वर अतिदूर परम दुर्लभस्यौ करिपाइये· इत्यादिक नानाप्रकारनिकरिकै वर्द्धमान भयो अज्ञानरूपी महा अंधकार सो अत्यंत अपार दुःख समुद्रविषें बोरनिहारो· ताकों देषिकरि अत्यंत दयाकरिकै समस्तजीवनके उद्धार करिवेकेअर्थ अरु· अज्ञान रूपी जो महाअंधकार ताकौं दूरिकरिवेके अर्थ नानाशास्त्रार्थदर्शनैः॥ नानाप्रकारकेजे ब्रह्मा रुद्र मनुभृगु नारदमरिच्यादिकजे देवमुनि तिनकेजे नानाप्रकारके मत· तिनसहित नानाप्रकारकेजे शास्त्रनिंविषैंजे नानाप्रकार के अर्थ तेही पुष्पिता वाणीमहाभ्रमरूप तिनि कों देषाइकरि दूजोअर्थ चारिजुग कृत त्रेताद्वापार अरु कलिइन जुगनिविषें होते आयेजे नानाप्रकारके नामनिसहित परम साधु तिनकरि परम दयालुव्हैकरि नानाप्रकारके अज्ञानी जीवनिके उद्धरिवेके अर्थ कहेजे नानाप्रकारके नामनिकरि सहित अनेक शास्त्र· तिनिविषें जोएक केवल अर्थ

को ईश्वरको देषाइवो और समस्त अनर्थ जानि दूरिक-
रिवो ताकरि ज्ञान मार्तंडदीपिनः॥ ज्ञानई भयोजो महा-
प्रचंड प्रकाशस्वरूप सूर्यसो उदित कर्यो अरु अज्ञान-
रूप अंधकार कों दूरिकरि परम प्रकाश कर्यो· तंसंत-
दासं॥ ऐसेजे संतदासजी परमानंदस्वरूप तिन्हकों
अहंनमामि· वारंवार निरंतर मन वचन अरु कर्म क
रि नमस्कार करतहौं· तोसंतदासं· यानामको अर्थ स-
त्यस्वरूप अरु परमदयालु सत्चित्स्वरूपीजे ईश्वर
तिनके दीवेके अर्थ मिलाइवेके अर्थ हैं· ऐसे अवतार·
जिनकों इत्यादि· दूजोअर्थ संतदासं· संत कहिये पर
मसाधु भयेहैदास सेवक जिनके उनदासन कों जोइ-
जोइ दासभावविषें तत्पर भयो सोइसो ताही क्षणते·
परम साधुभयो अरु याही प्रकार जोई दासत्वविषें अ·
रुशरणविषें आइ प्राप्त होई सो सर्वत्र साधुरूप होई·
अरु संसार रूपी महासमुद्रतें छूटे अरु ईश्वर वि-
षैं प्राप्तहोइ इत्यादि॥४॥ ॥चौपाई॥ ॥
अष्टावक्रग्रंथकी भाषा॥ चतुर्दासकीन्हो प्रका
शा॥ याकेसमुझे निर्भयहोई॥ ताकेसंशयरहै
नकोई॥१॥ दोहा ॥ अष्टावक्रको अर्थ
जो ताकोवारनपार॥ ममपति अल्पसोकत्यो
कछुसंतोकरहुविचार॥१॥ अष्टावक्रसुग्रंथ
पै चतुदासकृतटीका॥ श्रीधरकृतसबदोहरा
जोकोइपढैसुनीका॥२॥ श्लोकशीसदोहाहृ·
दय टीकाचरणसरोज॥ श्रीधरअष्टावक्रको
पद्मनाभज्यौंखोज॥३॥ नगरीश्रीफलवर्द्धिनी

सकलसदाशुभकाम॥ ग्रंथसुधायोसुकृतिज
न हिंमतरामश्रीराम॥४॥ ॥ इतिश्री
अष्टावक्रकीसुगमप्रकाशचतुर्दासकृतभाषाटी
कायां संख्याक्रमव्याख्यानं नाम एकविंशोपदे
शः समाप्तः॥२१॥ ॥ श्रीरामचंद्रोजयति
॥ ७ ॥ ॥ श्रीराधाकृष्णोजयति॥ ॥ ७ ॥

इतिश्री अष्टावक्रवेदांतस





टीक समाप्त



श्रीः

इति

अष्टावक्र

वेदांत

ग्रंथः

समाप्तः